ऊदोजी अड़ींग की वाणी

(प्रहलाद चिरत, विसनु चिरत, सनेह लीला, ग्रभ चेतावणी, कका सैंतीसी)

(हिन्दी टीका सहित)

सम्पादक एवं टीकाकार

आचार्य कृष्णानन्द

प्रकाशक

जाम्भाणी साहित्य अकादमी

ऊदोजी अड़ींग की वाणी

सम्पादक एवं टीकाकार	-	आचार्य कृष्णानन्द विश्नोई धर्मशाला, मायाकुण्ड ऋषिकेश, उत्तराखण्ड मो. 9897390866
प्रथम संस्करण	-	2019
प्रकाशक	-	जाम्भाणी साहित्य अकादमी सेक्टर - 1, ई.-134, जय नारायण व्यास कॉलोनी बीकानेर, राजस्थान
	-	जाम्भाणी साहित्य अकादमी, बीकानेर
ISBN	-	978-81-925-375-1-1
मूल्य	-	100/- मात्र (एक सौ रुपये)
मुद्रक	-	तिलोक प्रिंटिंग प्रेस बीकानेर मो. 9314962474/75

अनुक्रमणिका

क्र.मं.	रचना	पृष्ठे संख्या
1.	प्रहलाद चिरत	01-79 तक
2.	विसनु चिरत	80 -101 तक
3.	सनेह लीला	102 -126 तक
4.	ग्रभ चेतावणी	127 -152 तक
5.	कुंडलियां कका सैतीसी	153 -170 तक
6.	सवईया प्रभु वंदना	171 -186 तक

भूमिका

''गीता नाद कविता नाऊ, रंग फटाररस टांरू'' सबद–33''

भगवान कृष्ण स्वयं कवि थे उनके मुख से निसृत वाणी नाद है वह कविता नहीं है। सर्वोच्चय कवि तो वही होता है जैसे श्रीकृष्ण, गोरख, नानक, कबीर, जाम्मोजी आदि। जिनके मुख से उच्चारित वाणी वेद है अन्य किसी कवि के द्वारा पूर्व में कही नहीं गयी है, अपूर्व है। **'ऋषय: मन्त्र द्रष्टार:'** ऋषियों ने देखा है फिर कहा है किसी की कही हुई बात को पुन: नहीं दोहराया है यही अपूर्वता है। ये सभी ऋषि पुरुष अपूर्व थे जिन्होंने प्रथम बार ज्ञान को अपनी भाषा में जन साधारण को दिया। इनका दिया हुआ दिव्य ज्ञान देश, काल से परे है। उन्होंने कुछ भी अपनी दिव्य दृष्टि से देखा है वही कहा है। इसलिए उनका कहा हुआ सत्य सनातन शाश्वत है

''म्हे सरहै न बैठा सीख न पूछी, निरत सुरत सब जाणी–सबद – 6''

इस धरती पर अनेकानेक कवि हुए है। प्राचीन समय में लेखन करने की विधा कविता पद्य में ही थी। उस समय गद्य का विकास न के बराबर ही था। क्योंकि पद्य पढ़ने में, सीखने में, स्मरण रखने मे सुविधा जनक होता है। कवि जब अपने भाव प्रकट करता है तो उसमें छन्द, रस, सौन्दर्य, भाव निहित होता है। किसी भी प्राचीन आख्यान को छन्दोबद्ध कर देता है और पाठक की अभिरुचि में वृद्धि कर देता है। इस परंपरा के प्रथम कवि बाल्मिकी सर्वमान्य हैं, जिन्हें आदि कवि की उपाधि प्राप्त है। उस समय की भाषा संस्कृत ही थी। राम कथा संस्कृत भाषा में लिखी गयी है संस्कृत के कवियों में कालिदास, भवभूति, माघ, व्यास, वेदव्यास, कृष्ण द्वैपायन आदि प्रसिद्ध है।

संस्कृत जन साधारण की भाषा नहीं रही केवल शास्त्रीय पंडितों की भाषा तक सीमित हो गयी। फिर भी पथ प्रदर्शन से जन जीवन को चलाने के लिये

मरुभाषा, अवधी, गुजराती, पंजाबी आदि भाषाओं का सहारा लेकर कवियों ने भक्तिकाल, रीतिकाल युग का निर्माण किया।

भक्ति की ओर जनमानस को प्रेरित करने के लिये जाम्भोजी कबीर, गोरख, नानक, सूर, तुलसी आदि ने लोंगो को जागृत किया कुछ रीति कालीन यानि शृंगारिक कवि भी हुए जो काव्य को शृंगार की तरफ मोड़ा, प्राचीन रीति यानि संस्कृत के कवियों का अनुसरण किया लोक भाषा में पद्य गाये।

इन्हीं विशाल आदि मध्य परंपरा की अभिवृद्धि करने हेतु जाम्भाणी–संत कवियों ने उन्हीं ज्ञान की अभिवृद्धि करने के लिये मरुभाषा में साहित्य की अभिवृद्धि की है। जाम्भोजी की उपस्थिति में जिन संत भक्त कवियों ने गुणगान किया है। और जाम्भोजी को अपना इष्टदेव गुरु स्वीकार किया है और अपनी वाणी को पवित्र करने के लिये हृदय कमल से शब्द प्रस्फुटित हुए है। उनकी संख्या लगभग 50 से अधिक ही है। हजूरी कवियों में तेजो जी चारण, ऊदेजी नैण, आलम जी, मेहोजी, डेल्हजी, पदम भक्त इत्यादि नाम उल्लेखनीय है

जाम्भोजी के अन्तर्धान होने के पश्चात् लगभग 80 कवि हुए हैं उनमें वील्होजी, केशोजी, सुरजन जी, ये गंगा, यमुना, सरस्वती त्रिवेणी है इन्हीं त्रिवेणी ने जाम्भाणी साहित्य को सर्वोच्चता पर पहुंचाया है सभी प्रकार की काव्य की विधाओं का सदुपयोग किया है। आख्यान कथा, जाम्भोजी का जीवन चरित, नीति, उपदेश, ज्ञान, ध्यान, साधना के बारे में विस्तार से कविता के रूप में लिखा है जाम्भोजी की सबदवाणी उनके शिष्य सदा साथ रहने वाले नाथोजी के कण्ठस्थ थी, नाथोजी ने अपने शिष्य वील्होजी को सिखाई और वील्होजी ने अपने शिष्य केशोजी, सुरजन जी दसुंधीदास आदि से लिखवायी। यह जो आज जाम्भोजी की वाणी का सस्वर पाठ हवन या अन्य अवसर पर होता है यह वाणी अब भी उपलब्ध है यह वील्होजी की देन है वील्होजी स्वयं भी रचनाकार कवि थे तथा अपने शिष्यों को भी प्रेरित करके साहित्य लेखन करवाया। इस समय सम्पूर्ण हस्त लिखित जाम्भाणी साहित्य विपुल मात्रा में है। इतना बड़ा साहित्य भण्डार अन्यत्र दुर्लभ है।

लगभग तीन सौ वर्षों तक इन संत महापुरुषों द्वारा हस्तलिखित साहित्य अग्रसर होता रहा। वि. सं. 1796 में प्रथम बार इन लुप्त होती हुंई साहित्य धरोहर को परमानन्द जी वणियाल ने संग्रह करके पुन: जीवन दान दिया। परमानंद जी 1796 से 1838 तक बराबर लेखन कार्य करते रहे उन्होंने पांच पोथे लिखे थे। आज हमारे पास जाम्भाणी साहित्य को जीवित रखने का श्रेय परमानंद को ही

जाता है। इसी परंपरा में अन्य भी लेखक ने जाम्भाणी साहित्य को लिपि बद्ध करते रहे है क्योकि उस समय प्रेस नहीं होती थी। हाथ से ही लिखा जाता था। कोई तो केवल पढ़ना ही जानता था तो वह किसी लेखक से लिखाया करता था। ऐसी दशा में एक ही विषय की अनेक प्रतियां उपलब्ध है लगभग बीस हजार पृष्ठ लिखे हुए जीर्ण अवस्था में उपलब्ध है कुछ प्रतियां गायब भी है। इसी कवि परंपरा में रूड़कली जोधपुर में जन्में ऊदो जी अड़ीग हुए है उन्होंने गृहस्थ जीवन का परित्याग करके साधु जीवन अपनाया था। वे अपने खेत में कुँआ से सिंचाई करते थे और उन्हें उसी सिंचाई के दौरान बैराग्य हुआ था। उन्होंने कहा भी है–

भगवान को नहीं भजा कहां तेरी चाकरी–सेवा में चूक हो गयी है।

इनका जीवन काल संवत् 1818 से 1933 तक अनुमानित है इन्होंने साधु जीवन यापन करते हुए पांच रचनाएँ लिखी है।

1. **प्रहलाद चरित** :– इनसे पूर्व भी वील्होजी के शिष्य केशोजी ने प्रहलाद चरित लिखा था साहबराम जी ने जम्भसार में भी प्रहलाद चरित लिखा है किन्तु जितनी प्रसिद्धि ऊदो जी के प्रहलाद चरित्र को मिली उतनी दूसरो को नहीं मिल पायी। वैसे तो मैंने काफी वर्ष पूर्व केशोजी कृत प्रहलाद चरित को हिन्दी टीका सहित प्रकाशित करवाया था। केशोजी कृत प्रहलाद चरित बहुत गंभीर काव्य रचना है। केशोजी को उपमा के क्षेत्र मे कालिदास जी की बराबरी की है। कहा भी है उपमा कालिदास की प्रसिद्ध है उसी प्रकार केशोजी भी किसी से कम नहीं है।

साहबराम जी द्वारा रचित प्रहलाद चरित्र जम्भसार में प्रकाशित हो चुका है किन्तु इसकी मांग बराबर बनी हुई है होली के पाहल के अवसर पर ऊदोजी द्वारा रचित यह प्रहलाद चरित पढ़ा जाता है इसमें क्या विशेषता है यह मैं पाठको पर छोड़ देता हूँ।

2. **विसनु चरित** – विष्णु सहस्र नाम मे भगवान विष्णु की स्तुति हजारों नामो से की गयी है जो लोक प्रसिद्ध है उसी परंपरा का निर्वहन करते हुए ऊदोजी ने मरुभाषा में विस्नु चरित नाम से एक प्रकरण लिखा है जिसमें विष्णु की महिमा और अवतारों का वर्णन है।

गुरु जाम्भोजी ने अनेको बार सबदों में विष्णु नाम से स्मरण करना बतलाया है विष्णु का अर्थ भी सर्वव्यापकता को बताने

वाला है मूल धातु **''विष्लृ''** व्यापके सर्वत्र विद्यमानता को बताता है।

त्रिदेवों में प्रधान विष्णु है। सृष्टि के पालन पोषण कर्ता भगवान विष्णु है

उनकी महिमा का गुणगान ऊदोजी ने अपनी भाषा में किया है इसको पाठकों के अवलोकनार्थ प्रकाशित करवाने का प्रयास है

3. **सनेह लीला** – ऊदोजी मूलत कृष्णभक्त सनेही प्रेमी थे। ''लूर'' गीत–गाते हुए महिलाऐं नृत्य कर रही थी ऊदोजी ने देखा कि ये महिलाऐं तो अश्लील गीत गा रही है। ऊदोजी साधु जीवन में परिभ्रमण करते हुए अपनी जन्म भूमि रूडकली गांव में होली के अवसर पर आये थे वहां की महिलाऐं तो अश्लील गीत गा रही थी इससे बच्चों के संस्कार अच्छे नहीं हो सकते ऊदोजी ने ''लूर'' गीत गाकर सुनाया और कहा जिस प्रकार से गोपियां भगवान् के प्रेम में लूर गाया करती थी वही आप भी गाइये इससे भगवान के प्रति प्रेमभाव बढ़ेगा।

इस प्रकार से लूर की ही तरह गोपियों के प्रेम भरी करुणा पुकार को ऊदोजी ने सनेहलीला में गाया है। लूर का ही विस्तार रूप सनेह लीला में है प्रेम हृदय की भावना है वह यदि कृष्ण भगवान के प्रति हो जाये तो सभी कुछ प्राप्त हो जाता है उसमें मानो कि योग, यज्ञ, आचार, स्मरण आदि सभी कुछ कर लिये है यही भाव ऊदोजी ने अपने मुख से वर्णन किया है

4. **ग्रभ चेतावणी** :– अपने पुण्य कर्म के प्रताप से मानव तन प्राप्त होता है और संसार में रहकर जीवन यापन करता है सुख दु:ख भोगता है। जीवन में उतार चढ़ाव सुख, दु:ख, हानि, लाभ द्वन्द चलते ही रहते है किन्तु इस अमुल्य मानव जीवन को प्राप्त करके व्यर्थ में नहीं खोना चाहिये। गर्भ में बच्चा आता है नौ दस मास में बालक जन्म लेता है। फिर बाल्यावस्था आती है उसे खेल में माँ बाप के प्यार लाड में ही बिता देता है उसके बाद युवा अवस्था आती है **''तांती बेला तायो''** वह तो ताती गर्म बेला है उसमे तो तपता है। अहंकारी होकर जीवन व्यर्थ में खो देता है आगे वृद्धावस्था यानि **''ठांडी बेला ठारूं''** अर्थात बुढ़ापा आ जात है उसमें ठण्डा हो जाता है **''बिम्ब बैला विष्णु न जंप्यो''** बाल्यावस्था से ही विष्णु का जप ध्यान नहीं किया तो तेरी **'' अहल गई जमवारू''** यह जीवन व्यर्थ में चला जायेगा।

दिव्य मानव जीवन था वह पार उतरने का अच्छा घाट था किन्तु अवसर चूक गया। इसके बाद तो चौरासी लाख जीवयोनियों में भटक जायेगा आगे अन्धकारमय जीवन होगा। चौरासी लाख जीव योनियों में बहुत कष्ट उठाना होगा इसका वर्णन विस्तार से ग्रभ चिंतावणी मे ऊदोजी ने किया है भाषा सरल, रसमयी तथा अलंकार युक्त है जो पठनीय संग्रहणीय है

5. **कका सैंतीसी**– प्राचीन कवियों की परंपरा रही है कि प्रत्येक अक्षर पर एक छन्द लिखा जाये। वील्होजी ने भी कका सैतीसी लिखी है तथा साहबराम जी ने भी इनका अनुकरण किया है। ऊदोजी की महत्वपूर्ण रचना में यह भी एक संग्रहणीय थी। 'क' से प्रारम्भ करके 'ज्ञ' तक सैतीस अक्षरो पर एक–एक कुण्डलियां छन्द लिखे है। इस प्रकार से पठनीय है। अन्त में ऊदोजी ने परमात्मा से आत्म निवेदन के रूप में छन्द, दोहे, कविता आदि की रचना की है

उनको भी साथ में संलग्न कर दिया गया है

प्रहलाद चरित के छन्द 348, विस्नु चरित के छन्द 111, सनेहलीला के छन्द 123, ग्रभ चेतावणी के छन्द– 145, कका सैतीसी छन्द–37 तथा प्रभुवन्दना के छन्द–40 कुल छन्दों की संख्या 814 है

इन ऊदोजी की सम्पूर्ण रचनाओं को एक साथ प्रकाशित करने का यह मेरा प्रयास है यह मरुभाषा मे कविता के रूप में लिखी हुई है इसको आधुनिक पढ़े लिखों के लिये समझना कठिन हो रहा है इस लिए इसको हिन्दी भाषा में अर्थ सहित संजोया गया है समझने में सरलता के लिये यह प्रयास है। वैसे तेा जो आनन्द की अनुभूति मूल भाषा में गायन करने मे आती है वह हिन्दी अनुवाद में कहां है।

यह अप्रकाशित पुस्तक शीघ्र ही आगामी समाज के मेले तक जन जन तक पहुंचाने का मेरा प्रयास रहेगा। इसका नाम '' प्रहलाद चिरत होगा। धन्यवाद!

आचार्य कृष्णानन्द
अध्यक्ष–जाम्भाणी साहित्य अकादमी
विश्नोई धर्मशाला, मायाकुण्ड,
ऋषिकेश– 9897390866

प्रहलाद चिरत

''दुहा''

प्रथम बंदू गुर देव कूं, दुतीयै श्रब साध।

त्रीतीये बन्दू महा विस्नु, कहूं चिरत प्रहलाद।। १।।

ऊदोजी सर्वप्रथम गुरुदेव जाम्भोजी की वन्दना, नमन करते है द्वितीय वन्दना–नमन सभी साधुजनो को करते है तीसरी वन्दना महाविष्णु को करते है और प्रहलाद चरित्र का बखान करते है

''चौपई''

प्रहलाद चिरत अब वरण सुनाऊ, हरि गुण साधा अज्ञा पाऊं।

भगवंत भगत भेद नहीं कोई, हरि जिंत जहां हर कीरत होई।।२।।

ऊदोजी कहते है कि अब मैं प्रहलाद चरित का वर्णन करके सुनाता हूँ। हरि, विष्णु के गुणों का वर्णन करता हूँ साधु सज्जनों विद्वानों कवियों की आज्ञा लेकर यह प्रहलाद चरित सुनाता हूँ भगवान् तथा भगवान के भक्तों में किसी प्रकार का भेद नहीं है हरि भी वहीं रहते है जहां हरि का कीर्तन होता है।

भगवत भगत एक ही अंगा, जैसे जल के मांह तरंगा।

हरिजन है हरि ही के अंसा, भगति मुगति सुख विलसै हंसा।।३।।

भगवान् एवं भगवान् के भक्त एक ही है जिस प्रकार से जल एवं जल में उठने वाली तरंगे इन दोनो को अलग नहीं किया जा सकता भगवान् जल रूप

है और उसमे उठने वाली तरंगे भक्त रूप है हरि के प्यारे भक्त हरि के ही अंश रूप है। जिस प्रकार से स्वयं विष्णु सदा ही विमुक्त, निरंजन, निराकार आनन्दरूप है उसी प्रकार से भगवान के भक्त भी सदा जीवन मुक्त आनंद स्वरूप से आनन्दित रहते है।

संत चिरत निगम निस गावैं, मैं अलप बुध काहा वरन सुनावै।

कछु चिरत मैं कहूं बखानी, मन बुद्धि चित विमल करू बानी।।४।।

संतो के चरित्र को वेद नित्यप्रति गायन करते है। मैं अल्प बुद्धि हूँ भगवान की महिमा को कैसे सुना सकता हूँ मैं मन बुद्धि, चित, वाणी को हरिगुण गाकर पवित्र करता हूँ।

हरि को प्रेम पियारो साधु, राकस वंस भयौ पहलाद्।

जांकी कथा सुनो सब कोई, वेद पुराण बद है सोई।।५।।

जो साधु हरि–विष्णु के प्रेम में है वही हरि का प्यारा है। प्रहलाद राक्षस वंश में उत्पन्न हुआ था किन्तु हरि के प्रेम भाव भक्ति में ओत–प्रोत था। भक्ति रंग में रंगा हुआ था।

उन प्रहलाद भक्त की कथा मैं कहता हूँ सभी प्रेम भक्ति भाव से श्रवण करें। इसी कथा का वर्णन वेद–पुराणों में कहा है।

नारायण बैकुंठ विराजै, महाराज लिछमी संग राजै।

एक समै हरि अंछया करी, श्री विस्नुलीला मन धरी।।६।।

भगवान् नारायण विष्णु बैकुण्ठ धाम में विराजमान होते है विष्णु व्यापक सता आकाशवत सर्वत्र व्यापक रूपेण रहती है उनके साथ ही लक्ष्मी, धन, दौलत ऐश्वर्य भी रहता है एक समय लीलाधारी भगवान नारायण विष्णु ने विचित्र लीला करने की इच्छा की थी। अवतार धारण करके कुछ लीला चरित्र करने की इच्छा की थी।

''दुहा''

अपने मन मे उधवा, ठठ्यो ठाट महाराज।

मरत लोक अवतार लूं, भगति बधारण काज।।७।।

ऊद्धव जी कहते है कि भगवान् विष्णु ने अपने में हर्षित आनन्दित होकर ठाट–

बाट से मृत्युलोक में अवतार लेने का विचार किया। भक्ति विस्तार एंव अन्याय का विनाश करने हेतु अवतार धारण करने की योजना बनाई।

''चौपई''

जहां माधव तांहां सदा वसंत, हरि दरसण आये सुर संत।

सिव सिनकादिक नारद आये, ब्रह्मा आदर सबौ पाए।।८।।

जहां पर माधव भगवान् विष्णु का अवतरण होता है वहां सदा ही बसन्त ऋतु रहती है। हरि दर्शन हेतु सुर संत आते है उन संतो में शिव, सनकादिक, नारद आदि आये ब्रह्मा आदि सभी देवताओं ने यथा योग्य सम्मान प्राप्त किया।

पुसब गींद हाथ हरि लई, बसंत खेलन की अंछया भई।

ले हरि गींद पर बावै, सीस चढाय सुरसाध चलावै।।९।।

पुष्प की गेद को हरि ने हाथ मे ली और बसंत ऋतु में हरि को खेलने की इच्छा हुई। हरि ने हाथ में गेंद ली ओर दूसरो पर फेंक दी।। आगे सुर, साधु उस गेंद को लेकर अपने शीस पर धारण कर नमन करते और विष्णु की तरफ चला देते। इस प्रकार से गेंद द्वारा खेल खेल रहे थे।

द्वारपाल बैठे जाहां आई, तां पर हरि जी गींद चलाई।

जै विजै ले सीस चढाई, बहुरि गींद हरि पै नहीं बाई।।१०।।

जय और वियज दो द्वारपाल वही पर बैठे थे और खेलने के लिए वहां पर आ गये हरि विष्णु ने उन पर भी गेंद चलाई उन्होंने भी हरि द्वारा फेंकी हुई गेंद को अपने शिर पर धारण करके नमस्कार किया अपने को धन्य माना। किन्तु वापिस गेद हरि पर नहीं चलाई। अर्थात फेंकी नहीं।

नारायण कहयौ हम पै बावो, भहू परसपर खेल रचावौ।

जै विजै कहै सुनौ गुंसाई, तम सनमुख नहीं हाथ चलाई।।११।।

नारायण ने कहा जय विजय आप वापिस मेरे पर गेंद चलाओ फिर से परस्पर खेल की रचना करो जय और विजय कहने लगे हे गोसाई ? आपके सामने हम अपने हाथ कैसे उठा सकते । गेंद फेंकना होगा तो आपके सामने हाथ उठाना होगा, यह अन्याय हम से नहीं होगा।

तब हरि कहयौ दोस नहीं तुम कुं, गींद खेल खुशी है हमकुं।
मम आज्ञा तम माथै मांनौ। तम कछु मन मै दोस न जानौ।।१२।।

जब जय वियज ने गेंद फेंकना दोष माना तब हरि ने कहा कि आप इस में अपना अपराध नहीं मानो। इस समय गेंद खेलने में मुझे प्रसन्नता ही है। मेरी आज्ञा आप स्वीकार करो आप किसी प्रकार का दोष नहीं जानों। मेरी आज्ञा आप को माननी चाहिये।

बाहो पुसप भाव तो जीकौ, बसंत खेल लगें मोहे नीकौ।
पुन: पारखद कही इम बाता, सांमी सामो होय न हाथा।।१३।।

आप जय विजय पुष्प गेंद फेंके मुझे यह खेल अच्छा लगता है बसंत खेल मुझे बहुत ही प्रिय लगता है। फिर से जय विजय ने कहा हे स्वामी! आपके सामने हम हाथ उठा ही नहीं सकते।

द्वारपाल हुक मन ही राखै, तब कर कोप वचन हरिभाखै।
हमरें कहै पुसप नहीं बाहौ, तम तो हम पर खड़ग समाहों।।१४।।

द्वारपालों ने अपनी हठ नहीं छोड़ी, मन मे ही शर्मिन्दा हो गये तब हरि की आज्ञा का उलंघन करने से हरि कुपित होकर कहने लगे मेरे कहने से भी पुष्प गेंद नहीं खेल रहे हो किन्तु आप लोग तो मेरे पर खड़ग चलाओगे।

कहर वचन हरि एक सुनायो, द्वारपाल हृदै भयै पायौ।
उठ प्रतिहार पौल मैं गये, उभै परसपर सोचत भऐ।।१५।।

जय विजय द्वारपालो को हरि ने यह कठोर वचन सुनाते हुए कहा कि आप लोग मेरे पर खड़ग चलाओंगे, अभी तो पुष्प गेंद भी नहीं चला रहे है । वहीं से उठकर द्वारपाल दरवाजे में गये और दोनो ही परस्पर विचार करने लगे कि यह क्या अनहोनी हो गयी।

द्वारपाल आपस में बूझै, कांहां चूकै हीरदै न सुझै।
हरि के विहंग वचन उमानै, ब्रह्मा सिव सेस नहीं जानै।।१६।।

द्वारपाल आपस मे एक दूसरे से पूछने लगे कि हमारी सेवा में चूक कहां हो गयी है यह दिल-दिमाग से अबूझ है दिखाई नहीं पड़ रहा है हरि के वचन अलौकिक आकाश तत्व से प्रगट होते है जिनके वचन सभी के लिये

मान्य है। उनके वचनों की गति ब्रह्मा, शिव शेष नहीं जानते है केवल मान्य है।

अज्ञा भंग पोरीया होई, एक हरि की अंछया जानो सोई।

भगत हेत हरि जगत उपाई, अवतार बिना नहीं जानो भाई।।१७।।

यदि हम हरि की आज्ञा भंग करते है तो अपना छोटापन ही हेगा। यह भी हरि की इच्छा क्या हो सकती है वही जान सकते हैं जिन्हें भगवान जना दे। भक्तों के हेतु हरि ने जगत की उत्पत्ति की है भगवान क्या करना चाहते है यह तो अवतार लेगे, कार्य संपन्न करेगें तभी पता चलेगा।

भूमण्डल में लीला करणी, ले अवतार भक्त विसरणी।

हरि की रचना हरि ही जानै, सुरनर मुनिजन काहां पिछानै।।१८।।

भगवान अवतार लेकर भू –मण्डल में लीला करेगे, भगवान अवतार धारण करेगें भक्तों को शरणागत लाने हेतु, वैसे तो हरि की रचना हरि ही जानते है। सुरनर मुनिजन कहां पहचानते है।

''दुहा''

अगम गत भगवंत की, समझै का प्रतिहार।

श्राप दीयौ सिनकादिकै, ताका सुनो विचार।।१९।।

भगवान की गति अगम्य है बुद्धि से परे है। ये विचारे प्रतिहार द्वारपाल क्या समझै। सनकादिको ने भी श्राप दिया उसका विचार आगे सुनो।

''चौपई''

ब्रह्मापुत्र सिनकादिक च्यारी, ब्रह्मवेता तिन मे इधकारी

नगन मगन गोविन्द गुन गावै, रहै सूर चंद अंछा जाही जावै।।२०।।

ब्रह्माजी के सनकादिक चारों मानसिक पुत्र है ये चारों ही ब्रह्मवेता अधिकारी है सदा निर्वस्त्र, आनंद में निमग्न रहते हुए, हरि के गुणगान करते हुए जहां इच्छा हो वही पर विचरण करते है। उनका क्षेत्र जहां तक सूर्य चंद्र प्रकाशित होते है वहीं तक निर्बाध गति से भ्रमण करते है।

सदा काल अवसथा कैसी, पांच बरस के बालक जैसी।

जीवन मुकत विज्ञान विचारी, आप रहत सब मै इधकारी।।२१।।

उनकी अवस्था आयु सदा ही पांच बरस के बालक जैसी ही रहती है

सदा ही जीवन मुक्त ज्ञान–विज्ञान मे विचरण करते है ये चारों ही अपने आप में सच्चे ज्ञान के सागर अधिकारी है।

प्रात समै सेस जांहां जावै, सेस सहंस मुख कथा सुनावै।
मध्यान संभू मंडल आवै, सुईछा विधलोक सिधावै।।२२।।

सनकादिक चारों प्रात:काल समय शेवजी के यहाँ पर जाते है वहां शेष जी हजारों मुखों से भगवान की कथा सुनाते है। मध्यान में शिंभु मण्डल में जाते है और अपनी इच्छा से विधिलोक को भी चले जाते है।

सिंध्या भई वैकुंठ की आसा, हरि दरसन की बढ़ी पियासा।
ठाडे रोम हृदै मुख विगसै, हरिदरसण कुं मन मे हुलसै।।२३।।

सायं संध्या वेला में भगवान के वैकुण्ठ धाम में जाने की इच्छा होती । वहां दर्शन की प्यास बढ़ जाती । भगवान के दर्शन से रोमांचित होते। हृदय में आनन्द की लहरे उठती और मुख पर मन्द मुस्कान आ जाती। हरि दर्शन की इच्छा से मन प्रसन्न चित हो जाता।

दोढी भीतर पैठत भए, छड़ीदार अटक युं कहै
हरि होकम विन भीतर जावै, सामै रिसाय कहा उतर आवै।।२४।।

सनकादिक चारों भाई दरवाजे मे प्रवेश करने लगे। उसी सम जय विजय पहरेदारों ने उन्हें रोक दिया और कहने लगे हरि के आज्ञा बिना भीतर प्रवेश नहीं करना है इस प्रकार क्रोधित होकर कहा तब सनकादिकों की तरफ से उतर इस प्रकार से आया।

सिनकादिक क्रोध करै भाखै, हरि दरसण जाते को राखै।
दीयो श्राप असुर हुय जावौ, दरस जाते अटके फल पावौ।।२५।।

क्रोधित होकर सनकादिक कहने लगे आप द्वारपाल हमे हरि दर्शन के लिये जाते हुए को रोकते है। श्राप देते हुए कहने लगे आप लोग असुर–राक्षस होकर मृत्युलोक में फल भोगो। निष्काम भाव से हरि के दर्शन करने जाते हुए को आप लोगों ने टोक दिया है इस कर्म का यही फल भोगो।

द्वारपाल मन में भै पाए, नारायण ताकुं समझाये।
दिज बचन मिथ्या नहीं जाही, हुवो असुर भूमि कै मांही।।२६।।

सनकादिकों के कठोर वचन सुनकर द्वारपाल भयभीत हो गये। उसी समय नारायण ने उन्हें समझाते हुए कहा कि इन सनकादिको के वचन मिथ्या नहीं हो सकते। आप लोग मृत्युलोक में जाकर असुर बने।

तव प्रतिहार कहकर जोरी, बहुर कब आवै इह ठोरी।
हरि द्वारपाल सूं बात सुनाई, दोय विध मोह मिलोगै आई।।२७।।

प्रतिहार–द्वारपालों ने हाथ जोड़े और कहने लगे हे भगवन् हम फिर कब यहां पर लौटकर के आयेगे। हरि ने द्वारपालो से इस प्रकार से बात सुनाई कि मेरे से मिलना दो प्रकार से हो सकता है।

अराध जनम सातम या होई, विरोध जनम तीसर आ होई।
उभै प्रकार कहयौ जब हरि, द्वारपाल आसंका करि।।२८।।

भगवान ने कहा यदि आराधना उपासना करेगें तो वापिस आने मे सात जन्म लग जायेंगे और यदि विरोध करेंगे तो तीसरे जन्म में मिलन हो जायेगा। इस प्रकार से दोनो प्रकार से जब हरि ने कहा तब द्वारपालों ने शंका करते हुए कहा।

''द्वारपाल उवाच''

आराध अवेरो विरोध सवेरों, याका प्रभु जी करो नवेरो।
बैइरो मित्र स संगत पावै, सौ कहया विन समझ नहीं आवै।।२९।।

आराधना करने से देरी से प्राप्ति और विरोध करने से शीघ्र प्राप्ति होगी इस बात का हे प्रभु जी निर्णय करो वैरी और मित्र समान गति को प्राप्त हो जावे यह बात विना बताये समझ मे नहीं आती।

''दुहा'' श्री भगवान उवाच''

मित्र मित्र टुक बिसरै, बैरी बिसरै नांह।
अराध विरोध युं अंतरो, यूं समझो मन मांहि ।।३०।।

मित्र को मित्र शीघ्र ही बिसर जाता है किन्तु बैरी बैरी को जल्दी नहीं भूलता है सदा ही याद बनी रहती है। आराधना एवं विरोध मे यही अन्तर है अराधना में तीव्रता नहीं होती है किन्तु शत्रुता मे तीव्रता अधिक होती है। भगवान का स्मरण शत्रुता से निरंतर बना रहता है उतना मित्रता से नहीं ऐसा मन में समझकर विचार करें।

''चौपई''

जान अजान भेद नहीं कोई, पारस परस लोह कंचन होई।

प्रीत बैरकर सनमुख रहै, सोई जन मेरो पद लहै।।३१।।

भगवान् की भक्ति चाहे कोई जानकर करे या अनजान मे करें इसमे किसी प्रकार का भेदभाव नहीं है जिस प्रकार से पारस लोहे से स्पर्श हो जात है तो वह लोहे को सोना बना देता है उसी प्रकार से भगवान से स्पर्श होने पर ''**लोहे होता कंचन घड़ियो**'' प्रीत या बैर करके भी जिस प्रकार से भगवान् के सन्मुख हो जाता है वही जन भगवान कहते है कि मेरे परमपद को प्राप्त हो जाता है।

भगत दुहेली मन मै हारे, तीन जनम जुध विचारै।

श्राप लग्यौ हरिपुर सुं गीड़ै, सुर गत छाड़ असुर गत पड़ै।।३२।

दु:ख आने पर भक्त दु:खित होकर मन मे हार जाता है भक्ति भाव मे विघ्न हो जाने पर हार जाता है इसलिये भक्तिभाव से सात जन्म लग सकते है किन्तु बैरभाव वाले सदा ही भगवान का स्मरण करते हुए युद्ध का आयोजन करते है इसलिये ये जय विजय द्वारपाल भी तीन जन्मों तक युद्ध ही करेगें और वापिस लौट आयेंगे। जब इस प्रकार हरि से श्राप लग गया तब द्वारपाल गिड़गिड़ाने लगे कहने लगे हे देव! सुर गति छोड़कर असुर गति को प्राप्त हो रहे है यह दु:खदायी घटना हमारे लिये है

जिस विध जलम लीयौ संसारा, तांह उभै का कहूं विचारा।

जाहां घड़ी पुल जैसी जो होई, बूरी भली वेद कह दोई।।३३।।

जिस प्रकार से जय वियज दोनो ने संसार में जन्म लिया था उन दोनों का विचार बतलाता हूं। जन्म के समय जैसा ग्रह नक्षत्रों की स्थिति होती है उसी के अनुसार जातक का जन्म एवं जीवन होता है। इन ग्रह नक्षत्रों की स्थिति को देखकर जीवन में क्या करेगा, कैसे होगा, भला या बूरा यह सभी कुछ ज्योतिष वेद द्वारा कहा जा सकता है कहा भी है सपूत का पग तो पालने में ही छाना कोयनी रहे।

भली पुल नेम भला सुत होई, खोटी पुल नेम दुष्ट सुत होई।
कासब राज दती घर राणी, विधन खेल की सुनौ कहाणी।।३४।।

शुभ समय तथा शुभ नियम से गर्भधान करने से अच्छी संतान होती है। अशुभ समय और नियम विरूद्ध किया हुआ गर्भाधान से दुष्ट संतान उत्पन्न होती है। यथा **''गहंण गहन्तै बहण बहन्ते निरज लग्या रस मूल बहंतै''**।। शब्द–7

कश्यप ऋषि की पत्नी दिती थी विधि का विधान श्रवण करो नियम विरूद्ध संध्या वेला में **'' बहण बहन्तै''** ऋतुदान की याचना का फल किस प्रकार से प्राप्त हुआ।

''दुहा''

कासब बैठो ध्यान मे, सन्ध्या समै विचार।

रुतवंती आगै खड़ी, अरज करत है नार।।३५।।

कश्यप ऋषि सायं की संध्या वेला मे भजन ध्यान मे बैठे थे। उनकी पत्नी दिति ऋतु अवस्था मे आगे आकर खड़ी होकर अरज करने लगी।

''त्रीया उवाच''

कामातुर बह बल भई, उठ करो अंगीकार।

बेमुख कीय सुं दोष है, सुनियो कंथ विचार।।३६।।

दिती कहने लगी मैं बहुत ही कामातुर हूं, उठो और मुझे अंगीकार करो। आप मेरी इच्छापुरी नहीं करोगे तो आपको दोष लगेगा हे पति देव! सुनियें और विचार कीजिये।

''कासब उवाच''

कासब कही समझाय के, त्रीया न लगो ग्यान।

रूतदान दीयो निज नार कूं, छाड विसन को ध्यान ।।३८।।

दिती यह महाभयानक समय है इस संध्यावेला में शिवजी के गण समूह घूम रहे है इस समय शुभ या अशुभ छोड़कर गोविन्द को भजो इस प्रकार से कश्यप ने दिति को समझाया किन्तु त्रिया के समझ में कुछ नहीं आया। स्त्री हठ के सामने कश्यप हार गये और विष्णु के ध्यान को छोड़कर दिती को ऋतुदान दिया।

''चौपई''

पीछे नार बहोत पिसतानी, हे दई मोह काहा मत ठानी।
कासब वचन कहे समझाई, तम सुं होय असुरन दुख दाई।।३९।

ऋतुदान लेने के पश्चात् दिती ने बहुत ही पछतावा किया। हे देव! मैंने कहां मति को लगाया। उस समय कश्यप ने समझाते हुए कहा तुम्हारें गर्भ से पुत्र होगा वह असुर दुखदायी होगा।

'' त्रीया उवाच''

असे पुत्र नरक ले जावै, कहां पीव कैसे गत पावै।
यूं त्रिया के मन धोखो रहयौ, कासब उतर कह तो भयौ।।४०।।

दिती कहने लगी है पतिदेव! इस प्रकार राक्षसी वृति वाले पुत्र तो अपने जनों को नरक मे ले जाते है कहो पतिदेव किस प्रकार से अपनी गति होगी। ''पुं नाम्ना नरकात् त्रायते इति पुत्र:।। यह तो विपरीत ही होगा। इस प्रकार से त्रिया के मन में संशय हो गया तब कश्यप ने उतर इस प्रकार से दिया।

''कासब उवाच''

सुत कै सुत असौ जु होई, परम संत तारै कुल दोई।
विसन भगत संतन हितकारी, सुरनर सबही होत सुखारी।।४१।।

दिती! तुम घबराओ नहीं इस अपने पुत्र का पुत्र होगा वह परम संत होगा। वह दोनों कुलो को तार देगा। वह विष्णु का भक्त संतो का हितकारी होगा। उसके यहां भू-मण्डल में जन्म लेकर आते ही सुरनर सबही सुखी हो जायेगे।

''दुहा''

सम दीष्टी सीतल सदा, हीरदै स्वांत स सम ज्ञान।
सत्रु अजीत सुहृद रह, असौ परम सुजान।।४२।।

जिनकी दृष्टि सम भेदभाव रहित होगी तथा सदा ही शीतल-रहेगी, हृदय में शांति रहेगी तथा सम्यक ज्ञानी होगा। शत्रु मित्र में समान, अजेय शत्रु सभी का मित्र रहेगा। ऐसा परम सुजान तुम्हारा पौत्र होगा जो दोनों कुल को तार देगा। जो परगट सिंवरा गोपाल, अस्वर मार करे पैमाल।

''चौपई''

करुणावत दया इधकारी, निमृभूत बिनै बहु भारी।

नीत अनीत विचारन हारा, सार असार विवेक विचारा।।४३।।

करुणामय दयालु, दयावान, धर्म अधिकारी नम्रशील तथा विनयशील आदि अनेकों गुणों से संपन्न तुम्हारा पौत्र होगा। नीति अनीति का विचारने वाला, सार तत्व, असार का विवेकी विचारवान तुम्हारा पौत्र होगा।

माया मोह तै परम वैरागी, आतम ज्ञान वासना त्यागी।

तन मन जीत चरण चित धर ही, लोक लाज सब परहर ही।।४४।।

वह तुम्हारा पौत्र संसारिक माया मोह से परम वैराग्यवान होगा, आत्म ज्ञानी होगा तथा सांसारिक वासनाओं का परित्याग करेगा। तन, मन को जीत लेगा और नारायण के चरणों में अपना चित लगायेगा जगत की परंपरा, लोक लाज सभी का परित्याग कर देगा।

प्रेम मगन हर को गुण गावही, नाम टेक हृदै गह धावहि।

असे लछन की सब कहै, दती सुन हिरदै सुख लहै।।४५।।

प्रेम में आनन्दित होकर हरि–विष्णु के गुणों का गान करेगा हिरदै में एक विष्णु का नाम धारण करके जीवन धारण करेगा। इस प्रकार के लखणों से संपन्न पौत्र होने की बात कश्यप ने दिती से कहीं तब दिती ने ये बातें श्रवण की और हिरदै में सुख प्राप्त किया।

जै अरू विजै असुर तन हुए, दती ओदर आवत भए।

ग्रभध्या का सुरनर भय पावै, असुर आंच सही नहीं जावै।।४६।।

जय और विजय दोनों दिती के गर्भ मे असुर रूप में आये। गर्भ में स्थित जय विजय की असुरता से सुर नर भय को प्राप्त हो गयी। क्योंकि असुर की आंच तप असहनीय हो गये।

जुगल जलम जगत मे लए, हिरण कसब हिरणाछ जु भए।।४७।।

दिती के गर्भ से समय आने पर जुड़वा युगल जोड़ा हिरणाक्ष और हिरण्यकशिपु का जन्म हुआ।

''दुहा''

असुर जन्मै संसार में, डरे लोक सब देख।

चाल सब विपरीत की, महा भयानख भेख।।४८।।

संसार में असुरों का जन्म हो गया है ऐसा जान कर सभी जन भयभीत हो गये। जन्म समय के ग्रह नक्षत्र सभी विपरीत दशा की चाल में चल रहे थे। उनका रूप रंग शरीर की बनावट महा भय को उत्पन्न कर रही थी

''छन्द पदड़ी''

तपै है जु दैइत महातै जवंत, श्रब देव नाग नर डर हे जुत।

बलवंत भये महाअसुर जोध, नरदेव नाग ते करैत विरोध।।४९।।

हिरणाक्ष तथा हिरण्यकशिपु ये दोनो इस पृथिवी पर आये तब दैत्यों का बल तप बढ़ गया। इनके विपरीत सभी देव, नाग, नर भय से भीत हो गये। योद्धा, असुर बलवान हो गये, नर देवता, नाग आदि से विरोध करने लगे

नरलोक जीत गए इन्द्र लोक, भय पाय देव सर्वतजी है ओक।

करी है जु गाज हिरणाक्ष दैत, यूं विकल भए इन्द्रादि सहेत।।५०।।

मनुष्य लोक तथा इन्द्रलोक को दैत्य जीत गये, भयभीत देवताओं ने अपनी शक्ति त्याग दी हिरणाक्ष ने जिस प्रकार से महागर्जना करी जिसको सुनकर इन्द्रादिक देवता व्याकुल हो गये।

तिहु लोक दइत लीनो जु जीत, भुज ठोक रहे ज अस्वर अजीत।

ब्रख दस सैहंस ढुंढत होय, नरदेव जुध पुजै न कोय।।५१।।

दैत्य हिरणाक्ष ने तीनों लोकों को जीत लिया और युद्ध के लिए ताल ठोक रहे थे असुर विजय को प्राप्त कर रहे थे। दस हजार वर्ष तक हिरणाक्ष किसी बराबरी वाले देव नर से युद्ध करने के लिये खोजता रहा। नर देवों मे युद्ध करने की अपनी पहुंच न होने से किसी ने हिरण्याक्ष से युद्ध स्वीकार नहीं किया।

खीली खीज चौपी पाल माह, पृथ्वी करत भई जब त्राह त्राह।

सप्तलोक जहां बिरमा निवास, सुरे सभीत गये ब्रह्मा पास ।।५२।।

हिरणाक्ष ने कुपित होकर पृथ्वी के हृदय के बीच खूंटी ठोक दी अर्थात् धरती माता के दिल को द्रवित दुखित कर दिया, धरती त्राह त्राह करने लगी अर्थात् मुझे बचाओं हे भगवान विष्णु! जहां सातवें लोक में ब्रह्माजी का निवास

है वहीं से सुर–देव भयभीत होकर ब्रह्मा जी के पास गये।

महां धरणी बिना कछु होत नांह, देइत चापी पाताल मांह।
कहूं पाहि पाहि विध सरण तोह, कर जोड़ करि विधि विसनुं यादह।।५३।।

दैत्य हिरणाक्ष ने महा धरती को पाताल में पहुंचा दी। अर्थात् जल में डूबा दी बिना धरणी के कुछ भी धारण नहीं होता देवता मानव विधि ब्रह्माजी के पास त्राहि–रक्षा करो, रक्षा करो ऐसे पुकारते हुए पहुंचे, हम आपकी शरण मे है। शरणागत की रक्षा करो। विधि ने हाथ जोड़कर विष्णु से प्रार्थना की। ''अनाथ नाथ सुनिये जु फरियाद'' हे अनाथ के नाथ हमारी विनती सुनियै

प्रथी दुखी हरि सुनीह जु एह, कृपा निधान करणी जु गृहै।
ततकाल भए ह वाराह सरूप, विसमत होत विध देख रूप।।५४।।

धरणी को दुखी देखकर हरिनारायण कृपा निधान ने अपनी माया से तत्काल वाराह रूप धारण कर लिया। ऐसा अकस्मात स्वरूप देखकर सभी देव, दानव व मानव विस्मित आश्चर्य चकित हो गये

ढूंढ गये जब धरण लार, घू घ्राट करत गए जल मंझार।
उठ्यो जु दैत माहा सुन्यौ है सौर, बहु परसपर जुधु भयो है घौर।।५५।।

जब वाराह अवतार नारायण धरती के पीछे छिपकर घर्घराट करते हुए जल के मध्य प्रवेश किया । जब दैत्य हिरणाक्ष ने आकाश में छलांग लगाई उनकी भयंकर ध्वनि को वाराह ने श्रवण की और परस्पर महाघौर युद्ध होने लगा।

हरि गदा पर सिर दीयौ दइत मार, धरणी जु दढ पर लई है धार।
जै जै सबद भयौ सुर समाज, प्रिथी जु थाप सुर कियौ है काज ।।५६।।

हरि ने गदा से दैत्य पर प्रहार करके मार डाला। धरणी को दाढ पर धारण कर लिया। सुरनर समाज ने जय जयकार शब्द की ध्वनि की पृथ्वी की पुन: स्थापना करके देवताओं का कार्य संपन्न किया।

''दुहा''

धर धीर जदें अभैकर, विसनु गये निज द्याम।

दैत भ्रात रहयो दूसरो, हिरणाकुस है नाम ।।५७।।

धैर्य धारण करके जब देवताओं को अभय प्रदान किया और भगवान वापिस अपने धाम को प्रस्थान किया। हिरणाक्ष का छोटा भाई जिसका नाम हिरण्यकशिपु था उसी की कथा आगे श्रवण करे।

''छन्द पदड़ी''

हिरणाकसप जब कीयौ है क्रोध, हरि मम भ्रात सत्रु मारूंज सोध

तिहुं लोक फिरयौ दैत जास, हरि मिलै नहीं गये सुकर पास।।५८।।

अपने बड़े भ्राता के मारे जाने पर हिरण्यकशिपु ने क्रोध किया हरि मेरे भ्राता के शत्रु है उन्हें कहीं पर भी मिले तो मार डालूंगा। दैत्य तीनों लोको को त्रास देते हुए भ्रमण करता रहा। हरि नहीं मिले तब शुक्राचार्य जी के पास गया।

''दैत उवाच''

तम गरू मंत्री विधि देहो बताय, मम भ्रात वैर जिम लहु जाय।

हरि कृस होय मै लऊ जीत, सोई मंत्र बताय दिज देव मीत।।५९।।

हे देव शुक्र! आप गुरु मंत्री की तरह कोई ऐसी विधि बतावें जिससे मेरे भाई का बैर जिस प्रकार से ले सकूं ऐसा मंत्र बतलाइये जिससे हरि तो दुर्बल कृशकाय हो जावे और मै बलवान होकर हरि को जीत लूं।

'' सुक्राचार ज उवाच''

जिग होम जाप पूजादि सेवा, या विध पुष्ट होत देवादि देव।

भाव भगत मेटै हरि कृस होय, तम करो तप बढ़ै तेज तोह।।६०।।

यज्ञ होम जप पूजादि सेवा करने से देवाधिदेव नारायण पुष्ट होते है हरि की भक्ति भावना मेट देने से हरि कृश दुर्बल हो जाते है हे राक्षसो, आप भी यदि तप करो तो तुम्हारा भी तेज बढ़ जायेगा।

तब दैत करत विपरीत रीत, नरदेव नाग सब लीये है जीत।

धरम मेट अधरम उपाय, जिग जाप दई है छुड़ाय।।६१।।

तब दैत्यो ने देवताओं के विपरीत रीति रीवाज करने लगे राजा देव नाग सभी दैत्यों ने जीत लिये धर्म को मेटकर अधर्म का विस्तार करने लगे। यज्ञ जप आदि सभी छुड़ा दिया–

दीज देव गउ माहा दुखी कीन, दैत त्रास सबहु बुरी दीन।
मारू जु विसनु अरू विसनु दास, हरि भगत काढुं जु स्वांस ।। ६२।।

ब्राह्मण, देव गुरु आदि को बहुत दुखी करने लगे। दैत्यो की त्रास सभी को बुरी लगी और दैत्य कहने लगा विष्णु को मारूंगा और उनके भक्तों को भी मारूंगा। हरि के भक्ते का श्वांस निकाल दूंगा, मृत्यु को पहुंचा दूंगा।

हरि भक्त मेट सब है दैत, नर विष्णु नाम नहीं प्रकट लेता
हरि है सत्रु मम मारयौ जुभ्रात, ताहि नाम लेत करहु घात।।६३।

दैत्यो ने सभी हरि के भक्तों को मिटा दिया। नर विष्णु का नाम प्रगट रूप से नहीं ले पाते थे। हिरण्यकशिपु कहने लगा हरि विष्णु ही ने मेरे भाई को मारा था उसी विष्णु का कोई नाम लेता है वह घातक होगा।

''दुहा''

सुरनर सब ही जीत कर, रयत कीये सब देश।
हरि जितन कूं मन कीयौ, तप कु चल्यो नरेस।।६४।।

सभी सुर नर को जीत कर भक्तो से सभी देश खाली कर दिया अब आगे हरि को जीतने का संकल्प किया। तपस्या करने के लिये दैत्यो के राजा हिरण्यकशिपु चल पड़ा।

''चौपई''

राजा मंत्री लीये बुलाई, सब मेरी सीख सुनो मन लाई।
घोड़ा हाथी देस भण्डारा, ग्रांम ग्रांम रहीयौ रखवारा।।६५।।

हिरण्यकशिपु ने अपने मंत्रियो को बुलाया और सीख देते हुए कहने लगा। हाथी घोड़ा आदि पर सवार होकर भण्डारण तथा गांव मे रखवारी करे।

राज काज तम नीकै करीयौ, मिल परवार भूप नीसरियो।
हेत गयौ तपस्या के काजा, असुर पुरी आयौ स्वः राजा।।६६।।

दैत्य ने आदेश दिया कि आप लोग राजकाज ठीक से करना। स्वयं भूप हिरण्यकशिपु अपने परिवार के साथ नगरी से निकल पड़ा। तपस्या करने के लिये दैत्य असुरपुरी आया जहां स्वयं का राज था।

पाछै इन्द्र अवसरू पाई, दैत्य पुरी कुं घेरी आई
चहुं दिस अग्न लगाय हूं दीनी, असुवर त्रीया बंद कर लीनी।।६७।।

हिरण्यकशिपु तपस्या के लिये चले जाने पर अवसर पाकर इन्द्र ने दैत्यपुरी को चारो तरफ से घेर ली। चारों तरफ से अग्निलगा दी और असुर की त्रिया को बंदी बना लिया

सुर असुर है आदु बैरी, दाव पड़ै इन्द्र कीवी गैरी।
अमरापुर सुर चले पुलाई, नारद मिलगे मघ में आई ।।६८।।

सुर-देव तथा दानव का आपसी बैर आदि काल से ही चला आ रहा है जिन जिनका मौका पड़े तभी एक दूसरों पर प्रहार कर देते हैं इन्द्र ने भी ऐसा ही किया। देव राज इन्द्र दैत्य पत्नी कायाधूउमा का लेकर अमरापुरी को चल पड़े मार्ग में नारद जी मिल गये और कहने लगे।

''दुहा''

देव रिखी कुं देख कै, प्रसन्न भये सुर राय।
सीस निवाय आदर कीयौ प्रसै मुनि के पांय।।६९।।

देव ऋषि नारद को सामने देखकर देवराज इन्द्र प्रसन्न हो गये शीश झुकाकर देव ऋषि ने समादर किया और चरणों में शीश झुकाया।

''नारद उवाच-चौपई''

नारद बोले कर सनमाना, देव राज तुम सुनो सुजाना।
अबला बंद करे तुम आनी, निंद करम कर लाज न जानी।।७०।।

नारद जी ने इन्द्र का सम्मान करते हुए कहा हे राजन! तुम श्रवण करो इस अबला नारी को तुमने बंदी बना ली है निंद्य कर्म करने मे तुम्हें लज्जा नहीं आती है।

''इन्द्र उवाच''

बालक हत त्रीया नहीं मारु, असुर अंस कौ छै कर डारू।
दीन बछल हरि साधु सोई, पर पीड़ तें दुखी जु होई ।।७१।।

इन्द्र कहने लगे कि मैं इस त्रिया को नहीं मारुँगा, किन्तु इसके गर्भ में असुर बालक है उसे ही निकाल कर मारुँगा। नारद जी कहने लगे हे देवराज! इस त्रिया के गर्भ में जो बालक पल रहा है यह दीन वत्स्ल हरि का प्यारा साधु है यह पर पीड़ा से दु:खी होगा अर्थात किसी को पीड़ा नहीं देगा।

''नारद उवाच''

असुर त्रीया बंदकर आनी, यां के ओदर साधु जानी।
परम भगत परमेसर प्यारो, हरि सुं प्रीत जगत सुं न्यारौ।।७२।

इस असुर त्रिया को बन्दी बनाकर ले आये हो, तुम्हें पता नहीं है इसके उदर में जो बच्चा पल रहा है वह ज्ञानी साधु है यह बालक परम भक्त परमेश्वर का प्यारा है हरि से प्रीत और जगत् से न्यारा है।

असुर साल सुर नहीं तवाई, गऊ विप्र संतन सुखदाई।
अजात सत्रु विवेकी साधु, नाम प्रहलाद हरि सेवक आदू।।७३।।

यह पैदा होने वाला बालक असुरों को रूलाने वाला होगा और देवताओं को आनन्दित करने वाला होगा। गौ, विप्र, संत जनो को सुख देने वाला होगा, अजात शत्रु होगा, विवेकी साधु सज्जन पुरुष होगा इस बालक का नाम प्रहलाद होगा यह हरि का आदि अनादि सेवक होगा।

कौन चूक असुर घर होई, विध संजोग मिटै नहीं कोई।
किनक कुडी अरू डाब मांही, एक मौल भिन्न कुछ नांहि।।७४।।

कौन सी चूक हुई है कि प्रहलाद जैसे भक्त का जन्म असुर घर पर हुआ है विधि का विधान संयोग–वियोग मिटता नहीं है स्वर्ण चाहे कूड़े में पड़ा रहे या डिब्बी सन्दूक में रहे उसके मोल में अन्तर आना नहीं है सोना तो सोना ही रहेगा चाहे कही भी हो।

ऊंच नीच का नहीं विचारा, हरि कुं भजै सा हरि का प्यारा।
त्रीया गम साधु सुन पाये, असवर छाड़ि रिख पास रहाये।।७५।।

भक्ति भाव मे ऊँच नीच का कोई विचार नहीं होता है, जो हरि को भजता है वही हरि का प्यारा होता है। देवराज ने जब यह सुना कि इस त्रिया के गर्भ मे साधु पल रहा है तब देवराज इन्द्र ने उसको नारद जी के पास ही छोड़ दिया।

''दुहा''

रिख कुं त्रीया सूंप कै, आगे चले सुर इन्द्र।
नारद आश्रम ले चलै, गावत गुण गोविन्द।।७६।

नारद मुनि को कयाधू प्रहलाद की माता को सौपकर इन्द्र चले गये नारद अपने आश्रम में ले आये और गोविन्द का गुणगान करने लगे।

''चौपई''

सीतल वचन मुनिवर भाखै, दें असीस पुत्री कर राखै।
छाजन भोजन करै प्रीतपाला, असे मुनिवर दीन दयाला।।७७।।

शांत वचन से मुनिवर नारद जी ने आश्वासन दिया। आशीर्वाद देकर अपनी पुत्री मानकर के प्रहलाद की माता को रखा हर प्रकार से भोजन वस्त्र आदि देकर प्रतिपालन करने लगे। ऐसे मुनिश्रेष्ठ नारद जी दीन दयालु कृपालु थे

हरि गुन सुन मुनि वैनं वजाई, मन प्रहलाद को लीयो चुराई।
कथा कीरतन हरि गुण गावै, ज्ञान ध्यान बहु भांत सुनावै।।७८।।

हरि गुण गायन की मुनि नारद जी ने वीणा बजाई और गर्मस्थ प्रहलाद के चितमन को चुरा लिया अपनी ओर आकर्षित कर लिया सदा भगवान की कथा कीर्तन करते हुए हरि के गुणों का गायन कर रहे थे। अनेक प्रकार के ज्ञान ध्यान से प्रहलाद को समझाते हुए संस्कारित कर रहे थे।

प्रहलाद सुने ग्रभ के मांही, भयो दिढ ज्ञान विसरयौ नाही।
तारग मंत्र सुनावै सार ही, सो प्रहलाद कीयो उरधार ही।।७९।।

तारकं मंत्र से प्रहलाद ने नारद जी से गर्भ में ही श्रवण किया उस अवस्था में प्रहलाद को दृढ़ ज्ञान हो गया जिसको कभी भी भूला नहीं। तारकं मंत्र से सार तत्त्व ज्ञान सुनाया उसी तारक मंत्र **''ओम शब्द गुरु सूरत चेला''** यही तारक मंत्र है। इसी सें पार गिराये''संसार सागर सें पार उतर जाते हैं इसी तारक मंत्र को प्रहलाद ने हृदय में धारण कर लिया।

गावै गुनै हिरदै हर खानै, मात गात गुफा कर जानै।
पर घर पुत्र होय जो आवै, माता मन मे बहुत लजावै।।८०।।

प्रहलाद की माता को नारद जी भजन कीर्तन द्वारा ज्ञान देते। प्रहलाद की माता जी नारद जी के साथ ही साथ भजन गायन करती हृदय में हर्षित होती। गर्भस्थ बालक प्रहलाद भी माता द्वारा श्रवण किया हुआ श्रवण करता और माता के गर्भ को ही गुफा मान कर ध्यानस्थ हो जाता। यदि कोई माता अपने पुत्र को पराये घर मे जन्म दे देती है तो माता अपने को लज्जित महसुस करती है।

तब यूं कही नारद मुनि जोसी, तम घर गये पुत्र तव होसी।
बैटी बहन मुनि कह भाखै, बहोत सुखी पोख दै राखै।।८१।।

माता की घबराहट देखकर ज्योतिषी नारद मुनि ने कहा कि जब तुम अपने घर वापिस जाओगी तभी तुम्हारे पुत्र रत्न जन्म लेगा। मुनि प्रहलाद की माता को आदर सहित बेटी बहन कहकर के सम्बोधन करते थे और बहुत प्रकार से भोजन वस्त्र आदि से कयाधू को प्रसन्नचित रखते थे।

''दुहा''

ग्रभवास प्रहलाद जु, सरनै सिरजन हार।
आगै अस्वर तपस्या गये, तांका सुनो विचार।।८२।।

गर्भ अवस्था में प्रहलाद ने सिरजनहार हरि की शरण ग्रहण कर ली थी। अब आगे किस प्रकार से हिरण्यकशिपु तपस्या करने गये वह विचार वृतांत श्रवण करे।

''चौपई''

मिंद्राचल के जाय निकेता, जोग ध्यान धरम भए सुचेता।
आस मार इडग हुय रहयौ, ब्रह्म ध्यान आनंदे गहयौ।।८३।।

मन्द्राचल पर्वत के निकट जाकर हरिण्यकशिपु योग ध्यान, धर्म धारण करके पवित्र होने लगे। ''**आसा सास निरास भइलौ**'' एक ब्रह्म का ध्यान करते हुए आनंद में मग्न हो गया।

तन मन जी के ना लीलाई, देह वदेह सुध नहीं काई।
तुचा मास चिंटी चुग लीना, अस्त रहे दीमक घर कीना।।८४।।

जिस दैत्य ने अपने को तपस्या में लीन कर लिया । तन मन से सच्चाई से तपस्या कर रहा था उसमे दिखावा नहीं था। तपस्या में लीन हो जाने से देह घर परिवार की कोई सुध-बुद्ध नहीं थी उसकी त्वचा, मांस को चिंट्टियों ने नोंच डाला था। वर्षों तक स्थिर रहने से दीमक ने दैत्य के शरीर को ही अपना घर बना लिया था

दिव ब्रख उग्रतप कीयो, देख विधाता हुलस्यो हीयौ।
चढ कराल ब्रह्मा जु आऐ, अमी कमण्डल कर मै लाये।।८५।।

देवताओं के दिव्य सौ वर्षों तक दैत्य ने तपस्या की थी यह देखकर विधाता का दिल प्रसन्न हो गया। हंस की सवारी कर के ब्रह्मा जी हाथ में अमृत कलश लेकर आये।

तब विध सिच्यौ इमृत नीर, तुष्ट पुष्ट जब भयो सरीर।
होय परसन विध बोलै बैन, दैत मांग वर बोलै नैन।।८६।।

विधि-ब्रह्माजी ने अपने पास अमृत जल को दैत्य के शरीर पर छिड़का शरीर वापिस पूर्ववत तुष्ट पुष्ट हो गया। प्रसन्न होकर विधि कहने लगे हे दैत्यराज! वर मांगो जिसकी तुम तपस्या कर रहे थे, वो तुम्हारे नयनों के सामने हैं।

जो कुछ तेरी अंछया होई, मांगौ वर मै देऊ सोई।
जो विध प्रसन भये तुम मोपै, वाचा दहौ वर मांगु तो पै।।८७।।

विधि ने कहा जो कुछ भी तुम्हारी इच्छा है वही वर मांगों मैं तुम्हें दे दूँगा। हिरण्यकशिपु कहने लगा ब्रह्मा जी! आप यदि मेरे पर प्रसन्न हो गये हैं तो मुझे आप वचन दीजिये तो मैं आपसे कुछ मांगू।

दिन रैण मरू नहीं बारै मासा, धरण मरू नहीं अरू आकासा।
बाहर मरू न भीतर मरू, ब्रह्मा सिष्ट मे अमर हुय फिरू।।८८।।

हे विधाता! मैं दिन, रात, बारह महिना, धरती, आकाश में नहीं मंरू। बाहर भीतर कही भी ब्रह्मा जी की सृष्टि में नहीं मंरू। मैं अजर अमर होकर ब्रह्माजी की सृष्टि में भ्रमण करूं।

नहीं कोई देह विधाता, एह वर मोही देऊ।

मस्तक ब्रह्मा यूं कही, पाय वर चाल्यो सही ।।८९।।

हे देव। मुझे विधाता द्वारा रचित सृष्टि का कोई नहीं मार सके। ब्रह्माजी ने दानव के मस्तक पर हाथ रखा और तथास्तु कहा। इस प्रकार का वरदान लेकर दैत्य वापिस अपने देश को चला।

''दुहा''

तपसा कर वरदान ले, अस्वर पहुंतो घर आय।

तही समै नारद मुनि, त्रीया दई पहुंचाय।।९०।।

हिरण्यकशिपु ने तपस्या करके विधि से वरदान लिया और असुर वापिस अपने घर आ गया। उसी समय नारद मुनि ने त्रिया को वापिस घर पहुंचा दी।

कुल कुटंब मित्री मिलै, पुरजन मिलै जु वृंद।

नर नारी हरखत भऐ, घर घर भऐ अनंद।।९१।।

वापिस आने पर कुल परिवार कुटुम्बी, मित्र, मंत्री, नगरवासीयों से मिलन हुआ। सभी नगरवासी नरनारी प्रसन्न हुए। घर घर आनन्द की लहरें उठने लगी।

''चौपई''

दावण राज करै सुख पावै, रंग रलीया करता दिन जावै।

प्रहलाद जनम भयौ है आई, सुरनर सब ही बंटत बधाई।।९२।।

दानव हिरण्यकशिपु राजकाज करने लगा और सुख का अनुभव करने लगा। रंग रलियां खुशियों में दिन सुख से व्यतीत होने लगे उसी समय प्रहलाद जी का जन्म हुआ, सुरनर मुनि जन बधाइयां बांटने लगे।

कहते भये सब मंगल चारा, सुरनर सब ही भए सुखारा।

माता के उर आनंद भऐऊ, पुत्र देख हृदै से लेऊ।।९३।।

सभी नगरवासी मंगल गीत गाने लगे। सुर–नर सभी ही सुखी हो गये। माता ने हृदय से लगा लिया।

बाल सरूप मै सुन्दर, तुष्ट पुष्ट कऊं लिप न दुंदर।

ब्रख चत्रय बाहर जहै, लरकन साथ खेलता रहै।।९४।।

प्रहलाद बाल्य अवस्था में देखने में अति सुन्दर था। शरीर हष्ट-पुष्ट बलवान था। खेल को खेल रूप मे खेलता था। कहीं पर भी लिपायमान नहीं था और नहीं कहीं द्वन्द्व-द्वैत भाव ही था।

जब चार वर्ष का प्रहलाद हो गया तब घर से बाहर खेलने के लिये जाने लगा अपने सम वयस्क बालकों के साथ खेलने लगा।

पांच बरष मे जां दिन हुए, तबतै सुरत संभावें रत भऐ।।९५।।

पांच वर्ष के जब प्रहलाद हो गये उसी दिन से ही सुरति संभाल ली और भगवान हरि के ध्यान मे रस बस गये।

''दुहा''

ग्रभ थका प्रहलाद कुं, नारद दीनौ ज्ञान।
पांच बरस कौ सुरत कर, धरत विसनु को ध्यान।।९६।।

ग्रभ अवस्था मे प्रहलाद को गुरु नारद जी ने ज्ञान दिया था इसलिए पाँच वर्ष की आयु में ही परमात्मा विष्णु की श्रुति-सुरत याद करके विष्णु का ध्यान करने लगा।

''चौपई''

प्रेम भक्ति हृदै मे आई, गुरु कृपा से नहीं विसराई।
बाल केल रसवा दिन साथा, निसदिन गावै हरिगुण गाथा।।९७।।

हरि से प्रेमभाव की भक्ति प्रहलाद के हृदय मे आ गयी गुरु नारद जी की कृपा से जो कुछ गर्भ अवस्था में श्रवण किया था वह भूला नहीं था इस समय बाल्य क्रीड़ा करते हुए भी वह गुरु का दिया हुआ ज्ञान भी साथ में स्मृति रूप में था रात्रि-दिवस हरि के गुणों का गायन करते हुए प्रहलाद प्रसन्न चित रहने लगा।

गद गद कंठ गिरा सुहाई, कबहु प्रेम मगन रह जाई।
ठाढे रोम नैन जल व्रसै, प्रफुलत हुए हृदै मै हरखै।।९८।।

प्रेम भक्ति से प्रहलाद कंठ से वाणी उच्चारण करते तो वाणी में

आनन्द की वर्षा करते गला रूंध जाता, कभी कभी प्रेम मे मग्न हो जाते तो वाणी चुप हो जाती। शरीर मे रोमांचित हो जाता आंखों से प्रेमाश्रु बर्षा बनकर बहने लगते। प्रफुल्लित होकर हृदय में आनन्द की अनुभूति होती तब बाह्य शरीर भी तद्वत हो जाता।

अनन्य प्रेम भक्ती उर छाई, कुल लाज काण रही न काई।
एक दिवस अस्वर सुन पाई, मंम बैरी की कीरतन गाई।। ९९।।

अनन्य प्रेम यानि अब एक को छोड़कर मेरा दूसरा नहीं है एसी भक्ति भाव दिल मे छा गयी। अपने राक्षस कुल की लज्जा मर्यादा कुछ भी नहीं रही। एक दिन असुर ने प्रहलाद की यह हरकत सुनी तब दैत्य ने कहा मेरा बैरी विष्णु है उसकी कीर्ति गाना ठीक नहीं है बंद होनी चाहिए।

मित्री कुटंब दैत बुलाऐं, तांही छिन ही हजुर ही आऐ।
दैत कहै अब पिरोहित बुलावो, प्रहलाद कुं ध्यान भुलावौ।।१००।।

दैत्य ने अपने मंत्रियो को बुलाया वे तत्काल ही हाज़िर हुए। दैत्य ने आदेश दिया कि अब आप लोग पुरोहित को बुलावो और प्रहलाद विष्णु का भजन ध्यान करता है उसे भूला दो।

सुक्राचार ज लीए बुलाई, असुर कहै सुन हो द्विजराई।
अस्वर विद्या प्रहलाद पढावो, राजनीत नीकै समझावौ।।१०१।।

द्विजराज! मंत्रियों के कहने पर शुक्राचार्य उपस्थित हुए। दैत्य कहने लगा हे द्विजराई! आप प्रहलाद को असुरों की विद्या पढाइये। इसे राजनीति अच्छी तरह से समझाइये।

दिज ले चले राज कंवारा, मंगल साज लीये कर सारा।
पहुंचै आय जहां चटसाला, आगै पढत हुतै ताहां बाला।।१०२।।

द्विज शुक्राचार्य प्रहलाद राजकंवर को साथ में लेकर चले। उस समय मांगलिक कार्य सभी करवाये। जहाँ पाठशाला में अन्य बच्चे पहले से ही पढ़ रहे थे वही प्रहलाद को लेकर पहुँचे।

''सोरठा''

करके बहुत विधान, पुजै गणपति सुरस्वती।

दहौ विद्या वरदान, विप्र कहें कर जोड़ के।।१०३।।

प्रथम विद्याशाला में प्रवेश करने पर अनेकानेक पूजा पाठ के विधि विधान किये। विप्र ने गणेश सरस्वती को हाथ जोड़कर नमन किया। प्रहलाद को विद्या प्राप्त होवे।

''चौपई''

एह वर दीजै देवी देवा, प्रहलाद पढै. विद्या को भेवा।
उना पाटी लिखकर दीनी, सौ प्रहलाद कछु नहीं चीनी।।१०४।।

हे देवी-देव! यह वरदान दीजिये जिससे प्रहलाद अतिशीघ्र ही विद्या को पढ़लें। उन्होने पाटी लिखकर के दी किन्तु प्रहलाद ने कुछ भी ध्यान नहीं दिया।

विप्र कहै प्रहलाद सुनिजै, अक्षर धोखै विद्या भनीजै।
चितकर सुनो हृदय धर राखौ, मै पुन कहूं सोई तम भाखौ।।१०५।।

विप्र कहने लगा। हे प्रहलाद! हमारी बात सुनिये अक्षर के बहाने विद्या पढो, हम जो कहते हैं वही चित लगाकर सुनो और हृदय में धारण करो। मैं जो भी उच्चारण करता हूँ वही मेरे पीछे-पीछे उच्चारण करो।

प्रहलाद कहे पांडे सुन लहीयै, कितने अखर विद्या कहीयै।
विप्र कहै सुनौ राज कंवारा, बावन अखर विद्या विसतारा।।१०६।।

प्रहलाद कहने लगा हे पाण्डे! सुन लीजिये आपकी विद्या में कितने अक्षर है। विप्र कहने लगा हे राजकुमार! कुल बावन अक्षर ही है जिनका सम्पूर्ण विद्या का विस्तार है।

''दुहा''

प्रहलाद कहै पांडे सुनौ, बकवाद करै कुन मोह।
और पंचासु छाड़ कै, मै पढ सु अखर दोय।।१०७।।

प्रहलाद कहने लगा हे पाण्डे सुनो! आप से कौन बकवास करें। दूसरे पचासो अक्षर छोड़कर केवल दो अक्षर हरि-विष्णु को ही पढुंगा।

कण अक्षर पढसु दिज दोई, ओर पचासु पराल सम होई।

दोय अक्षर जौ हरि रस होई, तज पचास जानै छोई।।१०८।।

कण तत्व अक्षर जो पढता है वही द्विज ब्रह्मज्ञानी होता है। अन्य पचास अक्षर तो थोथा पराल जैसे है। इन हरि–विष्णु के दो अक्षरों मे हरि रस भरा हुआ है। यह अमृत रस प्राप्त हो जावे तो उन पचास अक्षरों को थोथा मान कर त्यागने योग्य है।

हरि अखर हृदै पढ राखुं, मिथ्या और काहै कु भाखु।
हरि गुन पढया गुन्या लिख जान्या, विसनु भजन मेरे मन मान्या।।१०९।।

हरि अक्षर को हृदय में पढकर रख लिया। अन्य मिथ्या अक्षर पढने का क्या प्रयोजन है? हरि के गुण पढ लिया है, लिख लिया है और धारण भी कर लिया। मेरे दिल मे विष्णु का भजन बैठ चुका है। यही मेरे मन की बात है । मेरे मन ने स्वीकार कर लिया है।

विसनु नाम मूल गहया, डाल पात फूल फल आया।
सुंवां आख्यो कुवै सु टरै, नैन हीन कुवै पर मरै।।११०।।

मैंने मूल विष्णु का नाम ग्रहण कर लिया है। मूल की सिंचाई करने से डाल, पात, फूल, फल आदि सभी आ जाते हैं। भलमूल सींचो रे प्राणी, ''किसी को ठीक मार्ग बता दे तो अपने गन्तव्य स्थान को पहुंच जाता है बीच में कुआँ खाई से बच जाता है अंधा आदमी अनजाने कुंवे मे गिर जाता है।

मिसरी गीरी गीदोड़ो जीमै, सो थोहर रस काहे कूं पीवै।
पांडे कह सीख मोह मानो, अस्वर विद्या नीकै कर जानौ।।१११।।

जो समझदार व्यक्ति मिसरी, नारियल गिरी, गुड़ आदि मिष्ठान जीमता है वह थोहर का रस क्यो पिवेगा। पाण्डे कहने लगा–हे प्रहलाद! आप मेरी शिक्षा मानो। असुरो की विद्या को सत्यकर मानों, स्वीकार करो।

''दुहा''

विद्या सब पढ लई, जद कीया नाम अभ्यास।

इमृत कौ पै पान कर, बाकी रही न पियास।।११२।।

सम्पूर्ण विद्या पढ चुके जब हरिनाम का अभ्यास कर लिया। अमृत का पान कर लिया तो फिर प्यास बाकी नहीं रही।

विप्र कही बहु भांत सू, मानी नहीं प्रहलाद।
दिज हारी घर कुं गऐ, पावैन कुं प्रसाद।।११३।।

विप्र ने प्रहलाद को बहु भांति से समझाया किन्तु प्रहलाद ने विप्र की सीख नहीं मानी। द्विज हारकर अपने घर को भोजन करने हेतु चले गये।

''चौपई''

''सखा उवाच''

पीछे सखा कहकर जोरी, कंवर सुनो विनती ऐक मोरी।
गुरु के बचन कछु नहीं मान्यो, तुम का पढे हम मरम न जान्यौ।।११४।।

गुरु के चले जाने के पश्चात प्रहलाद के सखा–मित्र, सहपाठी कहने लगे हे राजकुमार! आप हमारी एक विनती सुनो। आप ने गुरु के वचनों को कुछ भी नहीं माना। आप क्या पढे हो इसका मर्म हम नहीं जानते।

''प्रहलाद उवाच''

विस्नु नाम पाटी लीख लीनी, अखर छाडै सब दीनी।
हर हरिदै मे सतकर जान्या, और एकल मिथ्या कर मान्या।।११५।।

हरि विष्णु के नाम की पाटी मैंने लिख ली है– अन्य अक्षर सब छोड़ दिया है हृदय में हरि को सत्य जान लिया है अन्य सभी मिथ्या करके स्वीकार कर लिया है।

''सखा उवाच''

विस्नु भजन को गुण मोहि भाखो, अखर नाम को ओगण दाखौ।
अस्वर भज्या का काहा दुख होई, विस्नु भजन को सुख के हो सोई।।११६।।

सखा कहने लगे हे प्रहलाद! विष्णु का भजन करने में क्या गुण है आप कहो तथा अक्षर नाम मे क्या अवगुण है यही भी कहो। असुरों का भजन सेवा करने में क्या दु:ख होगा और विष्णु का भजन करने से कौन सा सुख होगा?

''प्रहलाद उवाच''

विसनु भजन वैकुंठ निवासा, अस्वर नाम नरक मे वासा।
लोहा नांवं असर को नाय, ले बोहर भव सागर मांय।।११७।।

हरि नांव जैसे काठ की नावै, भवसागर तै पार लंघावै। विष्णु का भजन करने से बैकुण्ठ मे निवास होगा। असुर का नाम नरक में ले जायेगा। लोहे जैसा असुर का नाम है जिस नाम से भवसागर में डुबेगा। हरि का नाम काष्ठ की नाव की तरह है जो भवसागर से पार उतार देगा।

''दुहा''

विसनु नाम है सूर सम, हृदै प्रकास अपार।
संसार नाम अंध कूप है, उर मे घोर अंधार।।११८।।

विष्णु का नाम सूर्य सम है जो हृदय मे प्रकाश करता है यह संसार अंधा कुंआँ है । हृदय में घोर अन्धकार है।

विसनु नाम चौरासी मिटै, महाकाल भैव जाय।
सुख सागर जीवन मुक्त, अभै परम पद पाय।।११९।।

विष्णु के नाम से चौरासी लाख जीव योनियो से बच जाता है तथा महाकाल का भय भी मिट जाता है सुख सागर प्राप्त करता है और जीवन मुक्त हो जाता है तथा अभय पद को प्राप्त करता है।

''चौपई''

''सखा उवाच''

कब थे भऐ असे तम ज्ञानी, नाव प्रीत हृदै मे जानी।
ऐसी सीख कहां तम पाई, सो प्रहलाद कहो समझाई।।१२०।।

हे प्रहलाद! आप कब से इस प्रकार के ज्ञानी हो गये? हरि नाम की प्राप्ति हृदय में धारण करली, ऐसी अद्‌भुत सीख तुमने कहां से प्राप्त की है? यह आप हमे समझाकर बतलावो।

''प्रहलाद उवाच''

नारद मुनि से पाए ज्ञाना, तब तै करू विसनु को ध्याना।

गुरु प्रताप नाम विसवासा, नृभै भजु साड सब आसा।।१२१।।

हे सखे! नारद मुनि से मैने ज्ञान की प्राप्ति की है। जब से नारद मुनि ने ज्ञान दिया है तब से मै महाविष्णु का ध्यान करता हूँ।

गुरु नारद जी के प्रताप से मुझे विष्णु नाम पर विश्वास है। निर्भय होकर हरि को ही भजता हूँ सभी आशाऐं-तृष्णाऐं त्याग दी है।

''सखा उवाच''

इहां नारद मुनि कहो कद आए, तमै नारद पै कब सिधाऐं।

हम रहे सदा तुमारे संगा, इहां नारद को नहीं प्रसंगा।।१२२।।

कहो प्रहलाद यहां नारद मुनि कब आये और आप नारद मुनि के पास कब गये थे? हम सदा ही तुम्हारे साथ में ही रहते हैं यहाँ पर तो नारद गुरु के आने का कोई प्रसंग ही नहीं है।

''प्रहलाद उवाच''

मम माता रिख आश्रम रही, तद हरि कथा सुनी जिन कही।

मुनी मात कूं ज्ञान सुनाया, ग्रभ थका जद मै सुन पाया।।२३।।

जब मेरे पिता जी तपस्या करने चले गये थे। तब मेरी माता ऋषि नारद जी के आश्रम मे रही थी तब मैंने हरि कथा सुनी थी जैसी मेरी मां को सुनायी थी वैसी मैने भी ग्रभ अवस्था में सुनी थी मुनि ने माता को ज्ञान सुनाया था वह ज्ञान मैने भी ग्रभ अवस्था में ही श्रवण कर लिया था।

पितंबर घन स्याम सरीर, सीस मुकट जड़त मणि हीर।

मंद हास कंवल दल नैन, भृगुलता उर लिछमी चैन।।१२४।।

उन भगवान् विष्णु के वस्त्र पीले तथा शरीर कुछ श्यामलता से युक्त है सिर पर मुकुट है जिसमें हीरे जड़े हुए है मंद मंद मुस्कराते है उनके नेत्र कमल दल के समान शोभायमान है भृगुजी ने विष्णु के वक्षस्थल पर लात मारी थी उसका निशान है तथा लक्ष्मी जिनके चरणों को दबाती है ऐसे भगवान् के दर्शन मुझे गर्भ अवस्था में ही हो गये थे।

रूप चत्रभुज वैस किसोर, मनोहारी ध्यान सदा उर मोर।

मुनि क्रिपाल हम उपर भए, तातै ज्ञान हृदै मै रहे।।१२५।।

उन देवाधिदेव भगवान विष्णु चतुर्भुज रूप सदा किशोर अवस्था में रहने वाले हैं मन को हरण करने वाले भगवान् का ध्यान सदा ही मेरे दिल में हो गया। कृपालु नारद मुनि हम पर दयालु हो गये इसलिये उनका दिया हुआ ज्ञान हृदय में स्थित हो गया।

प्रहलाद कहै सखा सुन लीजै, हरि के चरण कंवल चित दीजै।

सखा मन मे भै विचारै, विसन भज्यै असुर मोह मारें।।१२६।।

प्रहलाद कहने लगे हे सखा! सुन लीजिये हरि के चरण कमलों में अपना चित्त लगा दिजिये। यदि आप लोग मन में भय रखते हैं, असुरों से डरते हैं तो डरो मत, मुझे कोई असुर नहीं मार सकता।

प्रहलाद कहै नहीं कोई मारै, जां कै परमेंसर रखवारे।

ग्रभ मांझ कीनी प्रीतपाला, वै अब क्यू भूलै दीन दयाला। १२७।।

प्रहलाद ने कहा कि कोई किसी को मारने वाला नहीं है जिसका परमेश्वर रखवाला है जिसने ग्रभ में रक्षा की थी वह अब भी करेगा वे दीन दयालु है, क्या अब भूल गये हैं?

''दुहा''

तीन लोक जिन रचे, रिजक मौत जिन हाथ।

प्रहलाद कह मारै कवन, सदा संगाती साथ।।१२८।।

जिन्होंने तीन लोक चौदह भवनों की रचना की है उन्हीं के हाथ में जीवन और मृत्यु दोनों है। प्रहलाद कहते है कि कौन मार सकता है ? जिनके साथ मे सदा ही हरि रहते हैं।

''चौपई''

''सखा उवाच''

जो परगट सिंवरा गोपाल, अस्वर मार करे पैमाल।

हृदय मै हरि सिवरण राखा, मुख सुं नाम असर को भाखा।।१२९।।

यदि हम प्रकट रूप से हरि का स्मरण करते है तो दैत्य लोग हमें मार डालेगे। हृदय में तो हरि का स्मरण करें और मुख से नाम असुर का लिया जावे यही जिन्दा रहने का उपाय है।

''चौपई''

''सखा उवाच''

प्रहलाद उवाच

हृदै और मुख और ही गावै, साध नहीं वै चोर कहावै।
हृदै मांही मित्र कहै, मुख सुगाल सभा में दहै।।१३०।।

हृदय में कुछ दूसरी बात है और मुख से कुछ और ही कहता है वह साधु नहीं है उसे चोर कहना चाहिये तथा हृदय में मित्रता और मुख से सभा मे गाली देता है।

ताकी वचन सहै नहीं कोय, हरि प्रसन्न कीसी विध होय।
सखा कहै दइतं डर राखा, को दिन नाम नृपत को भाखा।।१३१।।

अंत समै लेसां हरि नाम, विसनु तास पासा विसराम। अन्तर कुछ और बाहर कुछ और कहने वाले के वचन असहनीय है हरि प्रसन्न इस विधि से कैसे हो सकते है? सखा कहने लगे कि हमे दैत्य से डर लगता है। इसलिए कुछ दिन नाम राजा का लिया जावे और कुछ दिन हरि को भज लेते है इस समय वर्तमान राजा का नाम ले लिया जावे और अन्त में हरि का भजन कर लिया जावे तो ठीक रहेगा।

प्रहलाद उवाच

जब घर लगै बसंदर आई, कूप खीनन को करै उपाई।
प्रहलाद कहै सखा सुन लीजै, घर जलंतो कद कूप खनीजै।।१३२।।

जब घर में आग लग जाती है तब कुँआ खोदने का उपाय प्रारम्भ करना कहां की बुद्धिमानी है? प्रहलाद कहने लगा हे मित्रों! घर जल रहा हो उसे बुझाने के लिये कुंआ कब खुदेगा ऐसा ही जीवन है।

जागत चितवै सुपनै आवै, पहलु भज अंत हरि धावै।
प्रहलाद कहै मन कुं तजियै, नृभै हुय नारायन भजियै।।१३३।।

काचै मत भक्त नहीं होई, तन मन अरपै लहै हरि सोई। जागृत में चिंतन किया हुआ वही स्वप्न मे आता है इसलिये प्रथम भजन किजिये अंत में हरि की तरफ बढें। प्रहलाद कहने लगा मन का भय छोड़ दिजिये। निर्भय होकर नारायण का भजन करें। यदि भक्त का मत–विचार कच्चा है तो फिर भजन नहीं होगा जो तन, मन, धन, परमात्मा को समर्पित कर देता है वही हरि की प्राप्ति करता है।

''सखा उवाच''

दैत त्रास हृदै मै आवै, असुर इसो विन मोत मरावै।
हम तो बालुक कती एक बाता, यातै तीन लोक मरे पाता।।१३४।।

सखा कहने लगे हे प्रहलाद! दैत्यो द्वारा दी गयी त्रास –कष्ट हृदय में लगती है ऐसे भयंकर असुर यहां पर विद्यमान है जो बिना मोत ही मरवा देगे। हम तो बालक है हमारी क्या औकात है ? इन के द्वारा तो तीन लोक भी मारे जा सकते हैं।

''दुहा''

सुरनर सब ही संक ही, सुण दाणु की त्रास।
सखा कह प्रहलाद सु, किम आवै विसवास।।१३५।।

विकराल दैत्यों से तो सुरनर आदि सभी दु:खित है। दानवों की त्रास–मार भयंकर होती है। हे प्रहलाद! आपकी बातों से हमें विश्वास कैसे आयेगा?

''प्रहलाद उवाच''

आगौ पिछौ हुय रहै, मनसा रहै नायं।
कायर काचा मता, पलक पलक के मांय।।१३६।।

बालक कुछ निर्णय पर नहीं पहुँच रहे हैं। आगे बढ़े या पीछे हटे। मन में एकाग्रता–स्थिरता नहीं है। स्थिति डावांडोल हो रही है। कायर–डरपोक लोगों का सिद्धान्त कच्चा होता है। वे लोग पलक, क्षण–क्षण में बदलते रहते हैं।

''चौपई''

आग्यान भरम भयो उर मांही, तब लग हृदै थिरता नाही।

भयो भरम विसवा वीसै, भूले इष्ट दूसरो दीसै।।१३७।।

जिनको जब तक ज्ञान नहीं हुआ है उनको हृदय मे भ्रम हो गया है तब तक हृदय मे स्थिरता नहीं है। उन्हें शत प्रतिशत भ्रम हो गया है सत्य असत्य का विवेक नहीं है, वे लोग भूले हुए हैं उन्हें, अपना इष्ट दूसरा ही दिखता है। अति आलस भुलावै भूला''

कांच महल स्वांन पग धरै, भरम्यौ कूकर भुंस भुंस मरे।
जाहां झाकै जांहा चहूं दैखै, अपनो रूप आप भर लेखे।।१३८।।

भ्रम क्या है बतलाते है–जिस प्रकार से काँच के महल मे कुत्ता प्रवेश कर जाता है वह अपनी ही छाया प्रतिबिम्ब को देखकर उसे दूसरा कुत्ता मान कर भौं भौं कर मर जाता है उसी प्रकार से मानव भी माया में प्रवेश करके भ्रमित हो जाता है सत्य असत्य का विवेक नहीं रहता । कुत्ते की तरह ही मोह माया में भ्रमित होकर मर जाता है।

भरम्यौ केहर देख्यौ कूप, प्रति बिम्ब जानै दूसरो रूप।
सिंघ सबद कूप मै हुवौ, भरम्यौ केहर कूवै पड़ मुवौ।।१३९।।

भ्रमित हुआ सिंह कुएँ पर गया वहां जल में अपना ही प्रतिबिम्ब देखा। भ्रम के कारण दूसरा सिंह जल में दिखाई दिया। शेर ने गर्जना करी वैसी ही सामने की गर्जना से कुआँ दहाड़ उठा उसे तब पूर्ण विश्वास हो गया कि इस कुएँ में दूसरा शेर है छलांग लगाई और कुएँ में गिर पड़ा तथा कुंएँ में गिर कर मर गया यही दशा ज्ञान विहीन नर नारी की होती है।

है किसतुरी मृग ही पासा, भरम्यो वन वन सुगंधै घासा।
है मांही अरू नहीं पिछानै, यूं भूले इष्ट आंन ही जानै।।१४०।।

हिमालय में किस्तुरी मृग होता है उसकी नाभि में सुगन्धित किस्तुरी हेाती है वह मृग किस्तुरी को सुगन्ध ढूंढने के लिये वन वन में भटकता है वह अन्दर ही है किन्तु पहचान नहीं है ऐसे ही मानव भ्रमित होकर कल्पित देवताओं को ही अपना इष्ट मानते हैं।

विसनु व्यापक घट घट मांही, ज्ञान विचारो दूजो नाही।

पूर रहयौ सब ब्रहमंड मांही, हरि विन तिल भर खाली नाही।।१४१।।

विष्णु घट घट मे व्यापक है विचार करें, विना विष्णु के यहाँ कुछ भी नहीं है सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में भरा हुआ है जीवन गति प्रदाता विष्णु ही है श्वांस रूप से विष्णु की ऊर्जा शक्ति को प्रतिक्षण ग्रहण करते हुए जीवन धारण करते हैं। हरि सर्वत्र समाया हुआ है तिल जितनी जगह भी हरि के बिना नहीं है।

अपनो इष्ट आप मै जानो, द्वितीयै भरम हृदै तै मांनो।
कीर भरम नलनी कु गही, बंध्यौ आप बांध्यौ को नांही।।१४२।।

अपना इष्ट प्राप्तव्य परमेश्वर अपने आप ही में है ऐसा जानो । अनेक ईश्वर या ईश्वर असीव है ऐसा भेद हृदय से हटा दिजिये। तोता भ्रमित होकर नलनी–पाइप को पकड़ लेता है स्वयं ही बन्धन में बन्ध जाता है नल को पकड़ कर उल्टा लटक जाता है वह सोचता है कि मुझे किसी ने बांध लिया है किन्तु भ्रम वश स्वयं ही बन्धन को प्राप्त हो गया है। (तोता पकड़ने वाला एक बांस की नली में रस्सी डालकर बांध देता है तोता आता है और उस नली पर बैठता है वह नली को पकड़ता है और उल्टा लटक जाता है उस नली को छोड़ता नहीं है उल्टा लटका रहता है और पकड़ा जाता है)

यूं भूल आतमा आप बंधाना, जलम मरण दुखै तै नाना।
झूठो भरम अरू मोह पसारा, हरि बिन कौ आतम आधारा।।१४३।।

तोते की भांति भूल–भ्रम से आत्मा भी बन्धन में आ जाती है किन्तु आत्मा स्वरूप तो जन्म मरण, दुख से अलग है यह संसार झूठा भ्रम से ग्रसित होकर रहा है मोह– मेरा इस बन्धन में बंध रहा है हरि बिना आत्मा का आधार–सहायक कोई नहीं है।

यौ जुग मृग तृसना जल जानु, भरमत ही मृग तजै पिरानु।
सीत कोट ऐसौ संसारा, सुपनै संपत भरम पसारा।।१४४।।

इस प्रकार से मरूभूमि में सूर्य की किरणों से दूर से जल चकमता हुआ दिखाई देता है ऐसा आभास होता है कि जल से तालाब भरा पड़ा है। मृग जल पीने के लिये दौड़ता है ज्यो ज्यो आगे दौड़ता है वह त्यूं त्यूं आगे ही आगे दिखाई देता है। प्यास से व्याकुल भागता हुआ अपने प्राण तज देता है ऐसा ही यह संसार है जहां पर जीवन भर भाग दौड़ लगी रहती है किन्तु कुछ भी प्राप्त

नहीं होता जिस प्रकार से स्वप्न मे अपार माया धन दौलत हाथ में आता है किन्तु जागने पर सभी कुछ चला जाता है स्वप्ने की माया हाथ नहीं लगती है।

इन्द्री सवारथ सुख कै कर मै, तातै जीव चौरासी भरमै।
दिढ विसवा वीस हृदै राखौ, प्रेम प्रीत सुं हरि रस चाखौ।।१४५।।

इन्द्रियों के विषय रस सुख में रत हुआ ऐसा जीव चौरासी जीव योनियो में भटकेगा। शत प्रतिशत हृदय में दृढ़ता रखो। प्रेम प्रीतभाव से हरि रस का आस्वादन करो।

विसन विना अपनो को नाही, समझ विचार देख मन मांही।
हरि सिवर्या अस्वर कहा डरावै, महाकाल सुन सुख पावै।।१४६।।

हरि विष्णु विना अपना संसार में कोई नहीं है। इस वार्त्ता को समझो और विचार करके देखो हरि का स्मरण करने से असुर कैसे डरा सकते है? हरि का स्मरण सुनकर महाकाल मृत्यु भी प्रसन्नचित हो जाती है।

''दुहा''

सोवत ही जाग्या सखा, भयो अग्यान तै प्रकास।
निरभै हरि हरि कहत है, छाड जगत की आस ।।१४७।।

अज्ञान अन्धकार में सोये हुए प्रहलाद के सखा जग गये। अज्ञान रूपी अन्धकार से ज्ञान रूपी प्रकाश हो गया। निर्भय होकर हरि हरि का उच्चारण करने लगे और जगत की आशाएं छोड़ दी।

''चौपई''

सखा सीख मान सब लही, हरि सिवरण लगा सही
अस्वर विद्या चटड़ा सब त्यागी, उर मे प्रीत विस्नु सें लागी।।१४८।।

सखा मित्रों ने प्रहलाद की शिक्षा स्वीकार कर ली और हरि का स्मरण करने लगे। उन असुर बालकों ने असुरों की विद्या त्याग दी और हृदय में विष्णु से प्रीत लगा ली।

जिन प्रहलाद कुं गुरकर मानै, निरभै विसनु विसनु बखानै।
प्रसाद पाय विप्र जब आऐ, हरि नाम जपत है सखा सवाये।।१४९।।

उन विद्यार्थी बालकों ने प्रहलाद को अपना गुरु स्वीकार कर लिया। निर्भय होकर विष्णु-विष्णु का बखान करने लगे। विप्र आचार्य भोजन करके वापिस आये तो देखा वहां पर प्रहलाद सहित सभी बालक हरि नाम का जप-उच्चारण कर रहे हैं।

ततकार लगी हर नाव की, विसनौ विसन भणंत।
पांडे देखे जल बले, हरि हरि सबद भणंत ।।१५०।।

हरिनाम की तत्व कार-ओंकार की ध्वनि लगी थी। (विष्णु ही मन विष्णु भणियो, विष्णु ही मन विष्णु रहियो।।सब्दवाणी।।) पंडित जी ने देखा और ईर्ष्या से जलने लगे। ये लोग विपरीत हरि का स्मरण कर रहे थे।

खीज वचन दिज ऐसै कही, प्रहलाद सीख काहां तै लही।
कुल विद्या कुं दीनी दाटी, काल्हा कुमल पढ़यौ सुऐ पाटी।।१५१।।

द्विज-पुरोहित ने क्रोधित होकर इस प्रकार से कहा-हे प्रहलाद! यह पाटी तुमने कहां से सीखी है ? अपने कुल परंपरा से प्राप्त विद्या को रोक दिया है। तुम अज्ञानी मूर्ख, कुमति हो ऐसी पाटी विद्या कहां से सीखी है?

पिता कोप रीसाय तोई, क्यूं असौ पढे घर मे दुख होई।
पिता प्रसन्न सो विद्या पढीयै, और सुरन की विद्या छडियै।।१५२।।

हे प्रहलाद! तुम्हारे पिता क्रोधित होकर तुम्हे कष्ट दायी होंगे ऐसी बात ही क्यों पढ़ी जाये जिससे घर ही में दु:खदायी हो जाये? जिस विद्या से पिता प्रसन्न हो जाये वही विद्या तुम्हे पढ़नी चाहिये। अन्य देवताओं की विद्या छोड़ देनी चाहिये।

पढ़ुं पाठ प्रसन्न हुवै सभा, तातै पावै जीव विसरामा।
कलप वृछ तज संबल सेवै, इमृत छाड़ विष कुन लेवें।।१५३।।

प्रहलाद ने बतलाया कि मैं वही विद्या पढता हूँ जिससे सभा प्रसन्न हो जाती है उससे जीव अनन्त समय तक जन्म मरण से छूट जाता है अनन्त शून्य मे विश्राम पाता है यदि किसी के पास कल्पवृक्ष है और उसको छोड़कर सेमल (शाल्मली वृक्ष) की सेवा करता है वही मूर्खता होगी। अमृत को छोड़कर विष वृक्ष की सेवा करता है वही अज्ञानता ही है मृत्यु का कारण भी है।

असुर विद्या असुध है, सुध नीको हरि नाम।
काम धेन का पैं पीया, काहां खरी सूं काम।।१५४।।

असुरों की विद्या अशुद्ध है और हरि का नाम सुर विद्या ही श्रेष्ठ है यदि किसी को कामधेनु का दूध पीने को मिल जाता है तो फिर खरी–गधी के दूध से क्या प्रयोजन है?

बहु उपदेश विप्र जु दीना, सो प्रहलाद कछु नहीं चीना।
दिज करी पुकार अस्वर के आगै, प्रहलाद सीख एको नहीं लागै।।१५५।।

विप्र ने प्रहलाद को बहुत से उपदेश दिये किन्तु प्रहलाद ने एक भी उपदेश को स्वीकार नहीं किया द्विज आचार्य ने हिरण्यकशिपु को प्रहलाद के बारे में बतलाया और कहा प्रहलाद ने मेरी एक भी बात नहीं मानी है।

बिगड़े आप अरू सखा बिगाड़ै, सीख न माने बहुविध ताड़े।
अस्वर लीनो प्रहलाद बुलाई, बुझे गूझ गोद बैठाई।।१५६।।

प्रहलाद आप तो बिगड़ ही गया है और अपने सखा–मित्रों को भी बिगाड़ दिया है अनेक प्रकार की ताड़ना देने पर भी प्रहलाद शिक्षा धारण नहीं करता है इस प्रकार की विप्र से वार्ता सुनकर दैत्यराज हिरण्यकशिपु ने प्रहलाद को अपने पास बुलाया और गोदी में बैठाया प्यार करते हुए गूढ, गुप्त, गहरी बाते पूछने लगा।

मेरै लाड तुमारो भारी, विद्या कहो पढयौ तम सारी।
ऐसी विद्या पढयौ उर मांही, तुमरे कुल मे पढयौ को नाही।।१५७।।

दैत्य कहने लगा हे बेटे! मैं तुम से प्यार बहुत करता हूँ आप बताये कि सम्पूर्ण विद्या पढी भी होगी। प्रहलाद कहने लगा हे पिता जी। मैंने ऐसी गंभीर विद्या पढ ली है और हृदय में धारण भी कर ली है आपके कुल में भी ऐसी विद्या कोई नहीं पढ़ा है।

श्रवण कीरतन सुमरण करूं, चरण से ॐ पूजा मन धरूं।
विसनु बंदन दास सखायन, आतम अरपण करूं नवैदन।
नवध्या कर प्रेमा मन लाउं, इस विध सदा विसनु कु ध्याऊ।।१५८।।

हे पिता जी! मै हरि की महिमा श्रवण, कीर्तन एवं स्मरण करता हूँ। हरि

के चरणों की सेवा पूजा मन से करता हूँ। विष्णु की वन्दना मित्र तथा दास भाव से करता हूँ स्वयं आत्मभाव से समर्पित होकर निवेदन करता हूँ। नौ प्रकार की भक्ति में प्रेम से जुड़ता हूँ इस प्रकार से सदा विष्णु की ही वन्दना निवेदन करता हूँ यही मेरा ध्यान निवेदन है।

एह विद्या मेरे मन माना, सुनकर दैत बोहोत उकलाना।
बोलै असुर दैत बहुत्रासा, मै दिज कीयौ तोर विसवासा।।१५९।।

यही विद्या मेरे मन को अच्छी लगती है ऐसी वार्ता सुनकर दैत्यराज बहुत ही व्याकुल हुआ। असुर ने वचनों द्वारा बहुत ही त्रास दी। मैंने इन द्विज पर विश्वास किया यही बड़ी भूल हो गयी।

कंवर कुं नीकै न पढायौ, मम बैरी कौ ग्यान सिखायौ।
विपर याकुं फेर ले जावौ, राजनीत नीकै समझावौ।।१६०।।

इन विप्रो ने राजकुमार को ठीक से नहीं पढाया। मेरे बैरी हरि का ज्ञान सिखा दिया। हे विप्रो! इस प्रहलाद को फिर से वापिस ले जाओ और राजनीति अच्छी प्रकार सिखाओ।

दंड दे चटसाल रखावौ, साम दांम दंड भेद सिखावौ।
दिज ले चले चटसाला, उं इ नामासी लिखो तम बाला।।१६१।।

इसे दण्डित करके पाठशाला में रखो और साम, दाम, दण्डभेद से आसुरी विद्या सिखाओ। द्विज प्रहलाद को लेकर पाठशाला में चले।

असुर गुरु ने कहा प्रहलाद! असुरों की उल्टी विद्या लिखो।
प्रहलाद कहे लिखु गोपाल, हरि बिन कून झंकै जंजाल।
त्रास दई पांडे बहु आई, प्रहलाद अंग लगी नहीं काई।
सुक्र पुत्र सु नांह डराना, निरभै सिवरै श्री भगवाना।।१६२।।

प्रहलाद ने कहा–मैं गोपाल नाम लिखता हूं। बिना हरि नाम के कौन आल बाल बकेगा। पांडे ने प्रहलाद को अनेकों प्रकार से कष्ट दिये किन्तु प्रहलाद भयभीत नहीं हुआ। निर्भय होकर श्री भगवान् का स्मरण करने लगा।

''दुहा''

''विप्र उवाच''

क खै ग घै सब साध ले, ओम नमो सिध आद।

बावन अक्षर कंठ कर, लिखौ कंवर प्रहलाद।।१६३।।

क ख ग घ आदि सभी अक्षरो कों सिद्ध याद कर ले। तथा ओम नमो सिध आदि भी इस प्रकार के कुल बावन अक्षर कण्ठस्थ कर ले और यही लिखो प्रहलाद।

प्रहलाद उवाच

'' चौपई''

झूठी विद्या साच कहावै, कूकंस कुटैण नहीं पावै।

अक्षर दोय पढ़ा मै आदू, पांडे कहा करे बकवादूं।।१६४।।

झूठी विद्या सच्ची नहीं हो सकती। झूठ को आप लोग सच्ची कहते हो तो वह झूठ ही रहेगी। कूकस-थोथा भूस कूटने से कुछ भी कण तत्व की प्राप्ति नहीं हो सकती। मैंने तो आदि दो अक्षर हरि-विष्णु पढ लिया है। हे पाण्डे! किसलिए बकवास करता है।

''विप्र उवाच''

सुर विद्या तुमरे काह लेखो, सोच विचार हृदै मै देखो।

तुम पिता कौ भ्रात जु मारयौ, तां बैरी को नाम उचारयौ।।१६५।।

हे प्रहलाद! सुर-देव विद्या से तुम्हे क्या लेना देना है ऐसा सोच विचार कर हृदय मे देखो तुम्हारे पिता जी के भ्राता हिरण्याक्ष को जिन विष्णु ने मार डाला था। उस वैरी का नाम उच्चारण कर रहे हो।

तुम प्रहलाद कछु नहीं सोचो, काहा कहूं महामत पोचौ।

नाचै कूदै लोक रिझाही, ए राज कंवर के लछन नांही।।१६६।।

प्रहलाद आप कुछ नहीं सोचो आपकी महामति-बुद्धि ही अल्प है। मैं क्या कहूं कौन सुनता है? नृत्य करना, कूद-फांद करना, लोगों को रीझाना ये सभी राजकुमार के लक्षण नहीं हो सकते।

मृदंग ताल पखावज बजावै, हाथ मजीरा हरि जस गावै।
नृप कंवार यहु सांग बनावै, हम लाजै तोह लाज न आवै।।१६७।।

हाथ मे मंजीरा, मृदंग, ताल, पखावज बजाते हुए हरि यशगान करता है नृप कुमार यह नाटक करता है। इसे देख कर हम लज्जित हो जाते हैं किन्तु इसको लज्जा नहीं आ रही है।

साम दाम दंड भेद विचारै, सुरनर कंपै दिष्ट निहारै।
पिसण मार करै प्रहारो, सो कहीयै नृप राज कंवारौ।।१६८।।

हम साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति का विचार करते हैं हमारी दृष्टि सुर नर पर पड़ जाये तो कांपने लगते हैं उन्हें हमारे पिसण–राक्षस प्रहार कर के मार डालते हैं उसी नृप दैत्यराज हिरण्यकशिपु का पुत्र यह प्रहलाद है जिनके विपरीत चलता है।

''दुहा''

दसुं दिसा कुं जीत कै, पीसण लगावै पांय।
अनवी नवावै दंड दै, सो नर पकंबर कहाय।।१६९।।

दशों दिशाओं को जीतकर दैत्य लोग उन्हें अपने चरणों में डाल देते हैं जो अकड़ लोग है उन्हेंझुकाते हैं। दण्ड देते हैं ऐसे दैत्य जन ही पकंबर पीर देव कहलाते हैं।

''चौपई''

राजकाज कछु न परसो, भरम्यौ फीरै बावरो जैसो।
राजकाज नीति कुछ नहीं जानता है भ्रमित होकर बावले–पागल जैसा भटकता है।।

''प्रहलाद उवाच''

भरम्यौ करे आन की सेवा, तज विसनु इष्ट निज देवा।।१७०।।

प्रहलाद कहने लगा– भ्रमित तो वह जन है जो अपने इष्ट देव को त्याग कर आन देव–कल्पित देवता की सेवा–पूजा करता है मै तो इष्ट देव विष्णु की सेवा करता हूँ फिर भ्रमित कैसे हो सकता हूँ?

भरम्यो बोहत करै पाखंड, हरि वेमुख फिरै नवखंड।
नांव बिना श्रब भरम ही जानु, पांडे तब मै कहा पढे पुरानु।।१७१।।

भ्रमित जन तो वह होता है जो बहुत ही पाखण्ड करता है। हरि से विमुख होकर नवखंडो मे भटकता है। जिसने हरि का नाम नहीं लिया है वह जो भी करता है वह भ्रम ही है। हे पाण्डे! तब आप यह बतलाऐं की मैने कौन सा पुराण पढ लिया है जो आप मुझे भ्रमित बतला रहे है।

विप्र तमतो छड़े अबोध, हमकुं कांहा सिखावो बोध।
भरम्यो आप कांहा भरम भाजै, साच झूठ की सिध न जानै।।१७२।।

हे विप्र! आप तो बिल्कुल ही अबोध है हमारे को बोध ज्ञान क्यों दे रहे हो? स्वयं ही भ्रमित होगा तो दूसरे के भ्रम को कैसे मिटा सकता है आप सत्य और झूठ को कैसे जान सकते है?

भरम्यौ आप औरा नै भरमावै, दिस भुल्यो काहा दिसा बतावै।
पुरब गंग पिछम दिस जावै, दूर पड़े गंगा कांहा ते न्हावै।।१७३।।

स्वयं भ्रमित होगा तो दूसरो को भी भ्रमित करेगा। दिशा के ज्ञान से भ्रमित हो जायेगा। तो दूसरे को ठीक दिशा कैसे बतलायेगा? गंगा पूरब मे बहती है किन्तु दिशा भ्रमित पुरुष पश्चिम को जाता है विपरीत दिशा में जाने वाला गंगा में स्नान कैसे कर पायेगा।

यूं तम भरमै विध अजाना, परमेसर सुं नीही पीछाना।

इस प्रकार से हे विप्र! आप लोग भ्रमित हो गये है इसलिये परमेश्वर की पहचान नहीं कर सके।

''विप्र उवाच''

तुमरा पिता सब दिसा जीता, सुरनर नागर है भै भीता ।।१७४।।

हे प्रहलाद! तुम्हारे पिता हिरण्यकशिपु ने सभी दिशाओं को जीत लिया है उनसे सुरनर नागरिक राजा आदि सभी भयभीत है।

दुनिया सब ही संका मानै, हरि कुं छाड हिरणकस जानै।
पूत पिता को जो जगावै, सोई जिग मे सपूत कहावै।।१७५।।

दैत्यराज तुम्हारे पिता से सम्पूर्ण दुनियां डर से शंकित है। हरि को छोड़कर हिरण्यकशिपु को ही जानते हैं और सेवा भजन करते हैं। पुत्र वही सुपुत्र है जो अपने पिता को जगत् मे प्रसिद्ध कर दे।

मैह मण्डल मै मौत न जांकी, आज्ञा पालौ तांह पिता की।।१७६।।

जिसकी मही मण्डल में मृत्यु नहीं है। उस दैत्यराज पिता की आज्ञा माननी चाहिये।

''प्रहलाद उवाच''

मात पिता है सिरजण हारा, हरि बिन सबही झूठा सारा।
साचा हरि हृदै मै राखु, झूठो पिता काहे कुं भाखूं।।१७७।।

सच्चे माता पिता तो सृजनहार भगवान विष्णु ही है बिना हरि के सम्पूर्ण संसार ही झूठा है। सच्चिदानंद रूप हरि का मैं हृदय में स्मरण करता हूँ।

''विप्र उवाच''

सुगरो गुरु आयस सिर धरै, नुगरो गुर कौ कहयौ न करै।
नहीं कीजै बहु वाद विवादू, हमरो वचन मान प्रहलादू।।१७८।।

सुगरा व्यक्ति गुरु की आज्ञा शिरोधार्य करता है तथा नुगरा व्यक्ति गुरु का कहा हुआ नहीं करता है। हे प्रहलाद! अधिक वाद-विवाद न करो और हमारे वचनों को मानों।

''प्रहलाद उवाच''

''दुहा''

एक हरि की भक्ति बिन, नुगरो सब सैंसार।
सुगरो सोई जानीयै, सिवरै सिरजण हार।।१७९।।

एक हरि की भक्ति बिना, सम्पूर्ण संसार ही नुगरा है। सुगरा उसी की जानो जो सृजनहार हरि-विष्णु का स्मरण करता है।

''कवित''

लगी नांव सूं प्रीत, चित मौह अवर न आवै।

कांहा करे बकवाद, बावरे कही वै सुनावै।
हरि रंग लागौ मौह, रंग अवर न लागै।
जिन पीयौ पीउख, विस नहीं इमृत आगै।
रत मतवारे नांव के, मिथ्या वाद न भाव है।
प्रहलाद कहै पांडे सुनो, निसदिन हरि गुण गावै ही।।१८०।।

प्रहलाद कहने लगा हे पाण्डे! अब हरि के नाम से प्रीत लग चुकी है मेरे चित–मन मे दूसरा कुछ भी अच्छा नहीं लगता है, अन्य किसी प्रकार की बात मेरे मन मे आती ही नहीं है। हे विप्र! आप लोग क्यो बकवास करते है? बावले हो गये है ये अपना ज्ञान किसको सुना रहे है? मेरे को तो हरि का रंग लग गया है। अन्य रंग अब कैसे चढेगा? जिसने हरि नाम अमृत पान कर लिया है। वह विष पान क्यो करेगा? अमृत की बराबरी विष नहीं कर सकता। मै हरि नाम मे रत होकर मतवाला हो गया हूं। मुझे मिथ्या वाद– विवाद अच्छा नहीं लगता। प्रहलाद कहने लगा। हे पाण्डे! श्रवण करो मैं निस दिन हरि के गुणो का ही गान करूंगा।

''चौपई''

कंवर सुनौ विनती एक मोरी, बार बार मै कहुं नीहोरी।
पिता तुमारो मारै तौही, दैत बुरो त्रास दै मोही।।१८१।।

विप्र कहने लगा हे प्रहलाद! हे कंवर! मेरी एक विनती सुनो। मैं आपको बारंबार विनती करते हुए कहता हूं तुम्हारा पिता दैत्य तुम्हें मारेगा। दैत्य भयंकर कुकर्म करने वाला है वह तुम्हे मारेगा। और मुझे भी बहुत प्रकार से त्रास–दण्ड देगा।

''प्रहलाद उवाच''

मारै कौन जो राखे दैयाला, जिन ग्रभ मांझ कीनी प्रितपाला।
सांडे मुरगे बहुविध कही, प्रहलाद सीख एक न लेही।।१८२।।

कौन मार सकता है, जो दयालु भगवान रक्षा करने वाला है। जिन्होंने गर्भवास में रक्षा की थी। सण्ड और अमर्क ये दोनों शिक्षक थे उन्होने बहुत प्रकार से प्रहलाद को समझाया, किन्तु प्रहलाद ने उनकी एक भी सीख–शिक्षा स्वीकार नहीं की।

भैय विनती कर गए दिजहार, जाय पुकारे राज द्वार।
पटकी पाग नृप के आगे, कंवर सीख एको नहीं लागै।।१८३।।

बारंबार विनती करके द्विज हार गये और राजदरबार में जाकर पुकार करी। अपनी पगड़ी सिर से उतार कर नृप के आगे पटक दी क्षमा मांगते हुए कहा हे नृप! आपके कंवर प्रहलाद ने हमारी एक भी सीख नहीं मानी है।

हम पचहारे मांनै नांही, अब कछु दोस न हमरे मांही।
भैय त्रास एकौ नहीं मांनै, निरभै विसनों विसनु बखानै।।१८४।।

हे राजन्! हम कोशिश करके हार गये हैं, किन्तु हमारी बात मानता ही नहीं है आप हमें कुछ भी दोष नहीं दे सकते। जो कुछ भी हम से हुआ वही किया है। हमने भय, त्रास दिखाई तो भी एक भी नहीं मानी। निर्भय होकर विष्णु विष्णु का उच्चारण–ध्यान करता हैं।

अस्वर सुनत ही दाझन्यौ अंगा। टूक टूक करू तन भंगा।
मंत्री कहै पुत्र घर सोभा, ऐसो कबहु नहीं कीजै छोभा।।१८५।।

असुर ने वार्त्ता सुनी तो उनका अंग क्रोध रूपी अग्नि में जलने लगा। कहने लगा इसके अंग को काटकर टुकड़े–टुकड़े कर दूंगा। मंत्री कहने लगा हे राजन! आप ऐसे कठोर वचन ना बोलो। पुत्र घर की शोभा है आप किसी प्रकार का क्षोभ न करो।

''दैइत उवाच''

सुत सै सोभा इधक बिराजै, जैसे किनक कान छिव छाजै।
तूटै कांन किनक काहा करीयै।।१८६।।

यह सत्य है कि पुत्र से घर की शोभा बढ़ती है जैसे स्वर्ण आभूषण पहनने से कांनो की शोभा बढ जाती है, किन्तु हे मंत्री! वह सोना भी किस काम का जिससे कान टूट जाये (वह खेती ही किस काम की जिसके करने से बैल ही मर जाये।)

''सोरठा''

इण सुत सै भलौ अउत, मेरो कहयौ न राख ही।
कांही करू इण पूत, नाम विसन कौ भाख ही।।१८७।।

दैत्य कहने लगा इस पुत्र से तो मैं निपुता ही भला हूँ। ऐसा पुत्र किस काम का जो पिता का कहना नहीं मानता। इस पुत्र का मै क्या करूं ? जो विष्णु का नाम लेता है।

''दूहा''

कीयो हुकम कुवाला कुं, सैहर ढंढोरौ फेर।
मारन काज प्रहलाद कुं, सब कुं लावौ टैर।।१८८।।

दैत्यराज ने उल्टा–विनाशक हुक्म करते हुए कहा–कौन शहर मे ऐसा है जो प्रहलाद को मार सके सभी को बुलाकर लाओ। नगरी में सूचनार्थ ढिंढोरा बजवा दो।

''चौपई''

जो प्रहलाद नै मारै आई, जां पर कोप करे नृप राई।
अस्वर आये ले ले सम सेर, प्रहलाद लीयो चहुं दिसैतै घेर।।१८९।।

जो प्रहलाद को बचायेगा उस पर नृप भयंकर कोप करेगा। असुर लोग अपने शूरवीरों को लेकर आ गये और प्रहलाद को चारों दिशाओं से घेर लिया।

छूरी कटारी ले तलवार, सींग सहथी करै प्रहार।
तुपक तीर बावै बहुतानी, मारो मार उचारै बानी।।१९०।।

दैत्यों ने प्रहलाद को मारने के लिये छूरी, कटारी, तलवार, सींगी, सहथी आदि द्वारा प्रहलाद पर प्रहार करने लगे। तीर, तुपक भी बहुत प्रकार से चला रहे थे। मुख से मारो–मारो का शब्द उच्चारण कर रहे थे।

जहर प्याला पावै आन, प्रहलाद करेजु इमृत पान।
श्रप अंग दीन्है लिपटाई, कुंजर दीयै झुकाई।।१९१।।

प्रहलाद को जहर का प्याला पिलाया वह हलाहल जहर अमृत करके पी गये। प्रहलाद के शरीर पर सांप लिपटा दिये तथा हाथी ऊपर चढा दिये गये ।

संकल सांडेसि पे चालाहि, ईट पखान चलावै भाल ही।
अस्वर दीवी चहुं दिख तै मार, प्रहलाद अंग नहीं लगा लींगार।।१९२।।

जंजीर–संकल संडासी पर चलाने लगे तथा ईंट–पत्थर से मारने लगे

असुरों ने चारों दिशाओं से प्रहलाद पर मार प्रहार कर दी, किन्तु प्रहलाद के शरीर पर थोड़ी-सी खरोंच तक नहीं आयी। (पुष्प समान लगी सब चोट, निरभै रहयौ नारायन औट।)

घाव एक लागौ नही, दैत रहै पचहार।
किंचत संक न मान ही, नारायन आधार।।१९३।।

सम्पूर्ण दी जाने वाली चोट पुष्प के समान लगते ही कोमल हो गयी जिन्होंने एक नारायण का सहारा ले लिया था। एक भी घाव लगा नहीं तब दैत्य भी पच पच कोशिश करके हार गये। प्रहलाद ने कुछ शंका नहीं मानी क्योंकि उनका सहारा केवल नारायण विष्णु ही है।

''चौपई''

दैत सुणी उठी उर आगी, प्रहलाद चोट एको नहीं लागी।
मंत्र पढयौ कंवरो को सही, अस्त्र सस्त्र लागै नही।।१९४।।

दैत्य हिरण्यकशिपु ने जब यह सुना कि प्रहलाद के किसी प्रकार की चोट नहीं लग रही है तब दैत्य ने कहा कि राजकुमार अवश्य ही कोई मंत्र पढ रहा होगा इसलिये अस्त्र-शस्त्रों की चोट नहीं लग रही है।

दैत कहै लेजो जल मांई, सिलता मांही दहौ बहाई।
लौह जंजीर पांव मे डारा, ले डारयौ मंझी जल धारा।।१९५।।

दैत्य कहने लगा-इन्हें जल में ले जाओ और सरिता-नदी में बहा दो दानवों ने प्रहलाद के पांवों में लौह की जंजीर-सांकल डाल दी और ले जाकर जल की धारा के बीच में डाल दिया।

जल मै डुबत कीयो हरि याद, जले विसनु कह ये प्रहलाद।
लग हुत पांव तौ गीरे पहलाद, पदम तिरै ज्यूं पहलाद।।१९६।।

जल में डुबते हुए प्रहलाद ने हरि को याद किया जल में भी विष्णु है या जल ही विष्णु रूप है विष्णु-विष्णु उच्चारण प्रहलाद ने किया। पांव धरती पर लगते हुए प्रहलाद जल में गिर गया। जिस प्रकार से पद कमल का फूल जल के ऊपर तैरता है उसी प्रकार प्रहलाद भी जल पर तैरने लगा।

अस्वरां के मन इचरज हुवौ, ऊंजल मांही प्रहलाद न मुवै।

अस्वर खीज कीयौ हंकारो, अंधा कूप प्रहलाद ही डारो।।१९७।।

असुरों के मन में आश्चर्य हुआ कि जल में भी प्रहलाद नहीं मरा। असुरों ने क्रोधित होकर हुंकार किया और अन्धे कुएं में प्रहलाद को डाल दिया

दैत दूत कहें समझाई, अब प्रहलाद बच गौ नाई।
अस्वर जपै जो एके बारी, नृप कुसी हुय उं लहै उचारी।।१९८।।

दैत्य के राजदूतों ने अब की बार समझाते हुआ कहा कि इस बार प्रहलाद बचेगा नहीं। असुर जो भी कार्य करते हैं वह एक ही बार में काम तमाम कर देते है ऐसी वार्ता श्रवण करके राजा इस प्रकार से खुशी होकर कहने लगा।

''प्रहलाद उवाच''

विसनु खुशी हुवै कर सोई, तातै मार सिकै नहीं कोई
अंध कूप मै दीनो डारी, दाट्यौ कूप कीयौ धूल भारी।।१९९।।

प्रहलाद कहने लगा जिस पर परमात्मा विष्णु प्रसन्नचित हो जाते हैं उसे कौन मार सकता है, अंधे कूएँ में प्रहलाद को डार दिया था। ऊपर से कूएँ को बंद कर दिया था।

थले विसनु प्रहलाद ही भाख्यौ, नारायण थल मांहै राख्यौ।
माता बहोत मन में पिसतावै, अबके पुत्र किसी विध आवै।।२००।।

थल में भी विष्णु है ऐसा प्रहलाद की माता कयाधू मन में बहुत पश्चाताप् करने लगी कि अब की बार पुत्र किस प्रकार से बचेगा। कैसे बचकर मेरे पास आयेगा।

दैत सुखी हुवा मन मांही, अब प्रहलाद नीकसें नाही।
आयो प्रहलाद भजत गोविन्दा, उदै भयो जिम पूरण चंदा।।२०१।।

दैत्य मन मे खुशी के विपरीत प्रहलाद अन्ध कूप से बाहर निकलकर आया जिस प्रकार से पूर्णिमा का चन्द्र उदय हुआ हो इस प्रकार से गोविन्द-गोविन्द कहते हुए प्रहलाद आ गया।

''दुहा''

देखे मात प्रहलाद कुं, सीतल हृदो होयै।
दादर मोर पपइयां, घन बरसंता जोयै।।२०२।।

माता ने अपने पुत्र को आते हुए देखा तो हृदय शीतल–प्रफुल्लित हो गयी। जिस प्रकार से दादूर–मेढक, मोर, पपइयां–चातक बादल को बरसता हुआ देखकर प्रसन्न हो जाते हैं।

''चौपई''

लेप्यो लेस्यो दाट्यौ कूवो, थल मांही प्रहलाद न मूवो।
कूवै दाट्यो सरयौ न काजु, मौ जीवंता लेसी राजु।।२०३।।

लेव से लेपन कर के कूंएँ को बंद कर दिया। नीचे कुएँ में बंद हो जाने से भी प्रहलाद की मृत्यु नहीं हुई। कूएँ को बंद कर देने से भी कुछ कार्य बना नहीं। हिरण्याकशिपु कहने लगा यह मेरा बेटा तो मेरे जीवत रहते ही राज ले लेगा।

मूल मंत्र याकै मन मांही, जलथल अस्त्र मूवौ नाही।
प्रहलाद कुं तुम पकड़ो धाई, गीरवर सेती दहो गुडाई।।२०४।।

इस प्रहलाद के पास मूल मंत्र होगा जिस कारण से यह जल थल अस्त्र से मरता नहीं है। आगे दूसरा मारने का उपाय किया जावे।

आप दैत्य लोग जाइये और प्रहलाद को पकड़ कर पहाड़ पर ले जाओ और उसे पहाड़ से नीचे फैंक दो।

दीरघ रूंख कंटाला, महा कंदरा खोह कराला।
जहां सिघ बाघ बहुतेरा, हरै पड़त प्राण तिण केरा।।२०५।।

भयंकर वन पर्वत में कांटेदार बड़े बड़े दरखत थे उसी पर्वत में जीव विचरण कर रहे थे। कौन सा हिसक जीव कब हमला करके प्राणों का हरण करले।

अनड़ पहाड़ उतंग बहु भारी, तह सिखर तै दीनौ डारी।
भक्त चोट तै डरयौ पाहारा, स्थल भयो छुटी धारा।।२०६।।

उबड़ खाबड़ ऊंचे–ऊंचे पहाड़ बहुत ही बड़े–बड़े थे। उन पहाड़ो के शिखर पर ले जाकर प्रहलाद को नीचे गिरा दिया । मानों कही भक्त के चोट नहीं लग जाये पहाड़ भी डर गया। प्रहलाद के गिरने का स्थल पंथ बन गया।

एक धारा छूट पड़ी यानि उस कोमल धारा से प्रहलाद नीचे खिसकते हुए शांति पूर्वक नीचे आ गिरा। (पोहमी भई दूध दक फेना, साधु पड़त न लहय्य चैनाद्ध धरती माता दूध के फेन के समान कोमल हो गयी साधु को नीचे गिराया जा रहा है माता धरती कैसे चैन से बैठ सकती है। माँ की तरह प्रहलाद को गोदी मे ले लिया।)

''दुहा''

विसनु मस्तके परबते, पड़त कहयौ सत भाख।

यूं पंछी असमान तै, धरै सहज धर पावं ।।२०७।।

प्रहलाद ने गिरते हुए यूँ कहा कि विष्णु पर्वत के मस्तक पर भी विद्यमान है जिस प्रकार से पक्षी आकाश से उड़कर सहज ही मे धरती पर पांव रख देता है

''चौपई''

प्रहलाद सुखी सहजु सुं आयौ, हरषी मात साधे सुख पायो।

प्रहलाद दैख दैत उक्लाना, पापी मन मै बहु पिछ्ताना।।२०८।।

प्रहलाद सुख में मग्न रहकर सहज ही मे पृथ्वी पर आ गया। माता प्रसन्न हो गयी और साधु भक्तो ने भी खुशियां प्रकट की प्रहलाद को सकुशल धरती पर दैत्यो ने देखा तो व्याकुल हो गये। पापी जन बहुत पछताने लगे।

अब तो कछु उपायन न लागै, काहा करूं इण सुत के आगै।

पुत्र पुत्र कहै दैत बुलायो, तब प्रहलाद सहज सूं आयौ।।२०९।।

हिरण्यकशिपु कहने लगा अब मैं क्या करूं? इस पुत्र के आगे तो मेरा कोई उपाय नहीं चल रहा है। हे पुत्र! हे पुत्र! कहते हुए दैत्य ने प्रहलाद को अपने पास बुलाया, प्रहलाद सहज भाव से अपने पिता दैत्य के पास आ गया।

''असुर उवाच''

मानो पुत्र वचन एक मेरो, राजपाट कुं नैरूं सब तेरो।
मुख सुं पिता कह जो हम कुं, जब राज तिलक मै देउ तुम कुं।।२१०।।

हे पुत्र! मेरा एक वचन मान लो तो सम्पूर्ण राजपाट तथा उससे सम्बन्धित जो कुछ है वह तुम्हारा ही है। एक बार अपने मुख से मुझे पिता हरि

विष्णु कह दे तो मैं अभी सम्पूर्ण राजपाट का राजतिलक दे दूंगा।

''प्रहलाद उवाच''

राजकाज सुं मो मन नांही, विसनु पिता बसै उर मांही।
असर सरण परमेसर कहीयै, ता विन सरण को न रहीयै।।२११।।

प्रहलाद ने कहा–राजकाज में मेरा मन नहीं है। पिता विष्णु हृदय में प्रवेश हो गये है। जिनका कोई सहारा नहीं है उसका सहारा एक परमेश्वर ही है। उस दीन दयालू की शरण छोड़कर अन्य किसकी शरण ग्रहण करें?

दैत कहै सुनियों प्रहलाद, कहां मंत्र उर लीनो साध।
जल थल गिर लोहा नहीं मरै, प्रहलाद इष्ट कुवन उबरै।
बहोत त्रासना दीनी तौही, कवन जड़ी पीड़ा न होई।।२१२।।

दैत्य कहने लगे हे प्रहलाद! आपने यह विष्णु का मंत्र कहां से लिया है और दिल में धारण कर लिया इस मंत्र की साधना भी कब कहां की है? जिस मंत्र के कारण जल, पर्वत, लोहा आदि से मरता नहीं है आप को कौन सा ईष्ट देवता है जो बचा लेता है। हमने आपको बहुत ही यातनाएँ दी है वह कौन सी जड़ी–बूंटी है जिससे तुम्हे पीड़ा नहीं होती।

''प्रहलाद उवाच''

अमर जडी जग जीवण जांणी, काल कष्ट नहीं व्यापै प्राणी।
मौही मंत्र नारायन नामा, हरि है इष्ट सरै सब कामा।।२१३।।

मेरे पास अमर जड़ी बूटी जग जीवन के आधार स्वरूप नारायण विष्णु का नाम स्मरण ध्यान ही है। उनका स्मरण, जप, शरण, ग्रहण करने से जगत् के कष्ट दूर भाग जाते है इसलिये मेरा इष्ट देवता हरि ही है। वही मेरे सभी कार्य सिद्ध करते हैं।

''दैइत उवाच''

विसनु विसनु दुनियां सब गावै, मार दीया सब ही मर जावै।
प्रहलाद इष्ट तमारो ऐसो, कौउ कथ नीह व्यापै कैसो।।२१४।।

दैत्य कहने लगे–विष्णु विष्णु इस प्रकार से तो दुनियां गाती है किन्तु मारने पर सभी दुनियां मर जाती है। प्रहलाद तुम्हारा इष्ट विष्णु ऐसे ही है केवल

कथन करने से क्या होता है। वह दिल दिल मे व्यापक तो नहीं हो पाता।

''प्रहलाद उवाच''

सिवरण मांही वौती रीत, ऐक उपर एक हृदै प्रीत।
रोटी पेट पर बांधै रही, जिमे बिन भूख नहीं जाई।।२१५।।

स्मरण जप करने का एक तरीका–साधना है कि हृदय मे प्रेम भाव से नाम की रटन लगातार अबाध गति से होती रहे। यही जप होगा तो इसका मतलब यह है कि यदि कोई पेट पर रोटी बांधे हुए है और रोटी रोटी चिल्लाता है तो उसकी भूख नहीं मिटेगी। रोटी तो खाने से भूख मिटेगी, इसी प्रकार से भगवान् नाम का जप केवल नाम लेने से नहीं होगा। उसे दिल दिमाग मे धारण करना होगा।

पांणी राखै आपन पास, पिया बिना न जाए पियास।
ओखद है घर मांही घसाही, पिया बिना रोग न जाही।।२१६।।

यदि कोई जल अपने पास रखता है किन्तु जलपान नहीं करता तो उसकी प्यास नहीं मिटती, यदि औषधि घर मे है और घिसाई–पिसाई हो रही है किन्तु उसे ग्रहण किये बिना रोग नहीं मिटता।

खांड खांड करता दिन जाही, बिन पायै मुख मीठा नाही।।२१७।।

यदि कोई मुख से खांड–खांड का उच्चारण दिन भर करता रहे तो क्या विना खाण्ड खाये मुख मीठा हो सकता है?

सौ मण आग लिख रू मै धरै, रूहि ढेर तिनक न जरै।
तनिक चिनक आगन की धरै, रू का ढैर पलक मै जरै।।२१८।।

आग शब्द कागज पर लिखकर रूई मे रख दी जावे तो क्या वह आग शब्द कागज पर लिखा हुआ सौ मन रूई के ढेर को जला सकता है? नहीं जला पायेगा। इसके विपरीत छोटी सी आग की चिनंगारी रूई के ढेर में रख दी जाये तो वह सच्ची प्रत्यक्ष छोटी सी आग रूई के सौ मन ढेर को एक पलक में जलाकर राख कर देगी। इसी प्रकार से केवल नाम से कुछ नहीं होगा। सत्य रूप विष्णु को धारण करने से होगा।

सांचो नावै हृदै मै रहै, सब ही पाप पलक मे दहै।

इमृत कलस घर भीतर धरै, बिन पिया मुरख नर मरे।
पीऊ बले मुख मांही पीवै, अजर हुवै नर जुग जुग जीवै।।२१९।।

सत्य परमेश्वर का नाम हृदय–दिल दिमाग मे होना चाहिये केवल मुख से उच्चारण मात्र से कुछ नहीं होता। तब ही सभी प्रकार के पाप कष्ट मिट जाते हैं। यदि कोई अमृत कलश घर के भीतर छुपा कर रख देवे और उस अमृत का पान नहीं करे तो वह मुर्ख है।

घर मे रखे हुए अमृत पान नहीं करता है तो असमय में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। समझदार व्यक्ति घर में रखे हुए अमृत का पान करेगा तो युगों युगों तक जीवित रह सकता है यह जीवन सफल कर लेता है। ऐसी ही दशा हरि के सच्चे भक्त की है।

''दुहा''

सोइ नाम सती लहै, सो लहे कौ गत हार।
सती जीलै संग पीव कै, फिर आवै सैसार।।२२०।।

वही विष्णु का नाम सती स्त्री लेती है वही नाम कुलटा स्त्री भी लेती है किन्तु सती अपने पीव परमेश्वर के साथ जीती है और कुलटा नारी पुनः संसार मे जन्म लेकर आती है।

''चौपई''

बाछो घर वन मे गऊ चरै। हरखै हीयै मुख सुं तिण गीरै।
असौ हृदै हरि सुं प्रेम, ताकै सदा कुशल ही खेम।।२२१।।

बछड़ा घर पर होता है उसकी माँ गाय वन में घास चरने को जाती है जब उसे अपना छोटा बछड़ा याद आ जाता है तो मुख से घास तृण गिर जाता है। ऐसा ही हार्दिक प्रेम हरि के प्रति हो जाये तो सदा कुशलक्षेम ही बनी रहती है।

नटणी सुरत बरत पर पाउ, दुनियाँ देखे सबही चाउ।
असौ ध्यान धणी सुं धारै, जगत कूं जीत आप कुं तारै ।
जां की प्रीत विसनु सुं लागी, जलम मरण की संसा भागी।।२२२।।

नृत्य करने वाली नटणी खेल दिखाते हुए एक रस्से पर हाथ में एक

बांस का डंडा लेकर चलती है, उसकी सुरति–ध्यान बरत–रस्सी पर रहती है हाथ में डंडा उसको संतुलित करता है। ऐसा ध्यान हरि पर लगाये तो जगत माया को जीतकर अपने आप तिर जाता है और संसार को भी तो तार देता है। जिसकी प्रीति विष्णु से लग जाती है वह जन्म मरण के दु:ख, संशय से निवृत होकर परमपद को प्राप्त हो जाता है।

''दुहा''

प्रहलाद प्रछया प्रेम की, अरू नहचे की रीत।
दैत सुणो दुख पावीयो, मन भयौ दुचीत।।२२३।।

प्रहलाद की परीक्षा हो रही थी। प्रेम तथा दृढ़ निश्चय की। दैत्यराज ने सुना की प्रहलाद विष्णु की भक्ति में तल्लीन है तो बहुत दु:ख पाया। दैत्यराज का मन दुश्चिंता में पड़ गया किं कर्तव्य विमूढ हो गया अब क्या करू और क्या नहीं करूं।

''दैइत उवाच''

''चौपई''

महम सुं डरै देव नर अही, कंवर मन संका कछु नही।
दैत कहै काहा करूं उपाउ, प्रहलाद मरन कौ लगै दाउ ।।२२४।।

दैत्यराज कहने लगा मेरे से तो देव, नर, नाग आदि सभी डरते हैं किन्तु कंवर प्रहलाद को कुछ भी डर शंका नहीं है। कहने लगा अब आप ही लोग बताये कि मुझे क्या उपाय करना चाहिये, जिससे प्रहलाद को मारने का दाव मिल जाये।

बड़ी साना बहु विध दीनी, सो प्रहलाद कछु नहीं चीनी।
तीन लोक संका मोहे मानै, प्रहलाद निसंक संक नहीं आनै।।२२५।।

बहुत प्रकार से प्रहलाद को सलाह, कष्ट, त्रास दी गयी किन्तु प्रहलाद ने किसी भी बात को स्वीकार नहीं किया। तीनों लोक दैत्यराज मुझसे भय–शंका खाते हैं किन्तु प्रहलाद निशंक है कुछ भी भय शंका से डरता नहीं है।

नैणे नीद न आवै कोई, जा दिन रैन छमासी होई।

सिदिन दाणु सौच विचारै, लहेनु सास त्रिसास डारै।।२२६।।

जब आंखों में निंद्रा नहीं आती तो वह रात्रि छः महिने जितनी लंबी हो जाती है ऐसा ही दैत्यराज को हो रहा था। जब ऐसी दशा हो गयी तो दैत्यलोग चिन्तन विचार करने लगे। कष्ट की अवस्था में लंबे लंबे श्वास लेकर हुंकार करने लगे।

''दुहा''

दैत हृदै मे हार कै, करण लगै बहु सौच।
देख भजन प्रहलाद को, मान्यो आपन पौच।।२२७।।

दैत्य जनों ने प्रहलाद की भक्ति भाव को देखकर अपनी हार मान ली, आपस मे सोच विचार करने लगे कि प्रहलाद की भक्ति के सामने हम तो बौने है।

''चौपई''

पिता धरम कछु नहीं जानै, मौह आंण संक्या नहीं मानै।
सुत नहीं कोई सत्रु जायौ, सत्रु पुत्र को भेख बनायौ।।२२८।।

यह प्रहलाद पिता के धर्म को कुछ नहीं जानता पिता पुत्र के बीच क्या धर्म मर्यादा होती हैं, मेरी आन, मान, मर्यादा, भय कुछ नहीं मानता है, यह मेरा पुत्र नहीं हो सकता, किन्तु पुत्र रूप मे मेरे शत्रु ने ही जन्म लिया है। शत्रु ने ही पुत्र का भेष बनाया है।

श्रप अंगुष्टे डसै जु आई, नख चख जहर हुयै जाई।
काट अंगुष्ट दूर बहावै, नहीं बीच रैखि प्राण रहावै।।२२९।।

यदि अंगुँठे मे सर्प डस जाये तो वह जहर नख से लेकर शिखातक फैल जाता है। उस समय तत्काल अँगूठा काट कर फैंक दे तो जहर पूरे शरीर में फैलेगा नहीं और प्राणो की रक्षा हो जायेगी।

नहीं काटै मोह अंगुष्टे करै, विष विफर अरू प्राण ही हरे।
याकु कीजै वैग प्रहारा, अनेक जतन कर दीजै मारा।।२३०।।

सर्प से डसे हुए अँगूठे को मोह वंश होकर नहीं काटेगा तो विष फैल जायेगा और प्राणों का हरण कर लेगा अर्थात मृत्यु को प्राप्त हो जायेगा इसलिये

यह प्रहलाद विष डसित अँगूठे की भांति है इस पर जल्दी से प्रहार करो और किसी प्रकार से यत्न द्वारा इसे मार डालिये।

''दुहा''

अस्वर कहै प्रहलाद कौ, मोह करो जिन कोई
दुखदाई मारयौ भलो, या मारया सुख होय।।२३१।।

असुर प्रहलाद से कहने लगे हे प्रहलाद! आप चाहे जितना उपाय मोह कर लो किन्तु बच नहीं सकते। दु:ख देने वाले को मारना ही अच्छा है उसे तो मारने से सुख ही होगा।

कुटुम्ब आपणो लीयो बुलाई, प्रहलाद मरण को कहो उपाई।
सुन लीजो तम असुर समाजु, यो मो जीवंत लेसी राजु ।।२३२।।

हिरण्यकशिपु ने अपने कुटुम्ब को बुला लिया और कहने लगा कि आप लोग प्रहलाद के मरण का उपाय बतलावे। हे मेरे असुर समाज! आप मेरी बात का श्रवण करें यह प्रहलाद मेरे जीवत रहते हुए ही मुझ से राज छीन लेगा।

हरि हरि कह प्रहलाद हवैना, देख्या अगन पड़ै मोह नैना।
चन्दन बिड़े मे उगो बांसा, पड़े अगन सब वन को नासा।।२३३।।

यह प्रहलाद हरि हरि कहता है और चुप नहीं होता है दिखती हुई आग में पड़ने को तैयार है। हरि से इतना मोहित हो गया है। चन्दन वन में यह बांस कहां से ऊग आया? यह अग्निकी चिनगारी है बांस मे पड़ते ही सम्पूर्ण वन का दहन कर देगा। हमारे कुल को ही यह प्रहलाद नष्ट कर देगा।

अस्वर कहै कहो क्या करीयै, प्रहलाद मुवा विन महादुख भयै।
अस्वर रहयौ मन उणौ होई, एह प्रहलाद नै मारै कोई ।।२३४।।

असुर कहने लगे अब क्या करे? विना प्रहलाद के मारे महान् दु:ख हो रहा है असुर लोग मन मे हीनता प्रकट करने लगे क्योंकि इस प्रहलाद को कोई मार नहीं सकता।

''दुहा''

भगवैनी कह निज भ्रात सुं, छाडो मन दलगीर।
तुमरो कारज मै करूं, मेरो बजर सरीर।। २३५।।

हिरण्यकशिपु की बहन होलिका कहने लगी कि हे भाई ! अब आप मानसिक संताप को छोड़ दीजिये। तुम्हारा कार्य मैं सहज ही कर दूंगी। क्योकि मेरा शरीर बज्र जैसा है।

''चौपई''

सिव वर दीयो अभैगत पाई, बजर काया जलु नहीं काई।
सुत लै बैछु अग्न विच जाई, हुं साल तुम्हारो मेटु भाई।।२३६।।

मुझे शिवजी ने वरदान दिया है इसलिये मैं भय गति को प्राप्त हो गयी हूँ मेरी काया बज्र की हो गयी है। मैं अग्निमें जल नहीं सकती। तुम्हारे पुत्र को मैं अग्निमें लेकर बैठ जाऊंगी। प्रहलाद को अग्निमें जलाकर तुम्हारे दु:ख को मैं मिटा दूंगी मेरे भाई।

मोह बजर सरीर नहीं बरही, प्रहलाद अग्न सह जसुं जल ही।
ढोढा कहै सुन हौ भाई, हूँ अग्न बिच जालु जाई।।२३७।।

हे भाई! मेरा शरीर बज्र जैसा है अग्निमें जलेगा नहीं और प्रहलाद मेरे साथ सहज ही जल जायेगा। भुवा जी कहती है भाई सुनो–मैं प्रहलाद को अग्निके बीच जला दूँगी।

सुण प्रहलाद मरण को दाउ, अस्वर के मन भयो उछाउ।
होली कहै सुन हो राजा, प्रहलाद जलन को करीयै साजा।।२३८।।

प्रहलाद के मरण का उपाय सुन करके असुरो के मन मे उत्साह होने लगा। होलिका कहने लगी है राजा जी सुनिये और प्रहलाद को जलाने का साज बाज सजाइये।

अस्वर मिलकर साज बनायो, प्रथम सब मिल थंभ रूपायो।
चिता संवारण सब मिल आये, विध विध को बहु काठ मंगाये।
रूई गंज कीया बहुतेरी, तेल कहो कीता मण डारी।।२३९।।

असुरों ने मिलकर प्रहलाद को जलाने का साज समान एकत्रत किया। प्रथम सभी ने मिलकर एक थंभा रोपा गया। चिता संवारने बनाने के लिये सभी मिलकर के आयें। अनेक प्रकार की लकड़ियाँ एकत्रत की। बहुत ही रूई एकत्रत की गयी तेल न जाने कितने मन इकट्ठा किया। तथा रूई लकड़ी में डाल दी।

''दुहा''

सजल रचीयो चवड़ो बहु, ऊंचौ जांण अवास।
सूत पलेट्यो सांवठो, जतन कीयौ चहूं पास।।२४०।।

ज्वलनशील पदार्थों से एक बहुत चौड़ा तथा ऊँचा आवास निवास घर की रचना की। उसके चारों तरफ बहुत सा सूत लपेटा गया तथा चारों ओर से सुरक्षा का प्रयत्न किया गया।

''चौपई''

अस्वर बाजा बजावत जावै, अबखल आज गीत जु गावै।
फागुण सुद पुन्युम जु आई, जदि होली असुर पुजाई।।२४१।।

असुर गण अनेक बाजा बजाने लगे आज अबखल–झूठे जंगली गीत गाने लगे। फाल्गुन सुदी पूर्णिमा का दिन आया तब असुरो ने होली की पूजा–प्रारंभ की थी।

ढोढा आयस ले विच पैठी, गह प्रहलाद गोद ले बैठी।
दैत मिलै तब ढोढा धोकी, साधा सौग अस्वरा असौखी ।।२४२।।

भुवा होलिका ने भक्त प्रहलाद को गोदी में लेकर अग्निके घर के बीच में बैठी। प्रहलाद को पकड़ कर गौदी में बैठाया, उस समय दैत्यों ने मिलकर ढोढा–भुआ होलिका की पूजा करी। साधु भक्तों ने शोक मनाया तथा असुरों ने आनन्द उत्सव मनाया।

जपै हिरणाकुस हरि कुं छाडै, प्राण बचाय अगन से काढै।
अग्न गीणे नहीं साध असाधु, पावक सोखै सुन प्रहलादु ।।२४३।।

असुर लोग हिरण्यकशिपु का जप करने लगे और हरि को छोड़ दिया अग्नि से प्राण बचाकर हिरण्यकशिपु ही होलिका को निकाल लेगे, अग्नि साधु या असाधु कुछ नहीं गिनती है अग्निप्रहलाद को जला देगी।

सजन कह नीके समझाई, छिन छिन हरि कित करै सिहाई।
ऐक बैर हिरणाकस भाखै, असुर कहै अग्न तै राखै ।।२४४।।

सज्जन लोगों ने अब भी प्रहलाद को बहुत समझाते हुए कहा कि क्षण क्षण मे हरि कहां सहायता करते हैं। हे प्रहलाद! एक बार यदि तुम अपने मुख से

हिरण्यकशिपु कह दो, असुर लोग तुम्हें अग्नि से बचा लेंगे।

''प्रहलाद उवाच''

''दुहा''

सैस धरा तज पालटै, पिछम उदै हुवै भांण।
हरि तज दाणव नहीं जपु, इण जिभ्या इण प्रांण।।२४५।।

शेष नाग धरती को अपने सिर से पलट दे, सूर्य पश्चिम में उदय हो जाये तो भी हरि को छोड़कर इस जीभ, इन प्राणों से दानव का जप नहीं करूंगा।

जदकर कोप होलका बोली, चहुं दिस अग्न प्रजालो दोली।
प्रहलाद पकड़ अग्न मे रही। हरि दोषण होली जद भई।।२४६।।

उस समय कुपित होकर होलिका कहने लगी अब क्या देख रहे हो चारों दिशाओं से अग्नि जला दो प्रहलाद को पकड़कर अग्नि में बैठी रही। हरि तथा हरि के भक्त से द्वेष भाव किया तब से वह होली हो गयी।

होली को मुख देखै आई, हरि सुं बेमुख अधोगति पाई।
दाणव मन मे हरखत भए, चहुं दिस लाय बसंदर दऐ।।२४७।।

जलती होली का कोई आकर दर्शन कर ले तो वह हरि से विमुख होकर अधोगति को प्राप्त हो जाता है। दानव मन ही मन मे हर्षित हुए और चारों तरफ से अग्नि जला दी।

हथियार लीये सब हाथे, खडै. चहुं दिस आय।
सावधान सब कौ रहौ, रखेज निकस नहीं जाय।।२४८।।

असुर हथियार अस्त्र शस्त्र लेकर चारों तरफ खड़े हो गये कही प्रहलाद निकल कर भाग नहीं जावै, कहने लगे सभी सावधान रहो, सुरक्षा करो, कही अग्नि के भीषण ताप से निकल कर भाग नहीं जावै।

''चौपई''

जाली अग्न चहुं दिस वाढै, अणी जोड़ अस्वर सब वाढे।

खबरदार मत दीजो जानी, मारो मार उचारै बानी ।।२४९।।

धूं धूं करके अग्नि जल उठी चारों तरफ बढ़ने लगी। आपस मे एक दूसरे से जुड़कर असुर सभी बढ़चढ़ कर के भाग ले रहे थे। खबरदार–सावधान करते हुए कहने लगे प्रहलाद को अग्नि से निकल कर जाने नहीं देना। मारो मारो इस प्रकार से शब्द गुंजायमान करने लगे।

कूंत बान बहुतीर चलावै, बाजा डरू डाक बजावै।

झालो झाल मिली सब आई, हरि प्रहलाद सिवरयौ मन मांही।।२५०।।

असुर लोग कूंत, बान, तीर बहुत से चलाने लगे। भयंकर आवाज से ढोल बजाने लगे। अग्नि की लपटे एक दूसरी से मिलकर महा दावानल जलने लगी। प्रहलाद ने उस समय हरि का मन ही मन स्मरण किया।

''दुहा''

ज्वाला माल कुले विसनु, यूं उचरयौ पहराज।

जिनकुं अग्निसीतली भई, ढोढा गइ स्वदीझ ।।२५१।।

प्रहलाद ने कहा ''ज्वाला माल कुले विष्णु'' इस ज्वाला मे विष्णु है ज्योति मे विष्णु है यह अग्नि भी विष्णु से प्रगट हुई है यह कैसे विष्णु के शरणागत को जला सकती है जिन विष्णु के भक्त की रक्षा करने के लिये अग्नि शीतल हो गयी और इसके विपरीत ढोढा असुर कुली की भुवाजी जल गयी।

''चौपई''

ज्यूं जलै लाख अग्न मै गैरी, ज्युं होली भई भसम की ढेरी ।।२५२।।

जिस प्रकार से जलती हुई अग्नि में लाख डाल दी जाय उसी प्रकार से जलती हुई अग्नि में होलिका भी राख की ढेरी हो गयी।

प्रहलाद प्रेम हरि जांको दासा, तत छिन लीयो अपने पासा।

असुर भये मन मे कुशयाली, अब प्रहलाद दीयो नीव जाली।।२५३।।

प्रहलाद का प्रेम हरि से था। तत्क्षण हरि ने प्रहलाद को अग्नि से निकाल लिया और अपने ही पास बुला लिया। असुर अपने मन में खुशी हुए कि अबकी बार प्रहलाद को जला दिया गया है। मूल रूप से भक्ति भाव समाप्त कर दी है।

दैत्य हरखि अपणें घर आया, साधा कै मन सोक बढाया।
माता के मन भयो अचैना, हाय पुत कब देखु नैना।।२५४।।

दैत्य हर्षित होकर अपने घर लौट आये और साधु सज्जनों के मन में शोक बढ़ा दिया। माता कयाधू के मन में बैचेनी छा गयी। हे पुत्र! कब अपने नयनों से तुम्हें देख पाऊंगी।

रोवै झूरै विलाप रू करै, सुत देखि विन कल नहि परै।
आंगन के बिच खेलतो बाला, बोले तोतरे वचन रसाला।।२५५।।

माता रोती है बार बार झूरे–याद करती है और विलाप करती है सुत देखे बिना चैन नहीं पड़ता। स्मरण करती है कि मेरा प्यारा बेटा आंगन मिट्टी मे खेलता था और तोतली वाणी बोलता था।

वा सुरति कब देख हु नैना, इस विध कहै त्रहै के बैना।
माता मन मे करे अंदेसा, कब देखु वै बालक भैसा।।२५६।।

वह सलौनी प्यारी–प्यारी सुरत–रूप मैं फिर कब देखूंगी इन आँखो से इस प्रकार से तरह तरह के प्रेम भरे वचन माता कहने लगी। माता मन में अंदेसा–संकल्प विकल्प करने लगी। मैं कब बालक के भेष में देखूंगी जो बालक माता को आनन्दित करता है।

साधु सखा करै अंणराई, कहां रहयौ संतन सुख दाई।
साध सभा मे सोभत कैसा, नक्षत्रा मांही चंदा जैसा।।२५७।।

साधु सज्जन, मित्रजन मन में अंणराई–दु:ख महसूस करने लगे वह संत सज्जनों के सुख दायक भक्त प्रहलाद कहां रहे अब तक लौट कर नहीं आये। वह बालक प्रहलाद साधु सभा में शोभायमान होता था जैसे नक्षत्रों मे चन्द्रमा शोभायमान होता है।

साधु झुरै बहुत मन मांही, मंडली को मांण दीसै नांही।
नर पसु पंखी भिऐ उदासी, कहां गये वै सुख के रासी।।२५८।।

साधु जन मन में बहुत ही झूरै–विलाप करने लगे। हमारी मंडली का शिरोमणि प्रहलाद दिखलाई नहीं दे रहा है। आदमी ही नहीं नर, पशु, पक्षी भी उदास हो गये और कहने लगे वे सुख के खजाना प्यारे प्रहलाद आज कहां चले

गये।

''दुहा''

इसी विध सोचैत संत सबै, सखा मित्र निज मात।

परम भक्त प्रहलाद बिनु, दु:कर बीती रात।।२५९।।

इस प्रकार से संत भक्त सभी सोचने लगे तथा प्रहलाद की माता सखा मित्र सभी व्याकुल थे। परम् भक्त प्रहलाद के वियोग से रात्रि दु:खदायी होकर बीत गयी।

''चौपई''

सचिव मित्र मिले नृप पे आयै, राजा सेती वचन सुनाऐ।

प्रहलाद जाल्यौ अगन कै माही, फूंफी क्यूं घर आई नांही।।२६०।।

दैत्यराज के सचिव, मित्र आदि मिलकर राजा के पास आये और राजा को शुभ समाचार कहने लगे–प्रहलाद तो आग में जल गया है, किन्तु भुवा जी अब तक घर क्यों नहीं आई।

भूवा देह बजर की होई, अग्न मांह जले न कोई।

बिती रैन अजु नहीं आई, कहा अग्न मे रही लुकाई।।२६१।।

ढोढा–होलिका बुआ जी की तो देह बज्र की थी। वह तो अग्नि में जल नहीं सकती। रात्रि व्यतीत हो गयी किन्तु अब तक लौटकर आयी नहीं है पता नहीं कही अग्नि में छिपकर बैठी होगी।

का देवी चढ गई आकासे, कै काहु दिस निकसी जाहां से।

अस्वर भए कठा सब ही, सल सौधण कु चाल्या तब ही।।२६२।।

या तो देवी आकाश में चढ़ गयी या देवी किसी दिशा में निकल गयी और वहां से चली गयी। क्या हुआ कुछ पता नहीं चला? असुर सभी एकत्रत हुए और राख में ढुढ़ने के लिये चल पड़े जहां पर होली जलाई थी। कहीं लकड़ियों के बीच खाली जगह में दबी पड़ी होगी।

''दुहा''

कसी कुदाली हाथ ले, सोधण लागा सब।

भुवा बजर भसमी भई, अस्थ जु लादा निठ।।२६३।।

हाथ मे कस्सी कुदाली लेकर सभी राक्षस ढूंढ़ने लगे, भुआ बज्र शरीर धारी होने पर भी जलकर भस्म हो गयी। कुछ अस्थियां ही मुश्किल से मिल सकी।

''चौपई''

भेद बिना भूवा जल गई, प्रहलाद अग्नै मे दाझन्यौ नई।
नफर वचन कहन युं लगै, कह आपस मै तो दिस भागै।।२६४।।
बिना भेद भूवा जल गयी, प्रहलाद अग्निमे जला नही।
दैत्य इस प्रकार के वचन कहने लगे कि एक दूसरे पर दोष देने लगे।
प्रहलाद मूवो नहीं भूवा मारी, धूड़ राख आपस मे डारी।
पीसण न मुवो मारी भूवा, खेह उड़ाय खुंवार सु ऊवा।।२६५।।

प्रहलाद मरा नहीं किन्तु भुआ मारी गयी। आपस में एक दूसरे पर मिट्टी एवं राख डालने लगे। पीसण –बालक प्रहलाद नहीं मरा भुआ जी मर गयी इस दु:खद घटना पर एक दूसरे पर खेह–रिजकण–रेत के कण उड़ाये और खुंवार–लज्जित हुए। नाम धुलेड़ी रखा तब ही, असुर मारै आप मैं सबही। उस होली के दूसरे दिन का नाम धुलेड़ी दिया गया था असुर आपस मे ही एक दूसरे को मारने लगे।

''दुहा''

संत बैर छुटै नही, द्रोह करौ जिन कोई।
होली जुग जुग जलत है, प्रतक देखो लोई।।२६६।।

संत से वैर–दुश्मनी करने से मिटती नहीं हैं उसका फल भुगतना ही होगा। जो कोई भी द्रोह करता है वह होलिका की तरह ही जल जाता है तब से लेकर अब तक युगों–युगों तक होलिका जल रही है यह कर्म द्रोह का विधान प्रत्यक्ष देखो।

''चौपई''

प्रात भए प्रहलाद ई आए, वानी चड़ी जु कंचन ताऐ।

हरि जिन हीरा कंचन तासै, सह कसौटी दुति प्रकासै।।२६७।।

प्रात: कालीन शुभ वेला में प्रहलाद सकुशल लौट आऐ जिस प्रकार से कंचन तप कर तेजस्वी हो जाता है जैसे कसौटी पर कसने से हीरा अपना गुण–धर्म पूर्ण रूपेण प्रगट करता है और सोना भी अग्नि के संयोग से तप कर विकार को छोड़कर दीप्तिमान हो जाता है। इसी प्रकार से प्रहलाद भी परीक्षा में उत्तीर्ण होकर देदीप्यमान होता हुआ सूर्य की भांति प्रकट हो गया।

माता के मन में बहुत आनन्द हुआ मानों दूसरा चन्द्र ही उदय हुआ है अपने पुत्र को देखा, नयनों को शीतल किया। माता के शीत शरीर में प्रेम की अभिवृद्धि हुई।

जल पीया जिम मिटै पीयासा, माता मन की पुरबी आसा।
साध मिलै हृदै हरिखाई, घर घर बंटण लगी बधाई।।२६९।।

जिस प्रकार प्यासे को जल मिल जाता है उसे पीकर प्यास बुझाता है उसी प्रकार माता को पुत्र की प्यास मिट गयी। अपनी इच्छा को पूर्ण किया। साधु सज्जन पुरुष मिलने से दिल मे आनन्द की अनुभूति होने लगी। प्रहलाद के जीवित वापिस लौट आने पर घर घर में बधाइयां बांटने लगे।

कथा कीरतन हरि गुण गावै, मिलै परसपर प्रेम बढावै।
चले लोग चहुं दिसै ते आवै, जिन प्रहलाद को दरसन पावै।।२७०।।
सुनै ज्ञान लहै है उपदेसा, चहु दिस सब बढ़यौ प्रवेशा।।२७१

घर घर कथा कीर्तन हरि गुण गान करने लगे, परस्पर भक्त जन मिले प्रेम भाव बढ़ने लगा। चारों दिशाओं से लोगों का आना प्रारम्भ हो गया। प्रहलाद का दर्शन करने के लिये आते थे।

प्रहलाद से ज्ञान श्रवण करते हुए उपदेश ग्रहण करते थे चारों दिशाओं से जन समुदाय का प्रवेश प्रारम्भ हो गया।

''दुहा''

परचाये प्रहलाद जु, संत कोड़ तेतीस।
संक न मानै अस्वर की, सिरै श्री जगदीस।।२७२।।

प्रहलाद की भक्ति भाव से अनेकानेक संत जन परिचित हुए। तैतीस

क्रोड़ की संख्या में उपस्थित हुए तथा प्रहलाद के अनुयायी बन गये उन्होंने असुर से बड़ा हरि–विष्णु है ऐसा प्रत्यक्ष प्रभाव देखा था। असुर से भय हट गया। असुर से शिरोमणि श्री जगदीश ही है। इसलिये सर्वश्रेष्ठ की ही शरण ग्रहण करनी चाहिये यही नियम है।

''चौपई''

मुख से बोले सब सुरवाणी, जल कूं छांण करै जीवाणी।
जीव दया बहु दिल सांप जै, सील संतोष सुच सुचा जै।।२७३।।

मुख से सभी देव वाणी बोलने लगे, जल को कपड़े से छान कर प्रयोग करने लगे। जीव हिंसा का सर्वथा परित्याग कर दिया। जिस प्रकार से जीवों की रक्षा हो सके वही उपाय करने लगे। जीवो पर दया करना यह नियम सभी के दिलों में प्रवेश कर गया। शील, संतोष, शुचि, प्यारो, नियम का पालन करते हुए पवित्र शुचि हो गये।

विसनु पुजा प्रसाद ही लेवै, आन देव पर दिष्ट न देवे।
जीजकाण सब दीनो डार, निरभै सिवरै सिरजण हार।।२७४

विष्णु की पूजा –हवन करके प्रसाद ग्रहण करने लगे। आन देव–कल्पित देवी देवताओं पर दृष्टि नहीं देते। अब सभी प्रकार की झिझक मिट गयी सभी भक्तजन निर्भय होकर सृजनहार–विष्णु का ही स्मरण–भजन करने लगे।

''दुहा''

पंथ चल्यौ प्रहलाद कौ, ज्ञान ध्यान उपदेश।
भक्ति बढ़ी भगवंत की, सहै न सक्यौ नरेस।।२७५।।

इस प्रकार से प्रहलाद पंथ प्रारम्भ हुआ जिस के मूल में ज्ञान, ध्यान और उपदेश था। जिस प्रहलाद पंथ से भगवान की भक्ति की अभिवृद्धि हुई किन्तु नरेश दैत्यराज को यह सभी कुछ सहन नहीं हुआ।

''चौपई''

अस्वर खीज कर बोलै बैना, प्रहलाद समझ हमारी सैना।
सुरनर नागर रैतस मेरी, अब तुम सरण वचै किस कैरी।।२७६।।

असुर क्रोधित होकर कहने लगा रे प्रहलाद! तू मेरी सेना को समझ सुर, नर, नागरिक, वनवासी सभी मेरी प्रजा सेना है अब तुम किसकी शरण ग्रहण करके अपने को बचाओंगे।

''प्रहलाद उवाच''

''चंपक छन्द – राग सोरठद्ध''

मै सरणा जिसका लीया, जिन सुरनर नाग जु कीया।
रिवै चंदा नछत्र भासै, सब उस की दुती प्रकासै।।२७७।।

हे पिता जी! मैने उसकी शरण ग्रहण की है जिसकी शरण सुरनर नाग आदि ने ली है जिसने सम्पूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति की है जो भी प्रकाशमान जगत् में है जैसे सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, तारे सभी कुछ उसी परमात्मा के प्रकाश से प्रकाशित होते है।

जिण ने चवदै भवण रचाया, धू सेस कौरम लग गाया।
जाकुं निगमै त्रिलोकी गावै, ताका पहला पार नहीं पावै।।२७८।।

जिस सत्तावान शक्ति ने चवदह भवनों की रचना की है। ध्रुव, शेष, कूर्म आदि देव, दानव, मानव की सृष्टि की है जिनका वेद, आगम निगम त्रिलोकी गुणगान करते हैं उनका आदि अन्त नहीं है कौन अपार का पार पा सकता है।

जिन कीया पवन सूं पांणी, अरू व्योम अगन धर जांनी।
हरि च्यार खान जिन कीया, तामै लख चौरासी जीया।।२७९।।

जिन्होंने आकाश, वायु, तेज, जल और धरणी की उत्पत्ति की है हरि ने चार खैणी जैरज, उद्भिज, अण्डज, स्वेदज की रचना की है। इन्ही चार योनियों में ही चौरासी लाख जीव योनियों की उत्पत्ति की है।

हरि विश्व सकल कौ नाथा, सब रिजक मोत उस हाथा।
जीकै इंड कदास अखण्डा, जाकै रोम कोट ब्रह्मंडा।।२८०।।

हरि ने ही सम्पूर्ण विश्व को नाथा–स्वाधीन किया है। नियमित किया है सभी कुछ जीवन–मरण उसी के हाथ मे है जिस परमात्मा के हाथ में यह इण्ड प्रत्येक शरीर है आकाश से लेकर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड भी उसी की रचना है उन्ही

की शक्ति के अधीन है जिनके रोम-रोम कोटि ब्रह्माण्ड है।

जांकु सिव ब्रह्मादिक गावै, वां को पार सेस नहीं पावै।
मैं सरणा उसका लीना, तातै गुरु प्रताप तै चीना।। २८१।।

जिस परमात्मा के गुण गान शिव ब्रह्मादिक करते हैा जिनका पार शेष भी नहीं पा सकता। मैंने शरणा गति उसकी ही लीनी है यह सभी कुछ गुरु प्रताप से ही स्मरण समझ आयी है।

हरि इष्ट हमारे सोई, जांकु चीन्है विरला कोई।
मैं नाम उसी का लेउ, नित चरण कंवल कूं सेऊ
तब प्रहलाद खंभ के बांधा, असर खड़ग सिर पै साधा।।२८२।।

वही सर्वज्ञ सेर्वेश्वर ईश्वर ही मेरे इष्ट देवता है जिनको कोई विरला ही पहचानता है मै नाम उसी ईश्वर विष्णु का ही लेता हूँ। उन्हीं के चरण कमल मे चित लगाता हूँ। ऐसी प्रहलाद के मुख से बात सुनकर दैत्यराज हिरण्यकशिपु ने प्रहलाद को खंभे से बांध दिया और असुर ने खड़ग सिर पर उठा लिया।

''असुर उवाच''

''दुहा''

कहां विसनु ऊं बसत है, प्रहलाद बतावौ मोहै।
अब मै तोकूं मार हूं। कून छुड़ावै तोहै।।२८३।।

तुम्हारा विष्णु कहां रहता है अब मुझे बतलावो प्रहलाद। अब मैं तुमको अपने हाथों से मारूंगा। तुम्हे कौन छुड़ायेगा।

''प्रहलाद उवाच''

मो मै तो मै खड़ग मै, सकल ओर भरपूर।
मंहि धणी या खंभ मै, तम मत जाणौ दूर।।२८४।।

हे पिता श्री! मेरे में, तुम्हारे में, इस खड़ग में भी है जो सकल सम्पूर्ण स्थान वस्तुओं में भरपूर है मेरा धणी-मालिक इसी खंभे में भी है। आप उसे दूर नहीं जानो।

''असुर उवाच'' ''छंद पधड़ी''

मोह बताय कहां खंभ मांह, कर कोप असर जब खड़ग बांह।
फाटौ ज खंभ भयो दोय फाल, कर गाज प्रगटे सिह पंचाल।।२८५।।

रे प्रहलाद। मुझे बताओ कहां है खंभ मे तुम्हारा विष्णु। कुपित होकर असुर ने जब खड़ग चलाया, खंभ फटकर बीच में से दो टुकड़े हो गये। उसी सयम गर्जना करते हुए सिंह रूप नारायण नृसिंह प्रगट हो गये।

माहा तेजब तन नरसिंघ रूप, सै कंपमान भयो असुर भूप।
कर गिरयों खड़ग भागौ पुलाय, डेहली जु बीच जब गहयौ है धाय।२८६।

महा तेजवान शरीर धारी भगवान नृसिंह का रूप था। उसे देखकर असुर भूप कंपायमान हो गया। हाथ से खड़ग गिर पड़ा और वहां से भागने लगा। देहली द्वार के बीच जब दौड़कर पहुँच गया तब नृसिंह भगवान ने उसे पकड़ लिया।

कर ग्रह उछंग लीयौ उठा, इल अंबर बही उरू लीयौ बैठाय।
विध वर दीयो असर संभार, त्रियोदस मास कीयौ बधार।।२८७।।

भगवान ने हाथ पकड़ कर असुर को ऊपर उठा लिया। धरती और आकाश के बीच में ही अपनी जंघा पर दैत्य को बिठा लिया। विधि ब्रह्माजी ने जो वर दिया था उसे दैत्यराज याद करो इस समय तेहरवां मास अधिमास हो रहा है तुमने मांगा था उससे बाहर से रचना हो रही है।

अरध बंब सूर दिवस नहीं रात, नरदेव नाही नरसिघा गात।
लौह बजर नहीं लीयौ नख बधार, ब्रह्मा जु वाच सबद इहै टार।।२८८।।

किन्तु अन्य सभी संध्या वेला का समय है न तो दिन ही है और न रात ही है सूर्य आधा अन्दर आधा बाहर है न तो यह शरीर नर का है और नहीं देवता का है यह तो आधा नर और आधा सिंह है। यह देख मेरे पास लौह का बना हुआ बज्र नहीं है मैने अपने हाथो के नाखुन बढ़ा लिये है ब्रह्माजी के वचनो को पूर्ण किया है।

महा जुध बुध नर सिध धरि, नख उदर बिदार दियो अस्वर मार।
भयंकर बदन विकराल दांत, उदर बिदार गल लीयो है आंत।।२८९।।

हरि ने महा योद्धा बुद्धिमान नृसिंह का रूप धारण किया। बिना किसी

शस्त्र से नख बढ़ाकर नखों से ही उस दैत्य का उदर फाड़ डाला और मार डाला। भयंकर शरीर और विकराल दांतो से नखों से उदर को विदर्ण कर डाला। दैत्यराज की आंते बाहर निकाल दी और मार डाला।

महा तेजवंत अरू रक्त नैन, सिर पूंछ आन विरधी चैन।
अस्वर मार करी है जुं गूंज, भय कंपमान तिहुं लोक धूज।।२९०।।

नृसिंह रूप विष्णु महान तेजस्वी थे। उनकी आँखें लाल थी उनका सिर और पूँछ तथा मुख अभिवृद्धि को प्राप्त हो रहा था। भगवान् ने असुर को मारकर भयंकर गर्जना की थी भय से तीनों लोक कंपाय मान होकर थरथर कांपने लगे थे।

ब्रह्मादि सिव सुर देव राज, श्रीया सहत आए दरसावन काज।
महा प्रलय काल को देख, सनमुख हेात नहीं देव एक।।२९१।।

ब्रह्मादिक, शिव, इन्द्रराज देवता लक्ष्मी सहित दर्शन करने के लिये आये थे। उस महाप्रलय काल को देखकर भगवान् के सामने कोई भी देवता सन्मुख नहीं हो सके।

''दुहा''

श्री न सनमुख आव ही, नरसिघ तेज ही जाय।
सनमुख रहै पूठी सरी, तेज सहयौ नहीं कोय।।२९२।।

लक्ष्मी जी भगवान नृसिंह के सामने नहीं आ रही है। नृसिंह का असहेय तेज है सन्मुख रहते हुए भी पीछे मुड़ गयी क्योकि तेज सहन नहीं हो रहा था।

जैसा छूना सीह का, रंचक भै नहीं होय।
यूं प्रहलाद निरभै खड़ै, और डरे सब कोय।।२९३।।

जिस प्रकार से सिंह का छोटा बच्चा रंचक (थोड़ा) भी भयभीत नहीं होता है ऐसे ही प्रहलाद भक्त भी निर्भय खड़े रहे।

जन समुदाय डरने लगे।
जिनके हित अवतार लै, तांह उपर नेह।
दास कहै सोई करै, भक्त बछल बिड़द एहै।।२९४।।

जिनके लिये हरि ने अवतार धारण किया था उस पर तो बहुत ही स्नेह था भगवान् भी अपने दास–सेवक की बात मानते हैं जैसा आदेश देते हैं वैसा ही करते हैं भगवान् भक्तवत्सल है। भक्त भगवान के गुणों का गान करते है।

नरिसघ तेज सुर देख कै, रहै प्रहलाद दिस झाख।
प्रहलाद तबै नरसिघ सु, अरज करी मुख भाख।।२९५।।

भगवान् नृसिंह के तेज को देखकर देव प्रहलाद की तरफ झांकने लगे तब प्रहलाद ने नृसिंह भगवान से अपने मुख से प्रार्थना की–

''प्रहलाद उवाच''

''चौपई''

अहौ मम इष्ट देवन के देवा, सुरनर नाग लह को भेवा।
नमो नरसिघ तम इष्ट हमारै, मै भयो निरभै प्रभु सरण तमारै।।२९६।।

हे मेरे इष्ट देवता के भी देवता आपका अन्त सुरनर नाग मुनिजन कोई भी नहीं पा सकता है नृसिंह! मैं आपको बारम्बार नमन करता हूँ आप ही हमारे इष्ट देवता है। हे प्रभु मैं अब आपकी शरण ग्रहण करने से निर्भय हो गया हूँ।

तुम्हारो तेज नै जीवै बरनी, धूजै गीगन अग्न जल धरणी।
अमी दिष्ट प्रभु अब ही कीजै, सुर नर नाग सुखी कर लीजै।।२९७।।

हे हरि। आपके ही तेज से सम्पूर्ण प्रकृति जीवित रहती है। आपके ही तेज से गगन, अग्नि, जल और धरती कंपायमान हो जाती है। हे प्रभु! अब आप मेरे पर अमृत दृष्टि कीजिये और सुरनर, नाग सभी को प्रसन्न कर दीजिये।

ताही छिन भए सीतल रूपा, रूप मनोहर बहुत अनूपा।
देव सकल सुन्मुख भए बाढे, दरसन देख प्रेम बहु बाढै।।२९८।।

उसी क्षण प्रहलाद की विनती श्रवण करके भगवान् ने अपने को शीतल रूप में प्रगट किया। दिव्य मनोहर अद्भुत सौम्य रूप में भगवान् प्रगट हो गये। अद्भुत अतुलनीय रूप को देखकर देवता लोग भी सन्मुख सामने प्रगट हो गये। सम्पूर्ण देवता सामने खड़े हुए थे भगवान् का दिव्य अनूप दर्शन करके कृतार्थ हो रहे थे दर्शन से प्रेम की अभिवृद्धि हो रही थी।

''दुहा''

ब्रह्मा सीव इन्द्रादि सुर, प्रसै प्रभु के पाय।

हाथ जोड़ अस्तुती करत, अहौ सुरन के राय।।२९९।।

ब्रह्मा, शिव, इन्द्रादिक देवता सभी प्रभु के चरणों में प्रणाम करते हैं हाथ जोड़कर स्तुति करते हुए अपने को बहुत ही सौभाग्यशाली समझते हैं–

''देव उवाच''

''छन्द मोतीदाम''

नमो नरसिंघ म्हा तेजवंत, तिहु लोक भए भयवान जंत।

नमो नरसिघ संघारण दैत, नमो नरसिघ रूप सदा तोहै जैत।।३००।।

देवताओं ने भगवान नृसिंह की स्तुति करते हुए नमन किया और कहा– हे नृसिंह! आपको बारंबार नमस्कार है। आप महा तेजस्वी हो, आपके इस विकराल रूप से तीनों लोक भयभीत हो गये। हे नृसिंह! आपको नमन है, आपने दैत्यो का संहार करने के लिये यही रूप धारण किया है नृसिंह रूप हरि आपको नमन है सदा आपकी जय हो जय हो।

नमो नरसिघ भेस नमो सिघ नाद, तिंहु लौका है मांहि सुन्यौ तेहि साद।

नमो सिघ देव नमो सिंघ राज, भवन चत्रदस सुनि तोहि गाज।।३०१।।

नृसिंह भगवान को नमन करते हैं। आपकी वेशभूषा को नमन है। आप की सिंह नाद को नमन है तीनों लोकों में आपकी नाद ध्वनि सुनी गयी है सिंहदेव को नमन है सिंहराज को नमन है। चौदह भवनों में तेरी नाद गर्जना सुनी जा रही है।

नमो सिघ गात नमो सिघ अंग, नमो सिघ देह दीरघ उतंग।

नमो सिघ मुख नमो सिघ नैन, नगो सिघ कंध वरणै कुन वैन।।३०२।।

सिंह शरीर धारी को नमन है। आपके सिंह अंगों को नमन है। आपके सिंह मुख को नमन है आपके सिद्ध नयनो को नमन है आपके सिद्ध कंधो को नमन है आपकी महिमा का वाणी द्वारा वर्णन कौन कर सके? आप पूर्ण रूपेण आदरणीय हो।

नमो सिघ हाथ नमो हरि पांय, नमो सिघ पूंछ वरण्यो नहीं जाय।

नमो नरसिघ जु आद पुरुष, हम श्रब देव चले तोह रूख।।३०३।।

आपके सिंह हाथों को नमन है। आपके चरण कमलों को नमन है। आपकी विशाल पूँछ को नमन है। आपके स्वरूप का वर्णन नहीं किया जा सकता। आदि पुरुष नृसिंह को नमन है। हम सभी देव लोग आपके इशारे से चलते हैं।

अग्न चंद सूर दूती तौ प्रकास, पांचु तत मांहि रहे तम भास।
नमो प्रहलाद हेत अवतार, नमो तुझ लीये भवपार।।३०४।।

अग्नि, सूर्य, चन्द्र मे जो प्रकाश है वह आपका ही है। पांचों तत्वों में जो ज्योति प्रकाशित होती है वह तुम्हारी ही है। प्रहलाद की रक्षा हेतु आपने अवतार लिया है, हम आपको नमन करते हैं। आप की कृपा होती है तो देव, दानव, मानव सभी संसार सागर से पार उतर जाते हैं।

नमो नर लेप नमो नृकार, सुर संतन हेत धरौ अवतार।
नमो श्रब व्यापक म्हा विसन, भक्तन काज धरयौ तन कृसन।।३०५।।
नमो हरि भक्त बछल दयाल, हम सरण तोहि करो प्रितपालद्ध

निरलेप संसार की मोहमाया से निर्लिप्त को हमारा नमन है। निरंकार निरंजन को हमारा नमन है। सुर संतो हेतु अवतार धारी को हमारा नमन है सर्वव्यापक को नमन है महाविष्णु को हमारा नमन है। भक्तों के हेतु शरीर धारी कृष्ण को नमन है। भक्त वत्सल, दीन दयाल हरि को हमारा नमन है। हम आपकी शरण में है। हमारी रक्षा करो–रक्षा करो।

''दुहा''

भिन्न भिन्न अस्तुती करी, सुर सुरनै कही कर जोड़।
पाहि पाहि तुम सरण हरि, राख चरण की ओड़।।३०६।।

देवताओं ने भिन्न भिन्न प्रकार से स्तुति की और हाथ जोड़कर कहने लगे। हमारी रक्षा करो–रक्षा करो आप ही हमारे शरणागत के आधार हो। आप अपने चरणों की ओट में रखे हमारी रक्षा करें।

सुन अस्तुति सुरन की, प्रसन्न भए भगवान।
अमी दिष्ट सुं दैख कै, करत भए सनमान।।३०७।।

देवताओं के द्वारा की हुई स्तुति को सुनकर भगवान् प्रसन्न हो गये। भगवान् ने देवताओं को अमृत दृष्टि से देखा और उनका सम्मान करने लगे।

''कवित कुंडलियां''

नरसिघ तब प्रहलाद कै, हस्त कंवल धर सीस।
तुमरे निज भक्ति है, यूं बोले जगदीश।।
युं बोले जगदीश, तम नाम की टेक न छाड़ी।
जु दुख दीन्हो दैत, त्यूं मम प्रीत जु बाढी।
मै पल पल आयौ नही, तुम तज्यौ न मन रंग।
भक्त बछल बिड़द काज है, यूं भाखै नरसिघ।।३०८।।

भगवान् नृसिंह ने तब प्रहलाद के शीश पर अपना हस्त कमल रखा। हे प्रहलाद! तुम्हारे में स्वत: ही भक्ति है इस प्रकार से जगदीश अपनी मधुरी वाणी में कहने लगे। जगदीश्वर कहने लगे तुमने हरि नाम की टेक रटन सहारा नहीं छोड़ा, जिस प्रकार से भी दैत्य ने दुख दिया उसी प्रकार से मेरे मे प्रीत बढ़ती गयी, मैं उस पल–समय मे आया नहीं तो भी भक्ति का रंग चढ़ता ही गया प्रेम भाव बढ़ता ही गया भक्त का वात्सल्य भाव उसके बिड़द–महिमा को बढाने के लिये ही होता है इस प्रकार से भगवान् नृसिंह ने कहा।

मांग मांग प्रहलाद तुम, प्रसन भयो में तोय।
जो तुमरी अंछा हुवै, मम अग्या सुं होय।।३०९।।

हे प्रहलाद! वरदान मांगो। मैं तुम्हारे पर अति प्रसन्न हूँ जो भी तुम्हारी इच्छा हो वही मांगो। मेरी आज्ञा से वही होगा जो तुम मांगोगे।

''चौपई''

मागु काहा सुनो मम सामी, तुम सब जानो अंतर जामी
सकल विश्व को दु:ख मोहि दीजै, सब ही जीव सुखी कर लीजै।।३१०।।

हे मेरे स्वामी! मैं आप से क्या माँगू आप तो अन्तर्यामि हो। यदि हो सके तो सम्पूर्ण विश्व का दुख मेरे को दे दीजिये। सम्पूर्ण जीवो को सुखी कर दीजिये।

स्वामी देकर उरन होई, सेवक लहै सा विरथा सोई।
स्वामी सदा कृपाल ही रहै, सेवक सदा टहल मै बहै।।३११।।

स्वामी तो देकर अपना ऋण उतार देता है किन्तु भक्ति के बदले यदि सेवक कुछ लेता है तो उसका लेना व्यर्थ ही हो जाता है, स्वामी सदैव कृपा भाव ही रखे और सेवक सदैव सेवा में ही रहे यही उत्तम है।

प्रेम भक्त अस साधु संगत, कृपा कर दो नरसिघ।
जौ संगत मै आए लोई, कोड़ तेतीसु तारै सोई।।३१२।।

आप सदा ही प्रेमा भक्ति और साधु भक्ति कृपा करके प्रदान कीजिये। हे देव! जो भी संगति में आये हैं उन तैतीस कोटि लोगो को पार उतार दीजिये।

पांच क्रोड़ तेरे संग तासूं, बाकी जुग जुग सबै उधारूं।
चौथे पोहर मिलै तेतीस, अब राज करो बोले जगदीस।।३१३।।

पाँच करोड़ का उद्धार प्रहलाद तुम्हारे साथ ही हो जायेगा। बाकी बचे हुए युगों में चौथे प्रहर में तुम से मिल जायेगे। सात करोड़ त्रेता युग में, नौ करोड़ द्वापर युग में और बारह करोड़ कलयुग में पार हो जायेगे। अब तुम राज करो प्रहलाद।

सुरनर नाग राज सब फीको, तुमरो नाम लगे मोह नीको,
मोकु राज काज नहीं भावै, चरण सेउ मेरे मन आवै।।३१४।।

सुर नर नाग आदि राज सब मुझे व्यर्थ लगता है। आप का नाम ही मुझे अच्छा लगता है। मुझे राजकाज अच्छा नहीं लगता। आपके चरणों की सेवा करूँ यही मेरे मन को अच्छी लगती है।

राजकाज तुम कुं ही देऊ, जब लग मै वैकुण्ठ न जेऊ।
मेरी आज्ञा करो तुम राजु, अनन्य भक्ति दे सारू काजु ।।३१५।।

हे प्रहलाद! यह तुम्हारे पिता का राज्य तो मैं तुम्हें ही दूंगा बिना राज्य दिये मैं वापिस वैकुण्ठ नहीं जाऊंगा। इसलिये मेरी आज्ञा का तुम पालन करो और राज करो। तुम्हें मैं अनन्य भक्ति दूँगा। इससे तुम्हारा कार्य बन जायेगा (न

अन्य –अनन्य '' एक मेव इष्ट देव की भक्ति।)

मान वचन प्रहलाद जु मोरा, बैर बैर मै करूं निहोरा।
तुम नहकाम भगत मोह प्यारो, तोसु कबहु न होउ न्यारो।।३१६।।

हे प्रहलाद। मेरा वचन स्वीकार करो मैं तुम से बार बार निहोरा निवेदन करता हूँ। तुम जैसा निष्कामी भक्त मुझे बहुत ही प्यारा है इसलिये मैं तुम से कभी अलग नहीं हो सकता।

भक्त रिण मेरे सिर रहै, प्रेम पास बाध्यौ कहां जै है।
भक्त बछल मेरो बिड़द कहीये, तुम कु कुछ दीयां मोहि चहीये।।३१७।।

भक्त का कर्जा मेरे सिर पर रहेगा। प्रेम पास में बंधा हुआ मैं कहां जाऊँगा। भक्त वत्सलता मेरा स्वभाव है। मैं कुछ तुम्हे देना चाहता हूँ।

कियो तिलक छत्र धर दीयौ, राज को साज नहीं इछ्यो।
प्रहलाद को हठ, दीनो हरि राज।।३१८।।

प्रहलाद को राज तिलक किया और सिरपर राज छत्र पहना दिया राजा के शृंगार की प्रहलाद को कोई इच्छा नहीं थी फिर भी हरि के आगे हठ नहीं किया। राज स्वीकार किया।

जय जय सबद भयो तिहु लोका, उपज्यौ हरख मिट्यौ भय सौका।
गिगन विवान रहै सुर छाई, पुसपां की विरखा बरसाई।।३१९।।

तीनों लोकों में जय जयकार सबद होने लगा। खुशी की लहर प्रकट हुई और सभी प्रकार का शोक मिट गया।

विसनु भये जब अंतर धाना, सुर गये अपने अस्थाना।
हरि कौ भक्त भयौ नर नाहा, घर घर भक्त चड़यौ परवाहा।।३२०।।

भगवान् विष्णु जब अन्तर्धान हो गये तब देवता भी अपने अपने स्थान को चले गये। हरि का भक्त प्रहलाद नर श्रेष्ठ हुआ। भक्त प्रहलाद घर घर मे समानीय राजा हो गया। लोक प्रिय राजा के रूप मे प्रसिद्ध हो गया।

जांको भूप भक्त जो होई, प्रजा भक्ति करै सब कोई।
कथा कीर्तन मंगलैचारा, विसन भजन लागी ततकारा।।३२१।।

जिस देश में राजा भक्त होगा उसकी प्रजा भी भक्त होगी। (यथा

राजा तथा प्रजा) सभी भक्तजन भगवान् की कथा, कीर्तन, मंगलगान करने लगे। विष्णु के भजन की ध्वनि गुंजायमान होने लगी।

हरि की भक्ति करै अखंडा, प्रहलाद पंथ चल्यौ नव खंडा।
सतयुग राज प्रहलाद जुभए, सुख संपदा नाना विध छए।।३२२।।

हरि की अखण्ड भक्ति करने लगे। अखण्ड प्रहलाद पंथ नव खण्डों में प्रारम्भ हो गया। सतयुग मे राज प्रहलाद का था नाना प्रकार की सुख संपदा थी। सभी धन ऐश्वर्य से युक्त थे।

लाख बरसलु जीवौ सोई, अकाल मृत मरै नहीं कोई।
प्रजा सुखी संकट नहीं आनै, सब कोई करै विसन को ध्यानै।।३२३।।

उस समय आयु एक लाख वर्ष तक की थी। अकाल मृत्यु से कोई नहीं मरता था। सभी लोग भगवान् विष्णु का ध्यान करते थे।

राजा प्रजा पुत्र सम जानै, परजा नृपति ताकर मानै।
बारै मास वृछ फल फूलै, रिख ध्यान करै जीमै फल मूलै।।३२४।।

राजा प्रहलाद प्रजा को पुत्र के समान मानते थे। प्रजा भी राजा को पिता समान मानती थी। बारहों महिना वृक्ष फलते फूलते थे। ऋषि हरि का ध्यान करते और फल मूल का भोजन करते थे।

प्रहलाद करै विसनु कौ ध्यान ही, राजकाज चिंता नहीं आ नही।
होम जाप पूजा मन लावै, कथा कीरतन हरि गुण गावै।३२५।।

प्रहलाद भगवान् विष्णु का ध्यान करता था उन्हेंराजकाज की चिंता नहीं थी। हवन, जप, पूजा में मन लगाते थे। कथा कीर्तन द्वारा हरि के गुणों का गान करते थे।

चक्र सुदरसन विसुन पठाए, प्रहलाद प्रज रिछा कु आऐ।
अज्ञा मेट अनीती करै, जीको सीस सुदरसन हरै।।३२६।।

भगवान विष्णु ने अपना सुदर्शन चक्र प्रहलाद की रक्षा के लिए भेजा प्रहलाद और प्रजा की रक्षा के लिये सुदर्शन चक्र आया था। जो राजाज्ञा मेटकर अनीति करता था उसका सिर सुदर्शन काट देता था।

हुकम मेट सिकै कौ नांही, चक्र सुदरसन सु डरै पांही।

जैसे कंवल जल मे नहीं छिपै, युं प्रहलाद न माया लिपै।।३२७।।

भगवान् का भेज हुआ सुदर्शन चक्र ही मानो राज काज करता था। उसका हुकम कोई नहीं टाल सकता था। सभी चक्र सुदर्शन से डरते थे। जिस प्रकार से जल मे कमल डूबता नहीं है जल में ही उत्पत्ति होती है जल में ही रहता है फिर भी जल से लिपायमान नहीं होता जल में डूबता नहीं है, उसी प्रकार से प्रहलाद भी राजकाज करते हुए भी माया मे लिपायमान नहीं होता था।

''दुहा''

पांच करोड़ प्रहलाद संग, संत गये सुरलोक।
जुरा कष्ट व्यापै नही, जनम मरण भव रोग।।३२८।।

सतयुग मे प्रहलाद के संग पाँच करोड़ सुरलोक पहुँच गये, वहाँ पर बुढ़ापा, कष्ट, रोग नहीं होते हैं। जन्म मरण का रोग है वह भी सदा के लिये मिट जाता है।

इन्द्र पदी प्रहलाद ही पाई, नाना सुख वरण्य न जाई।
सतयुग मै प्रहलाद उधारै, त्रेता हरिचंद सत सुभारे।।३२९।।

प्रहलाद ने इन्द्र पदवी को प्राप्त किया अनेकानेक सुखों को प्राप्त किया जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। सतयुग मे अपने साथ प्रहलाद ने पाँच करोड़ पार उतार दिये। त्रेता में सत्यवादी राव हरिशचन्द्र ने सत्य के बल पर सात करोड़ पार उतार दिये।

रोहितास कंवर तारादे रानी, विसुन हेत पर हाथ विकानी।
नरपत नीच घर पांणी छाल्यौ, तन धन दे हरि मार्ग चाल्यौ।।३३०।।

रोहिताश्व कंवर तारादे रानी ने भी हरिश्चन्द्र का साथ दिया विष्णु के समर्पित होकर पराये हाथों मे बिक गये। स्वयं नृपति हरिश्चन्द्र ने डोम के घर पाणी भरा, सत्य की मर्यादा हेतु तन, धन देकर हरि मार्ग धर्म मार्ग पर चलें।

हरि हेत बिक्यो सत नहीं टरयौ, सात क्रोड़ ले हरिचंद तरयो।
द्वापर युग सुधिष्ठर राय, सती द्रोपदा कुंता मांय।।३३१।।

हरि धर्म हेतु तीनों प्राणी काशी में जाकर बिक गये किन्तु सत्य मार्ग को नहीं छोड़ा इसलिये अपने साथ सात करोड़ को लेकर सत्यवादी हरिश्चन्द्र संसार सागर से पार हो गये। मुक्ति को प्राप्त हो गये। जन्म मरण भय से निवृत हो गये। द्वापर युग मे राजा युधिष्ठिर साथ में सती द्रोपदी माता कुंती के सहयोग से

उद्धार हुआ।

अर्जन भीम नकुल सहदेव, पांचु पाण्डु करी हरि सेव।
अजर जरे असतन भाखै, कृसन अज्ञा सिर पर राखे।३३२।।

द्वापर मे अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव ने अपने बड़े भाई युधिष्ठिर के साथ ही हरि सेवा की थी। जरणा –काम क्रोधादि को जलाकर स्वयं शुद्ध हुए। असत्य नहीं बोला, धर्म पर अडिग रहे, भगवान् कृष्ण की आज्ञा शिरोधार्य की

जांका कारज हरि जी करया, नवक्रोड़ ले सहजे तरया।
कलजुग मे हरि आप विसनौ, विसन जपायौ जाप।।३३३।।

उन पांच पाण्डवों का कार्य हरि ने स्वयं किया जिससे नौ करोड़ को लेकर सहज ही में पार उतर गये, हरि के वैकुण्ठ धाम को पहुँच गये कलयुग में हरि आप ही आये और विष्णु का जप करना बताया।

जोग सरूप सतगुरू धारया, प्रहलाद वचन सुं आप पधारया
सतगुरु सुध कृपा चाई, च्यार वरण कुं भक्ति दिढाई ।।३३४।

भगवान् विष्णु सतगुरु के रूप में आये और योग का स्वरूप धारण किया। प्रहलाद के वचनों को पूरा करने के लिये स्वयं विष्णु ही आये। सतगुरु शुद्ध कृपा करना चाहते थे इसलिये चारों वर्णों के लोगो को भक्ति का मार्ग बताया। विष्णु भक्ति को चारों वर्णों में दृढ़ता से प्रवेश करवा दी।

जम्भ गुरु कीवी परमोध, अपना जन सब लिया सौध।
जीव दया हरि नाम बताया, सील सिनान सतपंथ चलाया।।३३५।।

जम्भगुरु भगवान विष्णु ने गुरु रूप में आकर कृपा की और अपने प्यारे लोगों की खोज करली। जीवों पर दया करना, हरि विष्णु के नाम का जप करना, शील, स्नान करना यह सतपंथ जाम्भोजी सत्गुरु देव ने चलाया था।

सत छोत रूत टाल ही जाणै, ईधण बांणी पांणी छाणें।
जम्भगुरु वैकुण्ठ सिधारै, कोड़ द्वादस पार उतारें। ३३६।।

सात प्रकार छोत पंच ऋतुवंती न्यारो, इन्ह पर ध्यान देना। अपना बचाव करना। पाणी बांणी, इन्धणी इतना लीजै छांण। इस प्रकार से उन्नतीस नियम बतला कर विश्नोई सतपंथ की स्थापना की थी। जम्भगुरु जी जब वैकुण्ठ पधारे इन नियमो से बारह करोड़ का उद्धार इस कलयुग में होगा। यही आदेश उपदेश उनका था।

''दुहा''

पांच सात नव बाहरा, मिलै कोड़ तैतीस।
बिछड़िये प्रहलाद सुं, सौ मिलै जगदीस।।३३७।।

पांच सतयुग मे, सात त्रेतायुग मे, नौ द्वापर युग मे और बारह कलयुग मे इस प्रकार चार युगों में प्रहलाद के बिछड़े हुए जीव वापिस मिला दिये।

कोड़ तेतीसुं संत सब राजै, पारीजाता मध विराजै।
संत करै नित इमृत पान, वैसन कुं मनसा जु बिवान ।।३३८।।

भगवान् के वैकुण्ठ धाम मे संत विराजमान होकर शोभा देते हैं पारिजात वृक्ष के नीचे विराजित हो रहे हैं। संत वहां पर अमृत का पान करते है। सवारी के लिये मनसा विमान पर बैठकर उड़ान भरते हैं स्वेच्छा से भ्रमण करते है।

साधा कुं हरि दरसन देहै, जीवन मुक्त परम सुख लैहै।
साध समागम नित जांहा होई, ताको सुख वरणै काहां कोई ।।३३९।।

साधु जनों को हरि दर्शन देते हैं वहाँ जीवन मुक्त होकर परम सुख की अनुभूति करते हैं। वहाँ सदा ही साधु समागम सतसंग होती है उस सुख का वर्णन कौन कर सकता है ?

भगत भगवंत महमा अपारा, सारद सेस नहीं पावै पारा।
उधो दास कहै कर जोरी, कांहा लू वरण्य मो मत थोरी।।३४०।।

भगवान् तथा भगवान् के भक्तों की महिमा अपार है। शारद, शेष भी पार नहीं पा सकते। ऊधो दास हाथ जोड़कर कहते है कि मैं मन्द बुद्धि कहां तक भगवान के यश का वर्णन करूं।

मछर उडेग नहीं पहुंचे, खग पार न पावै खगपंत सोचे।
प्रहलाद महमा अनंत अभेवा, अलप बुध कहा जानु भेवा।।३४१।।

जिसका पार गरुड़ भी नहीं पा सकता, मच्छर वहाँ कैसे पहूँच सकता है। मच्छर आकाश में उड़ान भरेगा तो नहीं पहुंच पायेगा। खगपति की भाषा तो खगपति ही जाने । कवि कहता है कि मेरी क्या औकात है कि मै जान सकूं।

हरिजन हरि मिश्रत गुन गाये, प्रहलाद चिरत ए वरन सुनायो बालक बोलें तोतरी बानी, मात पिता उर लह पिछानी।।३४२।।

विसनु चरित

''चौपई''

श्री गुरु संत चरण सिरनाऊ, अज्ञा होय विस्नु जस गाउ।
महा विस्नु को चिरत अपारा, सुरनर मुनि जन लहै न पारा।।१।।

श्री गुरुदेव संत चरणों में शीश झुकाता हूँ। आप संत गुरुओं की आज्ञा से विष्णु का यशोगान करता हूँ महाविष्णु का चरित्र अपार है। सुर नर मुनि जन जिसका पार नहीं पा सकते।

पार ब्रह्म विस्नु घण नामी, विस्नु केवल अतंरजामी।
विस्नु पूरण परम अखंडा, जाकै रोम कोट ब्रह्मंडा।।२।।

पर ब्रह्म विष्णु अनेकानेक नामो से जाने जाते हैं। विष्णु कैवल्य अन्तर्यामी है। विष्णु पूर्ण ब्रह्म अखंड है। जिनके प्रत्येक रोम में करोड़ों ब्रह्माण्ड है।

विस्नु अलख लखै नहीं भेवा, विस्नु है परमात्म देवा।
विस्नु अवगत गत को जानै, बुध सारू सो बोध बखानै।।३।।

विष्णु अलख है उनका भेद लिया नहीं जाता। विष्णु ही परमात्मा देवता हैं। विष्णु अवगत है उनकी गति को कौन जान सकता है? सभी अपनी बुद्धि के अनुसार ही अपना बोध (अनुभव) का बखान करते है।

साम सेत विस्नु नहीं पीला, हरया लाल उष्ण नहीं सीला।
विष्णु कै नहीं रूप न रेखा, लिख्या न जावै विस्न अलेखा।।४।।

विष्णु श्याम, श्वेत, पीला, हरा, लाल नहीं है, उष्ण, शीतल भी नहीं है विष्णु के रूप रेखा नहीं हैं। विष्णु अलेख अवर्णनीय है लेखनी की पहुँच नहीं

है।

विस्नु निकट नहीं कुछ दूरा, विस्नु पूरण है भरपूरा।
विस्नु है अछित अपारा, विस्नु रचै दुयतिय है सारा।।५।।

विष्णु सर्वत्र व्यापक है। दूर या निकट है ऐसा कुछ नहीं कहा जा सकता। विष्णु पूर्ण है सर्वत्र भरपूर है। विष्णु अक्षय है जिनका पार नहीं पाया जा सकता। द्वितीय संसार की रचना विष्णु ही करता है।

विस्नु सब ईसन के ईसा, जगन्नाथ विस्नु जगदीसा ।
विस्नु आद मध्य अवसाना, विस्नु पूरण परम निधाना।।६।।

विष्णु ही सभी देवताओं के भी देवता–ईश है जगत् के नाथ स्वामी जगदीश्वर विष्णु ही है। विष्णु आदि मध्य और अंत भी है विष्णु पूर्ण परम् निधान–खजाना है।

विस्नु निरगुण रूप अनूपा, विस्नु है विज्ञान सरूपा।
विस्नु निरंजण है निराकारा, भक्त हेत धर है साकारा।।७।।

विष्णु निर्गुण अद्भुत रूप में है, विष्णु ज्ञान विज्ञान स्वरूप है, विष्णु निरंजन निराकार है। भक्त के लिये साकार रूप धारण कर लेते हैं।

विस्णु अंछा कर ओंकारा, त्रिगुण मायाकर विसतारा।
पांच तंत कर कीयों इंडा, विस्नु सता अखिल ब्रह्मंडा।।८।।

विष्णु की इच्छा से ओंकार ध्वनि प्रकट होती है। विष्णु ही अपनी त्रिगुणी माया से विस्तार करते हैं। पाँच तत्व आकाश, वायु, तेज जल और धरणी इससे अंडा बनाया । विष्णु की सत्ता अखिल ब्रह्माण्ड में व्यापक है।

विस्नु सब वैराट ही सोहै, सब साकार विस्नु अंग जो है।
खार सैन माहा विस्न बिराजै, ऐसे सेज्या लिछमी संग राजै।।९।।

विष्णु ही इस विराट संसार के रूप में शोभायमान है। सम्पूर्ण साकार रूप सृष्टि विष्णु की ही अंग है। क्षीर सागर में महा विष्णु शयन करते हैं सहज ही रूप से लक्ष्मी संग में विराजमान होती है।

विस्नु पदमनाभ है सोई, ताहां ब्रह्मा की उतपत होई।

विध विस्नु की आज्ञा पाई, तीन लोक बहु सिष्ट रचाई।।१०।।

विष्णु के नाभि में पद्म है इसलिये पद्मनाभ कहे जाते हैं। उसी नाभि से कमल की उत्पत्ति होती है। **''तामां ब्रह्मा बीज ठहरायौ तां ब्रह्मा की उत्पत्ति होई''** विधि ब्रह्मा जी ने विष्णु की आज्ञा पाई और आगे तीनों लोकों का विस्तार किया।

सुरनर नाग अस्वर जो भऐ, चर अरू अचर जीव बहु ठऐ।
च्यार खान अरू लख चौरासी, सीरजै जीव विस्नु अवनासी।।११।।

ब्रह्मा जी की सृष्टि मे सुर, नर, नाग, असुर हुए। चर और अचर जीव बहु प्रकार के हुवे चार खान, जेरज, उद्भिज, अण्डज और स्वेदज हुए। चौरासी लाख जीव योनिया हुई। अविनासी विष्णु ने जीवों की रचना की थी।

विस्नु व्यापक रहै सब मांही, विस्नु विना चेतन को नाही।
विस्नु ही पाले विस्नु ही पोखे, सब जीवन कूं विस्नु संतोषे।।१२।।

विष्णु सर्वत्र व्यापक घट घट अघट रहायो, विष्णु के बिना कोई चेतन नहीं हो सकता विष्णु ही पालन पोषण करने वाले हैं। सभी जीवों को विष्णु ही संतुष्ट करते हैं।

तारा अग्न सूर चंद सोई, सब मै तेज विस्नु का होई।
पुरुष प्रकृत का पसारा, भक्त काज कीनौ संसारा।।१३।।

तारा, अग्नि, सूर्य, चंद्र आदि सभी में तेज विष्णु का ही है पुरुष–विष्णु तथा उनकी प्रकृति–माया–शक्ति का ही यह पसारा है भक्तों के लिये यह संसार बनाया है।

भक्त बछल विस्नु विड़द भाखै, भीड़ पड़या रछा कर राखै।
विस्नु दीनानाथ कहावै, सरणागत सुरनर सुख पावै।।१४।।

भक्त वत्सल विष्णु भक्तों की रक्षा करते हैं। भक्तो के गुणों का गान करते हैं उनकी महिमा बढ़ाते हैं। जब जब विपत्ति आती है तब तब रक्षा करते हैं। विष्णु दीनानाथ कहै जाते हैं। उनकी शरणागत हो जाने से सुरनर सभी सुख प्राप्त करते है।

रमा विस्नु वैकुण्ठ बिराजै, गदा चक्र रछा कै काजै।
भक्त हेत विस्नु उर चीनौ। कर कर राज अवल पद दीनौ।।१५।।

लक्ष्मी विष्णु वैकुण्ठ में विराजमान होते हैं। सभी की रक्षा के लिये गदा ओर चक्र हाथ में रखते हैं। भक्तों के लिये विष्णु ने हृदय मे स्थान दिया है राज कृपा करके भक्तों को उच्च पद प्राप्त करवाया।

रिभदेव विस्नु अवतारा, उभदूण सिनका दिक च्यारा।
विस्नु भए मछ के रूपा, सतव्रत कु दीयों ज्ञान अनूपा।।१६।।

ऋषभदेव विष्णु के ही अवतार थे। चारों भाई सिनकादिक भी विष्णु के ही अवतार थे। विष्णु मच्छ के रूप में अवतार लिया था तथा सत्यव्रत राजा को अनुपम ज्ञान दिया था।

बिन ही प्रलै परलौ दीख लायौ, माया को परभाव बतायौ।
ईला अस्वर पाताल ही चांपी, पृथ्वी त्राह त्राह कर कांपी।।१७।।

भगवान् ने अपनी माया से सत्यव्रत को प्रलय दिखलाया और माया का प्रभाव दिखलाया। धरती को हिरण्याक्ष असुर पाताल में ले गया था। पृथ्वी त्राह त्राह करके कंपायमान हो गयी थी।

विस्नु धरे वाराह अवतारा, धर डाढ़ा पर लई उधारा।
विस्नु हत्यो हिरणाक्ष्य जु पापी, सरजीव करे विस्नु धर थापी।।१८।।

विष्णु ने ही वाराह अवतार धारण करके धरती को अपनी दाढों पर रखकर उद्धार किया था पुन: यथा स्थान पर स्थापित किया था। विष्णु ने ही हिरण्याक्ष पापी को मारा था। धरती को संजीवनी करके पुन: स्थापित की थी।

विस्नु कोरम रूप धराना, मिंद्राचल का कीया मथाना।
विस्नु वासक नेता कीना, चवदै रतन समंद मथ लीना।।१९।।

विष्णु ने ही कछुए का रूप धारण किया था। मन्द्राचल की मथनी बनाई थी। विष्णु ने ही बासुकी नाग की रस्सी बनाई थी, चौदह रत्न की प्राप्ति हेतु समंद का मंथन कर लिया था।

विस्नु मोहनी रूप धर आए, असुर डोहे सुर इमृत पाए।

वेद धनंतर विस्नु अवतारा, मरत लोक कीनो उपकारा।।२०।।

विष्णु ने ही मोहनी रूप बनाया था। असुरों ने समुद्र मंथन किया (बिलौया), विष्णु ने ही मोहनी रूप बनाया था। असुरों ने मंथन किया बिलौना किया किन्तु अमृत देवताओं को पिलाया। वैद्य धनवंतरी विष्णु के ही अवतार थे, जिन्होनें मृत्यु लोक में उपचार करके उपकार किया।

''दुहा''

हैग्रीव रूप विस्नु जुं कीना, असुर मार वेद विधि दीन्हा।
विस्नु भये पृथु अवतारा, छिती अन दीयो सारा।।२१।।

हयग्रीव विष्णु का अवतार है। असुर मारकर वेद वापिस ब्रह्माजी को दिया विष्णु ही प्रभु के अवतार है। धरती में अन्न उपजाया। धरती को उपजाऊ बनाया और रहने योग्य बनाया। धरती का दोहन करके अनेकों पदार्थ प्राप्त किया।

विस्नु रूप कपिल मुनि कीन्हो, सांख ज्ञान माता कुं दीनो।
विस्नु कला मन्वंतर सारा, विस्नु भए जज्ञ अवतारा।।२२।।

विष्णु ही कपिल मुनि के रूप में अवतरित हुए। अपनी माता देवहुति को सांख्य ज्ञान दिया। सम्पूर्ण मनु एवं मन्वन्तर विष्णु की ही कला रूप में है विष्णु ही यज्ञ अवतार हुए। हवन-यज्ञ विष्णु का ही अवतार है विष्णु ही हवन ज्योति में दर्शनीय है।

विस्नु अंससूया पूता, दत्तात्रेय भये अवधूता।
विस्नु धरे हंसा अवतारा, सनकादिक को कहयौ विचारा।।२३।।

अनुसूया का पुत्र अवधूत दत्तात्रेय भी विष्णु का ही अंश अवतार है। विष्णु ने ही हंसों का अवतार धारण किया और सनकादिक भी विष्णु के ही अंश अवतार है।

क्षीर नीर जु भिन्न भिन्न कीना, आत्म तत्व विध कूं दीन्हा।
नर नारायण बद्री अवतारा, ज्ञान भक्ति कीनो विसतारा।।२४।।

भगवान् विष्णु ने हंसो का अवतार लेकर जल दूध को विलग किया। अर्थात् सत्य असत्य का विवेक करके सत्य ज्ञान विधि को दिया। नर नारायण

के रूप बद्री (बोरटी) के नीचे आसन लगाया और बद्री नारायण कहलाऐ। जहां बद्री नारायण में रहकर ज्ञान एवं भक्ति का विस्तार किया। (वर्तमान में उत्तराखण्ड में प्रसिद्ध बद्री नारायण भगवान् नर नारायण की तपस्या स्थली है जोत दर्शनीय है, आना जाना सुलभ है)

प्रहलाद गही विस्नु की टेका, हिरणकस्यब व कीयौ बहु धेखा।
तब प्रहलाद खंब के बांधा, अस्वर खड़ग सीस पर साधा।।२५।।

हिरण्यकशिपु ने प्रहलाद के साथ बहुत जोर जबरदस्ती मारने के उपाय किये, किन्तु हरि विष्णु प्रहलाद की टेक रखी रक्षा की। अन्त में प्रहलाद को खम्भे से बांधा और असुर ने सिर पर खड़ग का संधान किया।

कहां विस्नु अस्वर युं भाखै, प्रहलाद विस्नु खंब मैदा खै।
फाटत खंब भयो गुंजारा, विस्नु धरै नरसिघ अवतारा।।२६।।

तुम्हारा विष्णु कहां है असुर ने इस प्रकार से कहा – प्रहलाद ने कहा विष्णु इस खंम्भे में भी है। खंभ फट गया और सिंहनाद शब्द का गुंजार हुआ और विष्णु ने नृसिंह अवतार धारण किया।

पकड़ अस्वर के ओदर बिदारे, दैत मार प्रहलाद उबारे।
गज कूं ग्राह गहयौ जब जल मे, करूणा सुणी विस्नु तव पल मे।।२७।।

असुर हिरण्यशिपु को पकड़कर पेट फाड़ डाला। इस प्रकार दैत्य को मारकर प्रहलाद की रक्षा की। गज को ग्राह ने–हाथी को मगरमच्छ ने जल के अन्दर पकड़ लिया तब गज ने हरि से पुकार की थी, तब हरि ने तत्क्षण गज की पुकार श्रवण की थी और गज की रक्षा की थी।

रमा सेझ सुख विस्नु विसारी, खगपत घर कीन्ही असवारी।
गरूड़ थके हरि प्यादे ध्याऐ, रूप चतुर्भुज चक्र चलाऐ।।२८।।

लक्ष्मी के साथ हरि सुख पूर्वक विराजमान थे, किन्तु भक्त की करुण पुकार सुनकर, सुख को छोड़कर गरूड़ जी की असवारी भी छोड़कर हरि पैदल ही भाग आये। चतुर्भज रूप धारी विष्णु ने सुदर्शन चक्र चलाया।

काट्यो फंद गयंद कीयो मुक्ता, करण सिध विस्नु भगवंता।

बावन रूप विस्नु धर आये, बलि कुं छल पाताल पठाये।।२९।।

हरि ने गज का फंद काटकर मुक्त कर दिया। कार्य सिद्ध करने वाले विष्णु भगवान् है बावन रूप धारण करके विष्णु बलि के यज्ञ में आये बलि को छलकर पाताल भेज दिया।

इन्द्र कूं निरभय कर दऐ, बलि की भक्ति विस्नु बस भऐ।
विस्नु कला फरसा अवतारा, छत्रीमार कीये खंखारा।।३०।।

इन्द्र को निर्भय कर दिया। राजा बलि की भक्ति से विष्णु वश हो गये। विष्णु की कला–अंश परशुराम जी अवतार थे। दुष्ट क्षत्रियो को मार कर धरती पर शुद्ध क्षत्रियों को स्थापित किया।

महा विस्नु दसरथ सुत रामा, सुरनर मुनीजन लीन पूरण कामा
कौसल्या कु ज्ञान सिखायौ, अपनो तेज प्रताप दिखायौ।।३१।।

अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र राम महाविष्णु रूप ही है। सुरनर मुनि जनों ने राम में तल्लीन होकर अपने कार्य को पूर्ण किया। कौशल्या को ज्ञान सिखाया तथा अपना तेज प्रताप दिखाया।

रिख को ज्याग संपूरण कीयौ, अस्वर ताड़ विस्नु जस लीयौ।
पदरज राम सिला पर डारी, गौतम नार अहेल्या तारी।।३२।।

ऋषियों का यज्ञ सम्पूर्ण किया। ताड़का आदि राक्षसों को मारा और यश प्राप्त किया। वन मे अहिल्या गौतम की पत्नी पत्थर जड़ जैसी हो गयी थी राम के चरणों की धूली शिला–अहिल्या पर पड़ गयी और वह शापित नारी पुन: अपने रूप में प्रवर्तित हो गयी।

जनक जज्ञ मै धनस जु तोड़े, सीता परण असर मद मोड़े।
पिता भगत के वचन जु पारे, सीता सहत बनवास पधारे।।३३।।

राजा जनक के धनुष यज्ञ में प्रवेश किया और धनुष को तोड़ दिया सीता से विवाह करके असुरों के मद को मोड़ दिया। पिता दशरथ के वचनो का पालन किया और सीता सहित वनवास में गये ।

वन मे विसनु असुर सिघारै, नृभै कीये रखेसर सारे।

प्रेम देख सिवरी के आए, झूठे बैर प्रीत सु पाए।।३४।।

वनवास में प्रभु ने असुरों का संहार किया। सम्पूर्ण ऋषियो को निर्भय कर दिया प्रेम भाव देखकर शबरी की कुटिया पर आए। झूठे बैर प्रेम सु पाए। शबरी बैर के पेड़ के फल चखकर लायी थी, उन्हें पता नहीं कि किस पेड़ के बैर मीठे है उसी पेड़ के बैर लाकर राम जी को दिया था।

ऊंच नीच विस्नु नहीं चीन्हा, सिवरी कुं निरभै पद दीन्हा।
महाबली बाली हरि मारै, सुग्रीव आद सखा कीयै सारै।।३५।।

विष्णु की सृष्टि में ऊंच नीच का वर्ताव नहीं है। शबरी भीलनी जाती की थी उन्हें उच्च –निर्भय पद दे दिया। महाबलि बाली को हरि ने मार गिराया सुग्रीव आदि सभी वानरों से मित्रता की।

हनुमान हरि कौ निज दासा, मुख हरि नाम चरन की आसा।
रूघनाथ रजा सीस पर धारै, अज्ञापाय सब काम सुधारे।।३६।।

पवन पुत्र हनुमान हरि का सेवक था। मुख में हरिनाम राम जी के चरण कमलो मे अपनी इच्छा रखते थे। रघुनाथ के चरण कमल के रजकण को अपने शीश पर चढ़ाते थे। रघुनाथ जी की आज्ञा शिरोधार्य करके सभी कार्य किया करते थे।

विस्नु सैल संमद पर तारे, रावण आद अस्वर बहु मारे।
छिन मे विस्नु लंक लुटाई, सुर तेतीसुं बंद छुटाई।।३७।।

भगवान् विष्णु ने ही शिलाओं को समुद्र पर तिरा दी। रावण आदि असुरों को मारा। एक क्षण में विष्णु ने लंका लुटादी''तेतीस कोटी देवताओ को बन्धन से छुड़ा दिया।

भमिषण कुं पाट बठाए, सीता सहत अवधपुर आए।
भरथ सत्रुघन लिछमन रामा, पूरण विस्नु व्यूह अभरामा।।३८।।

विभीषण को राज तिलक देकर गद्दी पर बैठाये। सेना सहित वापिस अयोध्या पुरी को आये। भरा, शत्रुधन, लक्ष्मण, राम ये चारों भाई पूर्ण ब्रह्म विष्णु के ही स्वरूप थे, अपनी लीलाओं से आनन्दित करने वाले थे।

सुयं विस्नु रघुवंशी राजा, वरण आश्रम धरम बांधी पाजा।

अमरीख नृप विस्नु को दासा, श्राप दैण आयौ दुरवासा।।३९।।

विष्णु ही रघुवंशी राजा राम थे, जिन्होनें वर्ण, आश्रम, धर्म की मर्यादा बांधी थी। अमरीष राजा विष्णु का दास था, जिनको श्राप देने के लिये दुर्वासा जी आये थे।

चक्र सुदरसण रिख तन जारयो, तीन लोक मे भटक जु हारयो। सिव ब्रह्मा विस्नु नहीं राखे, नृप सरण जाय ऐसे भाखै।।४०।।

भगवान् विष्णु के सुदर्शन चक्र ने ऋषि दुर्वासा के शरीर में जलन पैदा कर दी अपने बचाव हेतु दुर्वासा तीनों लोकों में भटक कर हार गया । शिव, ब्रह्मा, विष्णु ने रक्षा नहीं की वापिस अमरीष की शरण में गया।

तब रिख चले नृप पे आए। ज्वाला मिटी प्रेम सुख पाए। भक्त बछल विस्नु का वाना, अपने दास कुं इधक बखाना।।४१।।

चारों तरफ भटक कर जब ऋषि वापिस राजा के पास आये। तभी ज्वाला मिट्टी और प्रेम सुख की प्राप्ति की भक्तो के वत्सल विष्णु का भेश है अपने दास की रक्षा अत्यधिक करते हैं।

महाविस्नु किसन अवतारा, ब्रिज मे कीयो चिरत अपारा। वसुदेव देवकी कै जनमै जाई, नंद महर घर बंटी बधाई।।४२।।

महाविष्णु ही कृष्ण रूप मे अवतार लिया था। जिन्होंने बृज भूमि में अपार लीला की थी। वसुदेव देवकी के घर जन्म लेकर आये तथा नन्द महर घर पर बधाइयां बांटी गयी।

पूतना प्रान प्रथम सोखा, तांकु विस्नु दई निज मोखा। झूलो झूला संकटासुर मारे, मार लात भू मांह पछाड़े।।४३।।

हरि ने सर्वप्रथम पूतना के प्राणों को सोख लिया। उसे हरि ने मुक्ति दे दी। झूला झूलते समय संकटासुर को मारा। उसे लात मारकर धरती पर पछाड़ दिया।

माटी खात, माता मुख वायो। तीन लोक मुख मांह दिखायो। चांच फाड़ वकासुर मारे। अघासुर मुख पैस विदारे।।४४।।

कन्हैया ने माटी खाई माता यशोदा ने कहा कि तुमने मिट्टी खाई है। अपना मुख खोलकर दिखलाओ। कन्हैया ने मुख में तीन लोक माता यशोदा को दिखलाया। बाल्य अवस्था में बकासुर दैत्य को चांच फाड़कर मार दिया अघासुर दैत्य के मुख में प्रवेश करके उसको मार गिराया।

वृखभ अस्वर विस्नु मारे, पूंछ पकड़ भू मांह पछाडै।
जमना जल मै काली नाथे, ग्वाल गोपीयन के जीम्यौ हाथे।।४५।।

वृषभ रूप धारी दैत्य को विष्णु–कृष्ण ने मारा। उसका पूंछ पकड़कर भूमि पर पटक दिया। यमुना के जल में कालिये नाग को नाथा अपने वश में किया और यमुना को छोड़कर जाने का आदेश दिया तथा ग्वाल बाल गोपियों के हाथों भोजन किया।

नख उपर हरि गिरवर धारयो, इन्द्र को प्रभु गरब जु गारयौ।
प्रलय काल मेघ मै टारी, वृज मंडल की करी रखवारी।।४६।।

प्रभु ने गोवर्धन पर्वत को नख पर धारण किया और इन्द्र के गर्व को किया। प्रलय कालीन मेघ वर्षा का भय मिटाया। सम्पूर्ण ब्रज मंडल की रक्षा की।

बृज को बाल भयो नहीं बंका, मधवा मन मे मानी संका।
काम धेन लेह हरि पै आऐ, इन्द्र अपराध छिमा करवाऐ।।४७।।

इन्द्र ने प्रलय करने के लिये मेघों को भेजा था, किन्तु ब्रजभूमि का बाल भी बांका नहीं हुआ। इन्द्र ने मन में हार मान ली। कामधेनुओं को इन्द्र चुरा ले गये किन्तु हरि ने दूसरी सृष्टि की रचना कर ली। इन्द्र के अपराध को हरि ने क्षमा कर दिया।

वनरावन मे धेन चराई, कुंजन मे खेले जदुराई।
साथ हरि गोकुल से मथुरा को प्रस्थान किया।४८।।

कंस की यज्ञ भूमि में मल्ल–पहलवानो का पकड़ कर पछाड़ दिये। तथा कवलिया हाथी को मार डाला। जिस रंग भूमि मे यज्ञ की मोहन मुरली मधुर बजाई, सुरनर मोहे गोपियन गाई।।48।।

जोवती प्रीत हृदै हरि चीनी, प्रेमा भक्ति गोपियन कूं दीनी।

कृष्ण कृष्ण भज भई अनूपा, आपो बिसर भई हरि रूपा।।४९।।

ब्रज की युवतियों का कृष्ण के प्रति हार्दिक प्रेम था। प्रेम भाव से भगवान् स्मरण करती थी। प्रेमा भक्ति गोपियों को भगवान् ने दी थी। हे कृष्ण हे कृष्ण भजते हुए अद्‌भुत हो गयी थी, स्वयं अपने आप को भूलकर हरि रूप ही हो गयी थी।

राधा कृष्ण कृष्ण कह राधा, प्रेम डोर परस्पर बांधा
भक्त अक्रूर संग हरि लऐ, गोकुल सूं हरि मथुरा गए।।५०।।

राधा कृष्ण का स्मरण करती है और कृष्ण राधा का स्मरण करते है।

इस प्रकार से प्रेम की डोरी में परस्पर बंधे हुए थे। भक्त अक्रूर के रचना की थी वही पर बलदेव सहित कृष्ण ने खेल रचा था।

कुबज्या चंदन प्रीत सुदीनो, सो श्री कृष्ण अंगीकृत कीनो।
त्रिबंक कुबरी होत करूपा, कृष्ण कृपा करी रूप अनूपा।।५१।।

मथुरा मे कुबज्या ने हरि को प्रेम से चंदन भेट किया। उसे कृष्ण ने प्रेम से स्वीकार कर लिया। त्रिबंक तीन अंगों से टेढ़ी मेढ़ी कुरूप कुब्जा को कृष्ण ने कृपा करके सुन्दरी बना दी।

कृष्ण कला को पार न पावै, जैसो भाव तैसो दरसावै।
सखी कृष्ण कुं असै जानै। प्राकृत नर सुं आप समानै।५२।।

कृष्ण की अद्‌भुत लीला का पार नहीं है। जैसा भाव है वैसे ही दर्शनीय है। सखियां कृष्ण को इस प्रकार से जानती है कि यह कृष्ण कन्हैया प्राकृतिक स्वयं पुरुष परमात्मा है। उसी में समाहित हो जाती थी।

जोबन जौती हर कुं जोवै, कोट काम इधको मन मोहे।
जोगी ज्ञानी भक्त हरि देखै, पूरण विष्णु अखण्डत लेखै।।५३।।

युवतियां भगवान् को इस प्रकार से देखती है जैसे कोई करोड़ों काम देव कृष्ण में ही सौन्दर्य युक्त है उनके मन को मोहित करते हैं योगी, ज्ञानी, भक्तजन हरि को पूर्ण विष्णु अखण्डित रूप से देखते हैं।

मात पिता बालक ही जानै, अस्वरा को भैये हृदै आनै।
अस्वर कृष्ण कु ऐसे देखै, महाकाल को काल सेखै।।५४।।

माता–पिता कृष्ण को अपना बेटा बालक ही मानते हैं। असुरों के हृदय में भय काल रूप ही थे। असुर कृष्ण को इस प्रकार से देखते थे कि यह तो महाकाल का भी काल है। सभी का शोषण करेगा।

मल अखाड़े पकड़ पछाडै, कंवलिया पीर कुंजर ही मारे।
रंगभूमि जहां जिग रचाई, बलबीर सहत खेले जदुराई ।।५५।।

वृन्दावन में गायें चराई, कुंजन में देवराज कृष्ण ने लीला की मोहन ने मधुर मधुर मुरली बजाई। जिसको सुनकर सुरनर मुनि जन, बाल, गोपी, ग्वाला और गायें सभी मोहित हो गये।

चोटी पकड़ मंच तै डारे, कृष्ण कंस कुं पकड़ पछाड़ै।
वसुदेव देव की छुटाई, सखा उद्धव सुं करी मितराई।।५६।।

कंस को चोटी पकड़ कर मंच से नीचे डाल दिया। कृष्ण ने कंस को पकड़ कर पछाड़ा गिरा दिया। वसुदेव देवकी को काराग्रह से छुडाया उद्धव को अपना मित्र बनाया।

अगर सेन पुत्र दीनो राजु, भक्त हेत कीनो सब काजु।
गुरु को मरकत पुत्र जीवायौ, जमराजा पै तुरंत मंगायौ।।५७।।

अपने नाना उग्रसेन को पुन: राज दिया भक्तों के हित में सभी कार्य किये। अपने गुरु सांदी पनी के पुत्र को यमराज से वापिस लाकर सौंपा यमराज को आज्ञा दी और पुत्र को यमराज से वापिस लाकर सौपा। पुत्र पुन: जीवित होकर अपने माता पिता से आ मिला।

काल जमन कुं भसम कराई, उतर दिसा मुचुकन्द पठाई।
विसकर्मा कुं अज्ञा दीनी, हाटक पुरी द्वारका कीनी।।५८।।

काल यमन को भस्म करवाया, राजा मुचुकन्द को उतर दिशा में भेज दिया बद्रीकाश्रम में अब भी मुचुकन्द गुफा है। विश्वकर्मा को आज्ञा देकर हाटक पुरी द्वारका का निर्माण करवाया।

मथुरा को छोड़कर हरि द्वारका धाऐ, तब ही ते रीण छोड कहाएं।
सोला सैहस नरकासुर घेरी, करूणा करी सरण हरि तेरी।।५९।।

मथुरा छोड़कर हरि द्वारका चले गये। तभी से रणछोड़ नाम से जाने जाते हैं सोलह हजार कन्याओं को नरकासुर ने जेल में बंद कर दी थी। भगवान्

ने करूणा करके उनको कैद से छुड़ाया

जोखता प्रीत हृदै हरि जाणी, मार नरकासुर वरि हरि रानी।
सीसपाल जीत रूखमणी लाए, जुरासिध बलबीर भगाए।।६०।।

युवतियों की प्रीति हृदय में हरि ने जानी, नरकासुर को मारकर उनको जेल से मुक्त करवाया। शिशुपाल को जीतकर रुक्मिणी को लाये। जरासंध आदि को मारकर वहां से भगा दिया।

विप्र सुदामा मित्र करे, कृष्ण कृपा कर दालद हरे
पुरदपुरी पलक मै कीवी, हय गय पट रज धानी दीवी ।।६१।।

विप्र सुदामा को मित्र बनाया। कृष्ण ने कृपा करके सुदामा की दरिद्रता मिटा दी। सुदामापुरी तत्क्षण बनाकर दी। हाथी, घोड़े, श्रेष्ठ राजधानी प्रदान की।

दरजोधन अभमांनी दीठा, त्यागे मेवा लगेन मीठा।
प्रेम देख बिदर घर आऐ, लूखो साग प्रीत सु पाऐ।।६२।।

अभिमानी दुर्योधन को देखा और उनके मेवा मिष्ठान त्याग दिया विदुर जी का प्रेमभाव देखा और उनके घर आये। प्रेम प्रीत से सागपात खाकर तृप्त हुएँ।

पंडव हरि सु भए पराइन, पांच पांडु छठे नारायन।
अरध रात दुरवासा आए, सूते पंडव जाय जगाऐ।।६३।।

पाँच पाण्डव हरि के शरणागत हुए। पांच पाण्डव और छठे नारायण हो गये। आधी रात को दुर्वासा ऋषि आये और सोये हुए पाण्डवों को जगाया।

रिख कहै मो भोजन दीजै, श्राप सोच राजा मन छीजै।
नृप कह मोह दहो जरराई, रिख वेमुख जीवन का भाई।।६४।।

ऋषि दुर्वासा कहने लगे मेरे को भोजन दीजिये। राजा युधिष्ठिर श्राप के भय से सोच में पड़ गये कि अब इस समय भोजन कहां से दे। नृप कहने लगा हे ऋषि! आप मुझे श्राप से जला दीजिये। मुझे स्वीकार है, किन्तु ऋषि से विमुख मेरा जीना व्यर्थ ही होगा।

कहै द्रोपदा कृष्ण अराधो, हरि चरणां मै हृदै साधो।
कृष्ण कृष्ण जब करूणा करी, तब हरि परगटे ताही घरी।।६५।।

द्रोपदी कहने लगी अब इस विपति की घड़ी में कृष्ण की आराधना करो। हरि के चरणों में हृदय–मन को लगाओ। जब कृष्ण कृष्ण नाम की नृप ने करुणामय पुकार करी। तब हरि उसी समय में प्रगट हो गये।

पंडव बहु असतुती करी, कृपा करके बोलै हरी।
भाव भूख मोहे भोजन दीजै, हाजर हुवे सो हाजर कीजै।।६६।।

द्रोपदी सहित पाण्डवों ने बहुत प्रकार से स्तुति की। कृपा करके हरि स्वयं पधारे। और कहने लगे, बहना द्रोपदी! भाव से मुझे भोजन दे। मुझे भूख बहुत लगी है जो भी तुम्हारे पास है वह हाजिर करो।

साग पात द्रोपदा एक दीनो, पाय प्रीत सुं अचवन कीनो।
रिख त्रीपत भऐ तिहुं लोका, कृष्ण कीये ऐह चिरत अलोका।।६७।।

द्रोपदी ने एक साग का पत्ता दिया। प्रभु ने हाथ में लेकर प्रेम से खाया। तीनों लोकों के सहित ऋषि दुर्वासा भी तृप्त हो गये। कृष्ण ने यह अलौकिक चरित्र किया।

दे आसीस चले रिख सोई, तुमरी जै सत्रु खै होई।
पंडवा कौ सत विस्नु राख्यौ, अतीहास पुराण भागवत भाख्यौ।।६८।।

आशीर्वाद देकर ऋषि श्रेष्ठ वहाँ से चल पड़े। तुम्हारी विजय और शत्रु का विनाश होगा। इस प्रकार से पाण्डवों का सत विष्णु ने रखा। इस बात को इतिहास, पुराण, भागवत् आदि में विस्तार से कहा है।

गही दुसासन द्रोपदा रानी, दरजोधन की सभा मै आनी।
दुष्ट दरयोधन मन मे खीजै, अंबर खोस नगन कर दीजै।।६९।।

द्रोपदी रानी को दु:शासन ने पकड़ी और दुर्योधन की सभा में लाये। दुष्ट दुर्योधन मन में क्रोधित हुआ और कहने लगा। इसके वस्त्र छीन कर नग्न कर दो।

तब द्रोपदा करूणा करी, लज्या मोरी राखो हरी।
चीर खांच दुसासन हारा, अंबर प्रवाह बढ़्यौ अपारा।।७०।।

तब द्रोपदी ने करुणा पुकार करी हे कृष्ण! अब मेरी लज्जा रखो मेरा चीर हरण हो रहा है। कौरवों की सभा में दु:शासन चीर खिंचते–खिंचते हार

गया। अम्बर वस्त्र का प्रवाह बढ़ने लगा जिसका कोई पार नहीं पाया।

द्रोपदा लाज करूणा निध राखी, पूरण संत परगट कहै साखी।
पंडवा की दासा तन कीनी, जिग मे झूठ उठाय हरि लीनी।।७१।।

द्रोपदी की लज्जा करुणा निधि ने रखी। पूर्ण संत प्रगट रूप से इस बात के साक्षी है। भगवान् श्री पांडवों के दास बन करके भी सेवा की। पांडवों के यज्ञ में झूठे बरतन पतल उठायी ।

कुंती सती हृदै हित चिन्ही, सखा भाव अरजन सुं कीनी।
पारथ के हरि सुवारथी भऐ, गीता ज्ञान अरजन कुं कहे।।७२।।

सती कुंती ने हृदय से अपने पुत्रों की सुरक्षा के लिये कृष्ण को समय-समय पर याद किया। अर्जुन को श्रीकृष्ण ने अपना सखा भाव से स्वीकार किया। पार्थ-अर्जुन के हरि सारथी बने अर्जुन को गीता ज्ञान दिया।

वैराट रूप श्री कृष्ण दिखायो, अरजन को अहंकार गमायो।
पांडव भारथ माह जियाए। दरजोधन निरवंश गमाये।।७३।।

श्री कृष्ण ने अर्जुन को अपना विराट रूप दिखाया। अर्जुन के अहंकार को मिटाया। महाभारत के युद्ध में पाण्डवों की रक्षा की।

दुर्योधन का वंश ही मिटा दिया।
भारथ मै भीसमै पण राख्यो, अपनो वचन झूठ कहै दाख्यौ।
दंतवकत्र सिसपाल ही मारे, भक्ति हेत बहु असुर संघारे।
साजौज मुक्त दे दानव तारे। ७४।।

महाभारत में भीष्म जी का प्रण रखा। अपने वचनों को झूठा किया किन्तु भक्त भीष्म के वचनों को सत्य किया। दंतवक्र, शिशुपाल को मारा। भक्ति भाव को प्रचारित प्रसारित करने के लिये अनेक दैत्यो का संघार किया। दानवों को भी सायुज्य मुक्ति प्रदान की।

जरा व्याध पापी ऐक होता, वन मे जीव हत्या जिन बहुता।
खैच बान हरि कै पद दीनो, मृग मुख जान घात जन कीना।७५।।

जरा नाम का एक पापी व्याध शिकारी था। वह वन में जीव हत्या करता था। सोये हुए हरि के पैर में पदम चमकती हुई देखकर हरिण आँख का

भ्रम हो गया उस व्याध ने खिंचकर तीर चलाया वह हरि के पैर मे जा लगा ।

मृग जान जरा दोर के आयो, रूप चत्रभुज दरसन पायो।
सीत लागो ज्यु तन थररायौ भैभीत भयो आपो बिसरायौ।।७६।।

वह जरा नाम का व्याध्र तीर चलाकर मृग जानकर दौड़कर आया। जरा व्याध्र को भगवान् के चतुर्भुज रूप का दर्शन हुआ। जरा व्याध को जब असलियत का पता चला तब उसका शरीर कांपने लगा। भय से भीत होकर अपने आप को ही भूल गया।

त्राह त्राह कर सरण आयो, तां कुं सुरग सैदेह पठायो।
वैरी मित्र समगत पावै, विस्नु की गत लखीन जावैं।।७७।।

वह त्राहिमाम त्राहिमाम मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो ऐसा कहता हुआ शरण में आया। उसको सदेह स्वर्ग में भेज दिया। भगवान् विष्णु के यहां बैरी मित्र सभी बराबर होते हैं। भगवान् विष्णु की गति समझ मे नहीं आती।

ज्युं सुं कर हरि सुं लीव लायो, सेई प्राण परम सुख पायो।
काम क्रोध सुं नरक ही जावै, हरि मै कीया सदगत पावै।।७८।।

जैसे तैसे कर के भी हरि से प्रेम भाव से मन लगाता है वही प्राणी परम् सुख की प्राप्ति करता है। काम–क्रोध से नरक में जायेगा। हरि में प्रेम भक्ति करने से सद्गति को प्राप्त होता है।

विख आस कृष्ण सुंकरी, से गोपी भवसागर तरी।
असर कृष्ण सुं क्रोध कराई, साजोज मुक्त परम गत पाई।।७९।।

विषय वासना की आशा कृष्ण से गोपियों की वे भी भवसागर से पार उतर गयी। असुरों ने कृष्ण से क्रोध किया तो भी सायोज्य मुक्ति को प्राप्त होकर परम गति को प्राप्त हो गये।

अकथ कथा कृष्ण की कहावै, विष रूप इमृत हुय जावै।
सुभ असुभ विस्नु सुं करै, लीन भए भवसागर तिरै।।८०।।

कृष्ण की कथा अकथनीय है। कथा का कोई अन्तपार नहीं है। विष रूप भी अगृत हो जाता है ऐसी अमृतमयी कथा का कोई अन्तपार नहीं है। विष रूप भी अगृत हो जाता है ऐसी अमृतमयी कथा है। जो कोई भी विष्णु के साथ शुभ या अशुभ करता है वह भी भवसागर से पार हो जाता है।

तातै मुनिजन निसदिन गावै, सुन सुन चिरत परम गत पावै।
सुभ विस्नु अवतरै जदुवंसा, भुभार मेटयौ जिन संसा।।८१।।

इसलिये ऋषि मुनि दिन रात हरि गुन गाते हैं। श्रोता गण चरित्र सुन सुन करके परम गति को प्राप्त करते हैं शुभ विष्णु यदुवंश में अवतार लिया था। जिन्होंने भूमि पर बढ़े हुए पापियों को पाप मिटाया था।

विस्नु व्यास कला अवतारा, वेद पुराण निरणै कीयौ सारा।
बहुर व्यास भागवत गाऐ, अपने उर आनन्द बढ़ाऐ।।८२।।

व्यास विष्णु के कला अवतार थे। जिन्होंने वेद पुराणों का सम्पूर्ण निर्णय किया था। चार वेदों का विस्तार और अठारह पुराणों की रचना की थी। फिर से व्यास जी ने महाभारत के पश्चात् भागवत् महापुराण की रचना की थी।

बुध बोध पाखण्ड विसतारा, हरि बुध गया सुमा रया।
संतन काज कलयुग मे सारे, नाना विध विस्नु वपु धारे।।८३।।

पाखण्ड का विस्तार हो गया था, जब भगवान् हरि ने बुद्ध का रूप धारण करके पाखण्ड का खण्डन किया। गया जी मे निवास करके बौद्ध पंथ चलाया। संतों के लिये कलयुग में हरि ने नाना विध रूप धारण किये।

कलकै अन्त में विस्नु वपु धर है, असुर मार सतजुग पुन कर है।
जुग जुग विस्नु धरे अवतारा, अधरम मेट धरम विस्तारा।।८४।।

कलयुग के अन्त मे विस्नु शरीर धारण करेगे। असुरों को मारकर पुन: सतयुग की स्थापना करेंगे। प्रत्येक युग में विष्णु अवतार लेते है। अधर्म मिटाकर पुन: धर्म की स्थापना करते हैं।

महा विस्नु के चिरत अपारा, हर अवतार लह कौ पारा।
अनंत रूप महाविस्नु कहीयै, सुरगुन नुरगुन पार न लहीये।।८५।।

महाविष्णु का अपार चरित्र है। हरि अवतार लेते हैं उनकी महिमा को कौन पार पा सकता है। महाविष्णु अनन्त रूप कहे जाते हैं। निर्गुण सगुण रूप का कोई पार ही नहीं हैं।

चत्रानन विध विस्नु उचारै, नेत नेत कह निगम पुकारै।
सैस सैहस मुख कथा सुनावै, विस्नु चिरत को पार न पावै।।८६।।

विधि अपने चारों मुखों से विष्णु–विष्णु इस मंत्र का उच्चारण करते हैं आगम निगम वेद पुराण ऋषि–मुनि सभी नेति नेति–न इति न इति इतना ही नहीं है इससे आगे भी है। ऐसा कहते हुए अपनी वाणी से मौन हो जाते हैं किन्तु पार नहीं पाते। शेष जी अपने हजारों मुखों से विष्णु की कथा सुनाते हैं फिर भी विष्णु चरित्र का पार नहीं पाते।

विस्नु चिरत सत कोट अपारा, सिव उमा संवाद विचारा।
सिव ध्यान धरै गुन गुनै, नाम संहश्र उमा भनै।।८७।।

विष्णु चरित्र सौ करोड़ अपार है। शिव ऊमा संवाद के द्वारा विचार हुआ है शिव भी विष्णु का ध्यान करते हैं और विष्णु के गुणों का गान करते हुए गुन गुनाते हैं। विष्णु सहस्र नाम को ऊमा भणती–जपती है।

बालमीक हरि के गुन गाये, ऐक अरब कहै पार न पाऐ।
विस्नु ध्यान सिनकादिक धारै, निसदिन आतम तंत बिचारै।।८८।।

बाल्मीकि ने हरि के गुण गाये, एक अरब वर्ष कहे पार नहीं पाये। विष्णु का ध्यान सनकादिक चारो भाई करते है। निसदिन आत्म तत्व का विचार करते हैं।

विस्नु चिरत सारदा लिखै, अविरल बानी निसदिन बकै।
तोहु हरगुन पार न पावै, चिरत अपार लिख्या नहीं जावै।।८९।।

विष्णु चिरत्र शारदा–सरस्वती लिखती है। अविरल बिना रुके धारा प्रवाह निसदिन लिखती ही रहती है। तो भी हरि गुणों का पार नहीं है। भगवान् का चरित्र अपार है सम्पूर्ण रूपेण लिखने में नहीं आते।

गनपत चवदे विद्या निधाना, विस्नु चिरत लिख्य पार न जाना।
लोमस अद्वीत विस्नु विचारै, गुपत भक्त हृदै मै धारै।।९०।।

गणपति चौदह विद्या के ज्ञाता है, विष्णु चरित्र लिखते हैं किन्तु पार नहीं पा सकते । लोमस ऋषि अद्वैत ब्रह्म का विचार करते हैं। गुप्त भक्ति हृदय में धारण करते है किन्तु हरि गुण का थाह नहीं पा सके।

नारद तुमर वीन बजावै, लैला न भए विस्नु गुन गावै।

नव जोगेस्वर ग्यान विचारै, विस्नु चरित हृदय मे धारै।।९१।।

नारद मुनि तुमर तंबुरा तथा वीन–बंसी बजाते हैं। भगवान् की लीला में लैलान–मस्त हो जाते है। हरि गुण गान करते है। नौ योगेश्वर हरि के बारे में विचार करते हैं। विष्णु का चरित्र हृदय में धारण करते हैं ।

जनक वेदह देह सुद त्यागी, विस्नु चरण कंवल अनुरागी।
रिव सुत विष्णु नाम उचारै, तीनो लोको न्याव विचारै।।९२।।

राजा जनक वैदेही थे, जिनको अपनी देह का भी ख्याल नहीं था देह में मेरापन नहीं था। वह भी विष्णु के चरणों के अनुरागी–सेवक थे सुर्यपुत्र–यमराज भी विष्णु नाम का संकीर्तन करते हैं इसी प्रभाव से तीनों लोकों का न्याय करते हैं।

पारखद विस्नु हजुरी दासा, निसदिन चरण सेवन की आसा।
खगपत वाहन विष्णु हजुरी, चरण छाड नहीं जावै दूरी।।९३।।

पार्षद विष्णु के हजूरी सेवक है। निसदिन चरणों की सेवा करने की आशा रखते हैं खगपत–गरूड़ विष्णु का वाहन नित्य सेवा में रहता है भगवान् के चरणों को छोड़कर दूर नहीं जाता है।

गरूड़ गयो जाहां भक्त जु वासा, हरि चिरत सुन्यौ मेट्यौ मन संसा।
काग भसुंड हरि मुख में पैठा, बहु ब्रह्माण्ड उदर मे दीठा।।९४।।

गरूड़ जी जहाँ पर भी गये वही भक्तों का निवास देखा। वहाँ पर हरि के चरित्र का गुणगान हो रहा था। ऐसा सुनकर मन के संशय को मिटा दिया। काग भुसुण्डी जी ने हरि के मुख में प्रवेश किया। हरि के उदर में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को देखा।

तब प्रमात्म रूघ जाना। विस्नु चरित अपार बखाना।
काकभुषुण्ड अगस्तन भज विष्णु नामा, पूर्ण विस्नु सालग रामा।।९५।।

तब परमात्मा श्री राम जी को पहचाना कि यह तो परमात्मा का साक्षात् विराट रूप है। विष्णु चरित्र अपार है, मन वचन वाणी से पार नहीं पाया जा सकता। अगस्त्य मुनि ने विष्णु का भजन किया पूजा सेवा विष्णु की करके पार उतर गये।

विस्नु नाम का सुन अतिहासा, अगस्त कहयौ सुन्यौ सुत व्यासा।
अज्यामेल पापी जम मारयौ, सुत होय नारायण नाम उचारयौ।।९६।।

विष्णु नाम का इतिहास अगस्त्य मुनि ने कहा था। व्यास पुत्र शुकदेव ने सुना था। अजामिल पापी को यम के दूतों ने पकड़ लिया था और यमपुरी में डाल दिया था। अजामिल ने अपने पुत्र नारायण के नाम का उच्चारण किया।

विस्नु पारखद तुरंत छुटाऐ, जम किंमार कुंकार भगाऐ।
जान अजान नाम हरि को असो, अग्न दहै बहुवन कूं जैसे।।९७।।

अजामिल पापी को भी विष्णु के पार्षदों ने तुरंत छुड़ा दिया। यम के दूतों को मारकर भगा दिया। हरि का नाम जान कर लिया जावे या अनजान मे लिया जावे वह तो अग्नि की तरह है जैसे अग्नि की एक चिंगारी बहुत बड़े वन को जला देती है।

विस्नु कीरतन सुख मन गावै, श्रीमत भागोत सुनावै।
सुन्यौ प्रीछत पंडव पोता, श्रप डस्यौ सदगत होता।।९८।।

विष्णु की कीर्तन चरित्र सुखसागर मे गाया है श्रीमद्भागवत पुराण भी विष्णु गुणों का गान करती है। भागवत को पाण्डव के पौत्र राजा परीक्षित ने सुना था। सर्प डंस जाने पर भी सद्गति को प्राप्त हो गये।

सुख पै सुनी सूत सो गाई, सैहस अठयासी रीख मन भाई।
विस्नु कीरतन कलम करही, महा अघोर पाप सुं तरही।।९९।।

सूत जी ने भागवत् का गान किया। शुकदेव मुनि ने भी भागवत् का गायन किया। नैमिशारण्य मे अठ्यासी हजार ऋषियो ने श्रवण की जो विद्वान विष्णु कीर्तन भजन को कलम द्वारा लिखेगा, वह महा अघोर पाप से पार उतर जायेगा।

संत केवट हरि नाम जिहाजा, भवजल तरण को एहि समाजा।
सतयुग विस्नु ध्यान जो धरता, त्रेता जिग विष्णु हित करता।।१००।।

संत केवट नाम की जहाज लेकर भवजल-संसार सागर से पार उतर गया। सतयुग में विष्णु का जो ध्यान करता। त्रेतायुग मे विष्णु का यज्ञ जो करता वही इसी साधन से पार उतर जाता।

द्वापर विस्नु पूजा अरचा, कलि सुन तरै विस्नु की चरचा।
कलि के लह हरि नांव अधारा, जो सिवरै सो उतरै पारा।।१०१।।

द्वापर युग में विष्णु की पूजा अर्चना से, कलयुग में विष्णु की चर्चा श्रवण मनन करने से पार उतर जाता है। कलयुग में जो हरि का नाम स्मरण करता है वह पार उतर जाता है।

जो विस्नु नाम सुंप्रीत लगावै, सोइ नृभै पद पावै।
विस्नु नाम जो सिवरै मन मे, त्रिचिध ताप मिटै सबतन में।।१०२।।

जो विष्णु के नाम से प्रीत करे वही निर्भय पद को प्राप्त कर लेता है। विष्णु का नाम जो मन मे स्मरण करता है तीन प्रकार के ताप उसके मिट जाते है दैहिक, दैविक भौतिक ताप त्रय विलुप्त हो जाते हैं।

विस्नु महिमा अनंत बतावे, अनंत कोटि विष्णु गुण गावै।
वै जन हरि को पार न पावै, मगन होय चरणो चित लावै।।१०३।।

विष्णु की महिमा का पार नहीं पाते वे जन हरि के चरणों में चित मन लगाते हैं।

अलप बुध सुन्दर मम बानी, विस्नु चिरत कहा कहु बखानी।
श्रवण जिभ्या हृदौ जो है, विस्नु नाम सुं पावन होहै।।१०४।।

कवि कहता है कि मेरी बुद्धि अल्प है, किन्तु वाणी सुन्दर है। विष्णु चरित्र मैं क्या बखान करूँ। मेरा श्रवण जिभ्या हृदय जो है वह विष्णु के नाम से पावन हो गया।

कलि मे विस्नु संत सरूपा, जंभ गुरु माहा जोग अनुपा।
विस्नु भगत पर जो करै, अनंत कोट सतसंग तरै।।१०५।।

कलयुग मे विष्णु संतो के स्वरूप में है उनमे जंभ गुरुजी महायोगी विष्णु रूप में अनुपम है। विष्णु भक्त पर जो विश्वास भरोसा करेगा, तो उसकी जो अनंत कोटि की सतसंग से पार उतर जायेगा।

ता दास दास के उद्धव दासा, विस्नु चिरत कहयौ अतिहासा।
गुरु बुध दीनी तहि उरमाना, विस्नु चरित कहयौ बखाना।।१०६।।

उन संतों के दास का दास में उद्धवदास हूँ मैंने यह विष्णु चरित्र का

इतिहास वर्णन किया है गुरुदेव ने जो मुझे सद्बुद्धि प्रदान की है उसी को हृदय में रखकर मैंने यह विष्णु चरित्र का बखान किया है।

हरि चरित अपार कहां बुध वरणै, उदोदास विस्नु तोह सरणै।
तुछ वाणी सु काहा प्रभु रीझै, अपनो जान कृपा मोह कीजै।।१०७।।

हरि का चरित्र अपार है मेरी तुच्छ बुद्धि कहां वर्णन कर सकती है। ऊदोदास जी कहते है कि हे विष्णु भगवान! मैं तो आपकी शरण में हूँ मेरी तुच्छ वाणी से हरि कैसे प्रसन्न हो सकते हैं। हे देव! मुझे अपना जानकर मेरे पर कृपा कीजिये।

नमो नमस्ते वार न पारा, जै जै विस्नु सकल आधारा।
गुण गाउं जांणु नहीं भेवा, चरण सरण मोहि राखो देवा।।१०८।।

बारंबार में नमस्कार करता हूँ। आपकी जै जैकार करता हूँ। हे विष्णु! आप सकल सृष्टि के एक मात्र आधार हो। वैसे मेरे भी एकमेव आप ही आधार हो। मैं तो आपके गुणों का गान करता हूँ, किन्तु आपके भेद तत्व को नहीं जानता । हे देव! आप मुझे अपने चरणों की शरण में रखें।

आप विघ्न हरने वाले मंगल करने वाले हैं। मैं आपको नमन करता हूँ।

''दुहा''

अनाथ नाथ असरण, निराधार आधार।
जिन ऊधो कुं तारीयै, अपनो बिड़द विचार।।११०।।

अनाथ के आप नाथ हो, असरण के आप शरणागति हो। निराधार के आप आधार–सहारा हो। हे देव विष्णु! इस ऊदे को संसार सागर से पार उतार दीजिये। अपनी प्रतिज्ञा पर विचार करे।

हरि अवतार अनंत, अनंत चिरत अवगत तण।
गावै मुनिजन संत जस भव जल तरण।।१११।।

हरि के अवतार अनंत है। हरि चरित्र भी अनंत ही है। हरि द्वारा दी जाने वाली गति भी अनंत ही है। मुनिजन संत आपके ही गुणगान करते हैं। आपके गुण गाये बिना ही आप हमें संसार से पार उतार दीजिये।

ऊदोजी अडींग द्वारा रचित लूर

प्रसंग– भगवान कृष्ण गोकुल से कंस के बुलावे पर मथुरा चले आये। कंस ने अक्रूर को अपना रथ देकर भेजा था आगे की लीला मथुरा में ही हुई थी। वापिस वृन्दावन–गोकुल लौटकर नहीं आये। भगवान कृष्ण के सखा उद्धव थे। जब कभी दोनों बैठते तो कृष्ण गोकुल की स्मृति मे लीन हो जाते। वहाँ की गोपियां ग्वाल बाल गाऐ, वृन्दावन, नन्द, यशोदा को याद करते और प्रेम मे मग्न हो जाते। वहां की बड़ाई करते और वे अपने बीते हुए दिन उनका स्मरण करके भाव विह्वल हो जाते।

उद्धव ब्रह्मज्ञानी थे। वे कहते कृष्ण! इन बातो मे क्या रखा है वे बाते बचपन की है वह समय चला गया। अब आप मथुरा के महाराज बन गये हैं कहां मथुरा नगरी कहां ये अनपढ़ गंवार वनवासी लोग? उस समय की बात वहीं रहने दो और आगे अपने कर्तव्य का निर्वहन करो ''बीती सोई बिसार दे आगे की सुध लेह) कृष्ण कहने लगे–ज्ञानी उद्धव तुम्हे अब तक प्रेमभाव का कुछ भी पता नहीं है केवल थोथे ज्ञान से कुछ भी आनन्द की अनुभूति नहीं हो सकती। यदि मेरी बात नहीं मानता हैं तो एक बार जाकर गोकुल गांव की स्थिति देख आओ (प्रत्यक्षस्य किं प्रमाणम्) ''मेरी यह चिट्ठी ले जाओ और अपने मुख से भी सभी संदेश सुना देना। वापिस आते समय उन गोप ग्वालों की कही हुई एक–एक बात लेकर आना।

उद्धव जी गोकुल गांव में पहुंचे और कृष्ण की लिखी हुई पत्रिका दी और अपने मुख से भी बहुत सी ब्रह्मज्ञान की बातें समझाई तब गोपियो ने जो कृष्ण के प्रति प्रेम भाव प्रगट किया था वह इसी लूर में ऊदोजी ने भाषा में प्रगट किया है।

गिरधर गोकुल आय, मोकल्यो गोपी संदेशो मोकलै।

मोह दरसण को चाव, प्रेम पियारा कांन जी।।टेर।।

गोपियां उद्धव से कह रही है, हे उद्धव! यह हमारी पाती कृष्ण को दे देना है। इसमें क्या लिखा है ? वह कृष्ण ही समझ लेगे। यह प्रेम भाव का पत्र गोपियों ने

उद्धव के साथ मथुरा में भेजा था। हे गिरधर! अब आप वापिस गोकुल आ जाओ। हमें आपके दर्शन की इच्छा है। हे कान्हा जी! आप प्रेम रस से परिपूर्ण है। इसलिये आप हमें बहुत ही प्यारे लगते हैं। शीघ्र ही आ जाओ आप का रूप दर्शनीय है।

थारै माथै मुकट सुढाल, केसर तिलक जु हद बण्यो।
मोहन नैण विसाल, सुन्दर वदन सुहावणौ।।२।।

हे कृष्ण! आपके सिरपर सुन्दर शोभायमान मुकुट है आपके ललाट पर केंशर का तिलक सुन्दर शोभा देता है। मोहन सभी को मोहित करने वाले आपके नयन– आँखें बड़ी–बड़ी है। आपका शरीर सुहावना है।

गुंघर वारे केस, कानां मे कुण्डल झलक रयो।
ओही मनोहर वेस, म्हारै मन मे रम रयो।।३।।

आपके केश घुंघराले है। कानो में कुण्डल झलक रहे हैं यही आपका मन को हरण करने वाला वेश है। हमारे मन में रच पच गया है।

गलै वैजंयती माल, पीतांबर कट काछनी।
हाथ लकुटिया लाल, सांम सलूंणा सांवरा।।४।।

आपके गले में वैजयन्ती माला है पीत वस्त्र आपने धारण कर रखा है कमर में कंदोड़ी–काछनी पहन रखी है। हाथ में लकुटियां–लाठी लाल वर्ण की रखते है क्योकि गाये चराते हैं। आप श्याम वर्ण के शोभायमान सांवरा कहे जाते है।

गावै छतीसू राग, गिरधर मुरली मोहनी।
मोहे सुरनर नाग, गोपी मोहै गुंवालियां।।५।।

आप हाथ में मुरली रखते हो, जिससे छतीस प्रकार की राग बजाते हो। मोहन आपकी मुरली सभी को मोहित कर देती है। मानव ही नहीं आपकी मुरली से सुरनर, नाग, गोपी, ग्वाल सभी मोहित हो जाते है।

वै दिन कान्ह चितार, महीड़ो मोपै मांगता।
अब तुम गये विसार, मथुरा में महाराज वणे।।६।।

गोपियां कहती है कि हे कान्हा! उन दिनों को याद करो जब हमारे से दही–मक्खन मांगा करते थे। अब तुम हमें भूल गये हो क्योकि आप तो मथुरा मे जाकर महाराज–राजाओ के भी राजा महाराज बन गये हो।

चेरी कंस की दासी, भली बसाई भामणी।
वां संग कीयो निवास, सैस सहेली छाड़कै।।७।।

मथुरा मे कंस की दासी कुबज्या है उसे आपने अपनी भामण–प्रेमिका बनाई है। आपको मथुरा में वही प्रेमभाव भक्ति वाली मिली है। उनके साथ में निवास किया है। यहां गोकुल में हजारों सुन्दर गोपिकाओं को छोड़ दिया है। कृष्ण तुमने यह क्या किया?

थांनै झुरै जसोदा मांय, राधा पलक न बीसरै।
ललता जीव लल चाय, दरसण कारण दूबली।।८।।

हे कृष्ण! हम तो आपके क्या लगती है किन्तु माता यशोदा की तरफ तो देखो वह तुम्हारी माँ है। वह भी आपके बिना व्याकुल है। आंखों से आंसू टपका रही है उसका दिल झूरता है, रोता है। अन्य आपकी प्रेमरस से भरी हुई गोपियां भी एक पलक भी आपको भूलती नहीं है। आपके दर्शन बिना दुबली कमजोर हो गयी है।

थानै झुरै बिरज की नार, घर घर झुरै गुवालियां।
गउ तिण तज्यौ मुरार, बछड़ा खीर न पीवही।।९।।

हे कृष्ण! ब्रज की नारियां सभी आपको देखने के लिये व्याकुल है। घर घर ग्वालिया –गोचारण करने वाले झुरते है याद करते हैं, व्याकुल हो जाते हैं। गऊवों ने घास चरना छोड़ दिया है। बछड़ो ने दूध चूंगना छोड़ दिया है।

ऊदो कहै कर जोड़, कांय बिसारी कान्हवां।

ऊदो जी हाथ जोड़ कर कहते हैं कि आप मेरे पर दया कीजिये। हे कृष्ण! आपने गोकुल को क्यो बिसार दिया? हमारी विनती सुणो हे रणछोड! दया करके दर्शन दीजिये।

''दुहा''

आव जाव उठ बैठ, ठंडी बाजै बूक रै।
भजियो नहीं भगवान, ऊदा चाकरी मे चूक रै।।११।।

इस दोहे का प्रसंग इस प्रकार से है। ऊदोजी अडींग गोत्र के विश्नोई गृहस्थ थे। जोधपुर के पास रुड़कली गांव के निवासी थे उनके खेत के पास से ही नदी बहती थी, जो जब भी बर्षाती नाला है। वे अपने खेत के कुंऐं से सिंचाई कर रहे थे। ठण्डी रात्रियों मे कुँऐं से जल की सिंचाई करना दुष्कर कार्य था, उनको यह सभी देखकर वैराग्य हो गया और यह उपर्युक्त दोहा कहा।

आना, जाना, उठना, बैठना, यही कुछ सिंचाई करने में होता है। उस समय सर्दी में ठण्डी–ठण्डी हवाऐं चल रही थी। ऊदोजी ने विचार किया कि ऐसा

कब तक चलेगा। इस प्रकार से तो जीवन बीत ही जायेगा। अपने आप से ही कह रहे हैं। हे ऊदा! तुमने भगवान का भजन नहीं किया। अवश्य ही कही चाकरी सेवा कर्म में चूक हो गयी है। ऐसे विचार से वैराग्य हुआ और गुहस्थ जीवन को छोड़कर साधु जीवन अपना लिया और ये पाँच रचना ऊदो जी ने समाज को समर्पित करते हुए हरि अर्पण की है। आगे ऊदो जी द्वारा रचित सनेही लीला।।

* * *

''सनेह लीला'' ऊदोजी अड़ींग द्वारा चचित

मैं अलप बुध जानुं कांहा, सतगुरू दी रीझरी
बुध जब भई प्रकार सा, मिटे सब भ्रम गही तमा री।।

संत कवि ऊदो जी कहते कि मैं अल्प बुद्धि हूँ क्या जानता हूँ किन्तु सतगुरु की अपार कृपा मुझे प्राप्त है। सतगुरु की कृपा से बुद्धि ज्ञान से प्रकाशित हुई। तब सभी प्रकार के भ्रम तम अज्ञानता मिट गयी।

एक समै ब्रिजवास की, सुरति भई हरि राय।
निज जन अपनौ जानिकै, श्री उद्धव लीये बुलाय।।१।।

कृष्ण मथुरा में आ गये और वहीं रहने लगे वापिस ब्रजभूमि में नहीं गये क्योंकि मथुरा पुरी में ही आगे की लीला करनी थी। एक समय मथुरा में रहते हुए श्री कृष्ण को ब्रजभूमि की वहां के ग्वाल बाल, गो, नन्द, यशोदा, गोपियो की याद सताने लगी। बाल्यावस्था की जितनी भी यादें थी वे उपस्थित हो गयी। स्वयं ब्रजभूमि में न जाकर अपने प्रिय सखा उद्धव जी को अपने पास बुलाया और कहने लगे।

श्री कृष्ण वचन असै कहै, उद्धव तुम सुनि लेहू।
नंद जसोदा यादि पे, जाय वृजि कौ सुख देहुं।।२।।

श्री कृष्ण ने उद्धव से इस प्रकार से कहा–हे उद्धव तुम सुनो! आप नन्द यशोदा आदि के पास जाओ और उन्हें मेरे से वियोग होने से दु:ख हो रहा है। उन्हें समझाकर सुख प्रदान करो।

ब्रिज वासी बलभ सदा, मेरे जीवन प्रांन।

तातै निमख न बीसरू, मोहि नंदराय की आंन।।३।।

मुझे व्रजवासी बहुत ही प्यारे लगते हैं। वे तो मेरे जीवन के प्राण है। इसलिये मै उनको एक क्षण भी भूलता नहीं हूँ। हे उद्धव! मैं सत्य कहता हूँ मैं नन्दराज जी की सौगन्ध खाकर यह बात कह रहा हूँ।

मै उनसे असै कहयौ, आवैगे रिपु जीत।
अब तोड़या कसै बनै, पिता मात से प्रीत।।४।।

मैंने जब गोकुल गांव ब्रजभूमि मे अपने माता-पिता को छोड़कर अक्रूर के साथ मथुरा के लिये प्रस्थान किया था, तब मैंने उनको ऐसे कहा था कि आप विलाप न करे। मैं जल्दी ही शत्रुओ को जीतकर आ जाऊंगा। अब वापिस नहीं गया हूँ तो माता-पिता ब्रजवासियों का स्नेह तोड़ने से कैसे बात सत्य होगी।

तिन कौ जाय उपदेस द्यौ, पूरन ब्रह्म सु ग्यान।।५।।

हे उद्धव! वृजवासी युवतियां वे सदा ही मेरा ध्यान करती है। उन्हें जाकर उपदेश दीजिये। जो तुम्हारे पास, ब्रह्मज्ञान है वह आप उन्हें समझाये। मेरा ध्यान करती है वह उनसे छुड़वा दीजिये। जीव ब्रह्म की एकता बतलाकर प्रेमभाव से निवृत्त कीजिये।

बागो अपना अंग को, क्रीट मुकट पैरान।
श्रुति कुण्डल माला दई, अपनू वेद बखान।।६।।

श्री कृष्ण ने अपने अंग को बागो-कुर्ता-चोला उतार कर दिया और क्रीट मुकुट आदि अलंकार भी दिये। कांनों के कुण्डल भी दिया और अपना ज्ञान भी दिया।

हरि अपनौ रथ साजिकें, सूत स्वारथी दीन।
उद्धव चरन प्रनाम करि, रथ आरोहन कीन्ह।।७।।

हरि ने अपना रथ सजाकर के उद्धव को सौंप दिया। साथ में सारथी भी रथ चलाने के लिये दिया। उद्धव ने हरि के चरणों मे प्रणाम किया और रथ पर आरोहण किया।

विद्यावंत बवेकवंत, शीलवंत मन सुद्ध।
चित चहन जागत सबै, सो पठए श्री उद्ध।।८।।

उद्धव विद्या संपन्न, विवेकवान, शीलवान, मन से शुद्ध थे। उद्धव की सभी प्रकार से योग्यता देखकर वहां ब्रजभूमि का हाल जानने के लिये श्रीकृष्ण ने भेजा था।

सु हृदय सखा श्री कृष्ण को, सुर गुरु सीख परवीन।

तातै लायक पठिये, वृज कूं आयसु दीन्ह।।९।।

उद्धव भी कृष्ण का परम् सखा सुहृदय है देवगुरु वृहस्पति के समान शिक्षा देने मे प्रवीण है। ऐसा जानकर, योग्यता देखकर उद्धव को भेजा । ब्रजवासियों को आश्वासन–आज्ञा उद्धव ही दे सकता है।

रथ जोति उद्धव चले, आनंद अति मन मांहि।
दिनकर गृह प्राप्ति भए, गए नंद के गांव।।१०।।

रथ को जोतकर उस पर सवार होकर उद्धव चले। उन्हें आनन्द का कोई आर पार नहीं था। मन ही मन आनन्दित होते हुए मथुरा से चले और सायं समय सूर्य छिपने के समय नंदगाँव पहुँच गये।

दिस दिस गोर्द्धन आव है, अर वृषभन की गाज।
बछ बचन लागत भले, मन हु थान सुर राज।।११।।

चारों दिशाओं से गायें वन से आ रही है। गायों के साथ वृषभ गर्जन करते हुए, दहाड़ते हुए आ रहे हैं। गोकुल मे घर घर छोटे बछड़े भी गायो के आने की सूचना सुनकर अपनी माताओं की याद मे बोलते हुए अच्छे लग रहे थे मानो वह ब्रजभूमि इन्द्र के स्थान स्वर्गलोक जैसी लगती थी।

अपनी अपनी मंडली, मिलि ग्वालनि के वृंद।
मुरली मधुर बजाव है, गावै गुण गोम्यंद।।१२।।

ग्वालों का समूह अपनी–अपनी मंडली से मिलकर मधुर मुरली बजा रहे हैं। गोविंद श्री कृष्ण के गुणों का गान कर रहे है।

गो दोहन मोहन चले, टेरत ले ले नांम।
गोरज उडी अंबर लगी, छिवि पावन नंद गांम।।१३।।

ग्वालें गायों को दुहने के लिये चल पड़े उन्हीं गायों का नाम लेकर बुलाते। वही गाय और उनका वही बछड़ा आ जाता। वन से चरकर गाये वापिस गोकुल गाँव में सूर्य अस्त के समय आ रही थी। गायो के खुर से उड़ने वाली धूली से आकाश आच्छादित हो गया था। उसी गोरज से नन्दगांव शोभा पा रहा था।

तब सूधो रथ हांकि कै, गये नंद की पौरि।
नंद जसोधा देखि कै, सनमुख आये दौरि।।१४।।

इस प्रकार के गोकुल गांव की शोभा देखकर उद्धव ने रथ आगे हांका और नंद जी के दरवाजे पहुंच गये। नन्द यशोदा ने देखा कि कोई रथ दरवाजे पर आया है

दौड़कर उद्धव जी के सामने पहुंच गये।

उद्धव रथ तै उतरै, मिले नंद से ध्याय।
नैन सजल जल से भरे, आनंद अंग न समाय।।१५।।

उद्धव रथ से नीचे उतरे और दौड़कर नन्द जी से मिले। उद्धव के नयन सजल प्रेम अश्रुओं से भर गये। इतना आनंद बनकर बहने लगा।

कर गहि गृह मै ले गये, सूत सनेह के भाय।
असन वसन बौहु विधि दिये, निज मंदरि पधारीय।।१६।।

नन्द जी ने उद्धव का हाथ अपने हाथ में लिया और घर में ले गये सुत स्नेही कृष्ण मित्र को अपना ही पुत्र मानकर आदर सत्कार किया। उन्हें बैठने के लिये सुन्दर सा आसन दिया। बहुत प्रकार के सुन्दर सौम्य वस्त्र प्रदान किये। अपने निज कक्ष में ले जाकर उद्धव जी को आदर सहित बैठाया।

अरचन चंदन पौहप जल, धूप दीप कर आदि।
विधि पूरब पूजा करी, सुख सेज्या कुशमादि।।१७।।

अर्चना पूजा करने के लिये चंदन लगाया। पुष्प, जल, सुगन्धित इत्र, धूप, दीपक आदि से विधि विधान से पूजा की फूलों की सैज पलंग पर सुख पूर्वक बैठाया।

नन्द जसोदा बैठिके, पूछन लागे बात।
सूरसेन के पुत्र की, कहो परम कुशलात।।१८।।

नन्द यशोदा दोनों पास में बैठकर बहुत सी बातें पूछने लगे। प्रथम समाचार सूरसेन के पुत्र वसुदेव देवकी कैसे है ? उनके बारे में कुशल समाचार बतलाइये।

उनके खट् बालक हते, बंदि मेलिवे काज।
कितिक दिवस दुखित भये, दुष्ट कंश क राज।।१९।।

उन वसुदेव देवकी के छ: बालक मार दिये और उन्हें जेल में बन्दी बना दिया। कितने दिनों से दु:खी थे। दुष्ट कंस के राज्य मे।

भली भई सानंग सहत, कृष्ण कियो हति कंस।
जा दिन तै सुख पावै ही, मात पिता यदु वंस।।२०।।

दिन आये हैं। कृष्ण के माता पिता और यदुवंश सभी सुखी हो गये हैं।

जां कै अघाद त्रिया, राम कृष्ण सुत दोय।
सरि भरिता वसु देवकी, कहौ कौन पे होय।।२१।।

जिसके रोहिणी देवकी त्रिया है, राम-बलराम और कृष्ण दो पुत्र है शिरोमणी पत्नी वसुदेव की देवकी है। कहिये उद्धव जी ऐसा गृहस्थ परिवार कहां

मिलेगा?

देवन कुं मंगल भयो, या वसुदेव जनमंत।
द्वंदभि बजे अनंत।।२२।।

जब राम कृष्ण का जन्म हुआ था, तब मंगलगान होने लगा था देवताओं ने अपनी खुशी प्रकट करते हुए दुन्दुभि बजाई थी।

पटिरानी देवक की सुता, सुक्रत परम कृपाल
ज्याकै गृह परगट भये, राम कृष्ण दोऊ बाल।।२३।।

देवक की पुत्री देवकी वसुदेव की पटरानी है। परम् सुकृत पुण्य किया होगा जिसके घर बलराम और कृष्ण दो बालक प्रगट हुऐ।

उद्धव तातै कीजियै, उनको सुमरण ध्यान।
अब कहि धौ कब आव है, नन्द बधाई कान्ह।।२४।।

इसलिये उद्धव! उन बाल कृष्ण का ध्यान कीजिये। उनका ही स्मरण कीजिये। अब बतलाइये कि वे मेरे बधाई रूप कृष्ण बलराम कब आयेंगे। मुझे बधाई उपहार रूप में मिले थे।

सुफलग सुत आयै भलै, राम कृष्ण ले जान।
तबतै तन गति द्व भई, यहां देही उहां ध्यान।।२५।।

हे सुफलग पुत्र उद्धव। आप भले ही आये हैं राम कृष्ण रूप में आपको माना जाना है। जब से आप आये हैं तभी से इस शरीर की दो गति हो गयी है। यहाँ पर तो यह शरीर है, किन्तु मेरा ध्यान मन वही पर कृष्ण के पास ही है।

जसोधा नैन जल सै भरै, रंच स्वांस नहीं लेत।
कहि बाता पुत्र की, भरि भरि हाथो देत।।२६।।

यशोदा के नयनों में जलभर गया। श्वांस गति बिगड़ गयी है लंबी लंबी श्वासे लेती है। अपने कन्हैया की बाते कहती है। तो हाय हाय कहती हुई श्वांस भर भर के बोलती है।

निमख निमख मे झगरते, वै मोसै दोउ भ्रात।
अब बहुरयौ कब देखि हौ, चौरी चौरी दध खात।।२७।।

क्षण-क्षण में दोनों भाई राम-कृष्ण मेरे से झगड़ते थे। अब फिर से उन दोनों भाइयों को कब देखुगी, जो चोरी करके दही खाया करते थे।

मोतीयन की माला गलै, राज हंस गति दारि।
यह आंन कब देखि हो, श्रीराम कृष्ण की जोरि।।२८।।

जिन राम–कृष्ण के गले में मोतियों की माला है। राजहंस की तरह उनकी दौड़ है, यह दोबारा मुख कब देखुंगी। राम–कृष्ण की दिव्य जोड़ी सही सलामत रहे।

पितांबर की बोढ़णी, अर बाजत मृदु बैन।
अब बहुरयौ कब देखिहुं, वन वन चारत धैन।।२९।।

पिताम्बर वस्त्र की चादर ओढ़ी हुई तथा मधुर–मधुर वंसी बजती हुई इन कानो से कब श्रवण करूंगी? वन वन मे गायें चंराते हुए अब मैं कब देखुंगी।

वे तो भूखे होत है, प्रात काल बानि।
ऊंहा कौन कोउ राखि है, रोटी घृत सौ सानि।।३०।।

वे तो प्रात: काल ही भूखे हो जाते हैं। वहां मथुरा में कौन कोई रखेगा? उन्हें घी से चुपड़ी हुई रोटी, मक्खन सुबह–सुबह कौन देगा?

बात ये कै द्यौस की, तुम सुं कहों बनाय।
हीये मै कर बालसी चित चितवै जाय।।३१।।

हे उद्धव! कुछ ही दिन पूर्व की बात है वह मैं तुम्हें समझाती हूँ मेरे हृदय में जलन करने वाली है। जब भी मैं चिन्तन करती हूँ, मनन करती हूँ तो मेरा हृदय रोता है दु:खी हो जाती हूँ।

उद्धव पय उफनि चल्यो, हूं दोरी तजि अंग।
पाछै ते मेरो लला, उद्धधि को भाजन भंग।।३२।।

दूध गर्म करने के लिये चूल्हे पर चढ़ाया हुआ था।आंच अधिक लगने से दूध उफनने लगा उफनते हुए दूध को मैने देखा तो अपना दही मंथन का कार्य छोड़कर दूध बचाने के लिये दौड़ पड़ी। पीछे से मेरे लला कन्हैया ने दही मंथन करने का बर्तन भंग कर दिया।

मोहि देखिकै रीस भई, थोरे दधि को काम।
उखल सौ आनंद घन, मैं बांध्यौ गहि दाम।।३३।।

मैंने दही का बर्तन टूटा हुआ देखा तो क्रोध आ गया। थोड़े से दही के लिये मैंने आनंद घन लला को ऊखली से बांध दिया।

ता दिन तै खटकत सदा, मैरे यो अविवेक।
इतनो सुत सो संभवै, उद्धव अवगुन एक।।३४।।

उस दिन मैंने लला को बांधकर अच्छा नहीं किया। मेरे मन में यह बात अब भी खटकती है कि मैंने अविवेक–अज्ञानता से क्या कर डाला? इतनी छोटी–

छोटी बाते नुकसान तो पुत्र से होते ही रहते हैं। हे उद्धव! यह अवगुण मैंने कर डाला अब मैं पछता रही हूँ।

तब उद्धव ऐसे कहे, सुत के सुनो संदेश।
उनको नाहि न विसरौ, या वृज को आवेस।।३५।।

तब उद्धव जी ने कहा–अब अपने सूत के संदेश सुनो! मैंने उनकों मित्र भाव से देखा है वे अब तक ब्रज भूमि में की हुई लीला को भूले नहीं है। जब कभी भी ब्रजवासियों की याद करके वियोग का दु:ख होते हुए मैंने देखा है। ब्रज का आवेश ही कुछ ऐसा ही है।

तुम्हें पांय लागन कहयौ, जल सो नयन भराई।
मइया मोहि न बिसरत, जिन बड़े कीये पे पाई।।३६।।

आते समय मुझे कहा था कि सर्वप्रथम मेरी तरफ से माता यशोदा के चरणों को छुकर मेरा प्रणाम कहना जब इस प्रकार से कह रहा था तब उनके आँखों में आंसुओं की धारा बह रही थी हे मईया! आप मुझे भूल मत जाना जिन्होंने बहुत बड़े पुण्य के कार्य किये हैं वही यशोदा जैसी माता को प्राप्त करता है मैं धन्यभागी हूँ।

जा दिन तै आए इहां, छाड़ो गोकुल गांव।
मोहि न कोऊ नाहिन कहै, कान्हा कान्हा योह नांव।।३७।।

जिस दिन से मैं यहां गोकुल छोड़कर मथुरा में आया हूँ तब से मुझे कन्हैया–कन्हैया इस प्रकार से कोई नहीं कहता है। मैं इस प्रिय मेरे नाम को सुनने के लिये तरस गया हूँ।

जब हम तुम तै विहुरे, आये मं थारे मांझ।
मै कबहु नांहिन पीयो, घीया पुरातन साज।।३८।।

जब से मैं गोकुल के लोगों से बिछुड़कर मथुरा में आ गया हूँ तब से मैंने कभी भी मक्खन आदि पकवान नहीं खाये हैं।

अरू अब बाबा नंद सो, ऐसे कहियो जाय।
बै तुम नीके राखियो, धोरी धुमर गाय।।३९।।

कन्हैया ने संदेशा भेजते हुए कहा है कि नंदबाबा से जाकर कहना कि मेरी प्यारी धोरी धुमर गायों की सेवा ठीक से करना।

मन बच कर्म करित हो, तम्हारे पूरण काम।
आवहि गे दिन पांच मे, हम भइया बलिराम।।४०।।

मन, वचन, कर्म से आपके कार्य हम पूर्ण करेंगे। कृष्ण ने कहा है कि मैं और बलराम दोनों भाई पांच–सात दिन में आयेगे।

राज पाट सिंघासन, खान पान सुख देत।
तो तुम्ह सुख पावत उहा, बंसीवट संकेत।।४१।।

राजपाट, खान पान सभी कुछ आपको वहां गोकुल में सुलभ ही है वहां पर आप लोग सुखी होंगे ही बंसीवट ही सांकेत स्वर्ग है।

बात कहत बीती निसा, तम चर कीन्हौ ग्यान।
भारो गरजन मेघ की, घरि घरि दधि मथानि।।४२।।

इस प्रकार की प्रेम रस से भरी हुई बातें करते हुए रात्रि व्यतीत हो गयी तारों का चलन देखकर ज्ञान किया कि अब सूर्योदय होने ही वाला है ब्रह्म मुहूर्त उठने का समय हो गया था घर घर दही मथने की आवाज आने लगी मानो मेघ गर्जना कर रहे हैं।

उद्धव उठि जमुना गऐ, कीन्है जल असनान।
सेवा सुमरन सब कीयो, जितोफ अपनी ग्यान।।४३।।

उद्धव जी वहां से उठकर यमुना जी में स्नान करने चल पड़े। वहां यमुना में स्नान, स्मरण सभी कुछ किया जितना उन्हें ज्ञान था।

करि कृत आयो घोष, मे उद्धव अति आनंद।
या वृज सुख पावत भले, पूरन परमानंद।।४४।।

उद्धव जी अति आनंद में नित्य स्नानादि क्रिया करके वापिस नन्दजी के घर लौट आए। यहां वृजभूमि के निवासीगण अतिसुख की प्राप्ति करते हैं उस पूर्ण परमानन्द की प्राप्ति यहां सहज ही सुलभ है।

अपनै अपनै ग्रहतै, बाहर आई ग्वाल।
रथ देख्यों गोपाल को, नंद महर कै द्वारि।।४५।।

अपने–अपने घर से ग्वाल ग्वालिन बाहर निकलकर आयी तो वहां पर नन्द जी के दरवाजे पर गोपाल कृष्ण का रथ खड़ा हुआ देखा।

जुबति युथ एकत भई, कान्हो यह विचार।
ए नाहिन सुत नंद को, है कोउ पतिहार।।४६।।

युवतियां एकत्र हुई और विचार करने लगी कि आज नन्दसुत कान्हों आयो हैं दूसरी ने कहा कि यह आया हुआ कोई चिट्ठी लेकर संदेश वाहक कोई

आया है कृष्ण नहीं आया।

गोपी उद्धव पै गई, कीनो बंदन पान।
सीस नाय आदर दीयौ, सखा कृष्ण को जान।।४७।।

कृष्ण का सखा उद्धव नन्द जी के द्वारे पर आया है ऐसा जानकर गोपियों ने उद्धव को शीश निवाया वन्दना की प्रणाम किया।

उद्धव वृज आए भले, कहो कृष्ण कुसलात।
उंहा जाम कीन्हीं भली, कहो कुछ उत्तम बात।।४८।।

हे उद्धव! आप ब्रज में अच्छे आये हो अब कृष्ण की कुशलता कहिये यहां ब्रज भूमि को छोड़कर वहां मथुरा में जा कर क्या भला कार्य किया है। यहां से वहां कुछ उत्तम बात है तो अवश्य ही बतलाइये।

तुम्ह साचे उतम सखा, मन कर्म वचन सहेत।
प्रांनन कूं वै ले गए, पिंड दान तुं म्हा देत।।४९।।
शरीरो को जलाञ्जलि देने आये हो।
इह वृज कबहु आई है, मइया कै हित काज।
वृज जुवतिन कोना भजै, भए उहां के राज।।५०।।

वे कृष्ण इस ब्रजभूमि में कभी वापिस लौटकर आयेंगे क्या? हम तो युवतियां ग्वाल है किन्तु अपनी माता यशोदा के हित के लिये तो उन्हेंआना चाहिये हमें तो क्या याद करेगें? हम उनके लगती ही क्या हैं ? यहां वृन्दावन को छोड़कर मथुरा के राजा बन गये हैं।

हम श्रवनन छाड़ि सुनी, मोर पिछवन धात।
सुर ही साचे चीत्र को तांहि देख सुकचात।।५१।।

हमने कानों से सुना हुआ छोड़ दिया है, मयूर नृत्य करता है उसके पीछे मोरनी रहती है मयूर सत्व धातु त्याग देता है और मोरनी उसे ग्रहण कर लेती है। सुरही मोरनी मयूर के धातु का संचय करती है और मयूर के वंश की अभिवृद्धि करती है और उसे देखकर ग्रहण करके सुंकुचा जाती है अर्थात् गोपियां कहती है कि हम भी कृष्ण की लीला के चित्र को अन्दर ग्रहण कर चुकी है जब भी स्मरण करती है तो वह चित्र सामने आ जाता है और संग्रह करके रखती है अब सशरीर लीला तो नहीं किन्तु मानसिक लीला चल रही है।

उद्धव हम तो बावरी, वै करत कोन सों प्रीति।

उहां जादू छाड़ी सबै, नंद गांव की रीति।।५२।।

हे उद्धव ! हम तो बावरी–पगली है वे श्री कृष्ण किस से प्रीति करते है ? उनके लिये तो सभी बराबर है। वहां मथुरा में यादव कृष्ण ने यहां नन्द गांव की रीति रिवाज सब छोड़ दी है।

उद्धव तब ऐसै कहै, सुनहु सकल वृज नारि।
बात कहै पार ब्रह्म की, आत्म तत्व विचारि।।५३।।

इन गोपियों की प्रेमभरी बातें श्रवण करके उद्धव ने इस प्रकार से कहना प्रारम्भ किया। हे ब्रज नारियों! आप सभी ध्यान देकर श्रवण करो। मैं आपको परब्रह्म परमेश्वर की बात कहता हूँ जिसे आत्म तत्व पर विचार होगा। आप आत्म तत्व ब्रह्मज्ञान का विचार करो।

वै तुम सो करि है कृपा, प्रभूता जांणि परम।
तजिये नांतो गांव को, भजिये पूरन ब्रह्म।।५४।।

उन श्री कृष्ण ने आप लोगों पर कृपा की है। यह उनकी परम प्रभुता महानता है। अब आप लोग गाँव का सम्बन्ध छोड़कर कहो कि कृष्ण हमारे हैं ऐसा छोड़कर पूर्ण ब्रह्म परमात्मा का भजन करे।

छाया माया तै रहित, नहि होत उनमान।
हरि तुम कूं क्रीडा करी, भजिये सो भगवान।।५५।।

वह परब्रह्म माया तथा माया की छाया से रहित है। उनका प्रत्यक्ष या अनुमान नहीं किया जा सकता। आप कहती हो कि हरि ने हम से क्रीडा की है तो उस हरि का भजन करो वही भगवान् सर्वत्र व्यापक है।

जा पद कुं जोगेश्रबा, लगे रहत अनुराग।
सो साधन कीजै सदा, नाम तांहि वैराग।।५६।।

जिस परम पद की प्राप्ति हेतु बड़े बड़े योगेश्वर लोग संसार का अनुराग छोड़ कर लगे रहते हैं। वही साधन सदा ही आप लोग कीजिये उसी का नाम वैराग्य है।

नैन मूंदि मुख मोनि गहि, त्रिगुण रहित गुणधांम।
तब तुम ही मै देखि हौ, आप ही आतम राम।।५७।।

आप लोग ध्यान साधना करें। आँखे बंद करके, मौन धारण करे पश्चात् त्रिगुण सत्व, रज और तम इन से रहित और सद्गुणों शक्ति सम्पन्न उस परमं ब्रह्म

का ध्यान करो। ऐसी साधना अवस्था में अपने को अपने आप में ही देखे। उस पर ब्रह्म को भी आत्म स्वरूप मे देखे आपको अनुभूति होगी कि आप ही आत्म राम है। आप ही ब्रह्मरूप है द्वेत भाव की निवृति हो आयेगी।

मधुकर अंतर क चिन है, कठिन बात कही जाय।
भूख मरै दिन सात लो, सिघ घास नहीं खात।।५८।।

हे मधुकर उद्धव! आप ने अन्तर ध्यान की बात कही यह कौन करेगा यह बात तो बड़ी कठिन मालुम पड़ती है यदि सात दिनों तक सिंह भूख मरे तो भी घास नहीं खायेगा। ऐसी ही हमारी दशा है।

जदपि योग प्रसिध है, तो तुम ही ले जाव ।
बहुरयो नाहि पाय हो, असो उतम दाव ।।५९।।

गोपियां कहती है कि यद्यपि योग साधना प्रसिद्ध है। अज्ञात नहीं है फिर भी हमारे वश की बात ही नहीं है। हे उधव! यदि योग इतना ही अच्छा है तो आप ही क्यो नहीं ले जाते? बार बार ऐसा मौका फिर नहीं मिलेगा। यह दाव आप ही खेले। हमें नहीं सिखाओं।

उद्धव जाते देखिये, तत्व रूप तन मांहि।
सो हमकुं सीखवत कहा, तम ही साधत नाहि।।६०।।

हे उद्धव! यदि इस शरीर में तत्व रूपी जीव आत्मा विद्यमान है उसे आप ही देखिये। आप हमे इस प्रकार की शिक्षा क्यो दे रहे है? यदि योग में ही आनन्द होता तो आप साधन क्यों नहीं करते? यहां क्यों आये हो ?

या तो जिन कुं चाहिये, जिन कै अंतर राय।
दादुर तो जल बिन जीय, मीन तुरंत मर जाय।।६१।।

यह योग साधना तो उनको करनी चाहिये जिसके अन्तकरण में विकार है। यहां तो अन्तराय अवगुण मिट चुके हैं। दादुर मेढक तो जल में तथा जल के बाहर भी रह सकता है, किन्तु मीन–मछली तुरंत मर जायेगी हे उद्धव! यह तो अपनी अपनी प्रकृति है। आप उद्धव दादुर हो और हम तो मीन के समान है।

है दोउ येकै ठोर कै, दादुर मीन समान,
वै जल विन मारूत भखे, वै विघुरत तजै प्रांन।।६२।।

मीन और दादुर दोनों एक ही स्वभाव के समान ही है वह दादुर जल बिना वायु का भक्षण कर लेता है और जीवित रह जाता है और मीन जल बिना प्राण ही तज

देती है। वे योगी लोग दादुर की भांति है उनको तो जीने के लिये दूसरा विकल्प वायु भी है किन्तु हम प्रेमी लोग मीन की तरह है श्री कृष्ण प्रेमी बिना प्राण त्याग देगे।

उद्धव इतनो अंतरो, वृज मथुरा के लोग।
विमुख करवा रूप कूं, जारि देह इह योग।।६३।।

हे उद्धव! मथुरा और ब्रज के लोगों में इतना ही अंतर है वे मथुरा के लोग मेढक की तरह है हम ब्रजवासी मीन की तरह से है। श्री कृष्ण के सलौने रूप से हमें विमुख करने के लिये आये हो तो ऐसा करो हमे आप अपनी इस अपनी योगाग्नि में जला दीजिये।

पठवे आए कूंन के, कोन मित्र को जानि।
इहालु म्हारी कोन सो, कहो कौन पहिचान।।६४।।

हे आगन्तुक! आप किसके भेजे हुए आये है? आप किसके मित्र है? यहां पर आपकी हमारी क्या पहचान है क्या सम्बन्ध है?

बचन बचन छाडत विद्या, नाहि जानत मन हेत।
मधुकर दाधे अंगपरि, कहा नोन घिस देत।।६५।।

आप प्रत्येक वचन से व्यथा कष्ट दे रहे है। हमारे मन के प्रेम को नहीं जानते। हे मधुकर! जले हुए अंग पर नमक क्यों घिस रहे हो? हम तो पहले से ही कृष्ण के वियोग मे दु:खी है और आपने आकर हम से कठोर बचन कहे है हमारे दु:ख को दुगुना कर दिया।

तन कारे मन सांवरे, कपटी परम पुनीत।
मधुकर लुबधी वास के, निमख येक के मीत।।६६।।

आप शरीर से काले है और मन से भी सांवरे हैं। आप कपटी है और अपने को परम पुनीत समझते हो, हे भंवरा। आप तो सुवास सुगन्धी के लोभी है। सुगन्ध ग्रहण की और उड़ जायेगे। एक क्षण के ही मित्र है।

तुम तो स्वारथ के संगी, नहि बेलि सो भाव।
भावै तो गहिबर बड़ो, भावै जर बर जाय।।६७।।

तुम तो स्वार्थी हो। तुम्हें बेल से कुछ भी लेना देना नहीं है। भावे तो वह बढ़े फूले फले और भावे तो जल बल जाये।

तुम म्हा तो चरनन ना छुवो, ऐसी गति के बीर।
मधुकर अंतर लालची, नहीं जानत पर पीर।।६८।।

तुम अति लालची हो। हमारे चरणों को छुवो मत। तुम्हारी गति स्वार्थी की

है अपने स्वार्थ पूरा होते ही तुम छोड़ जाओगें। हम चाहे मरे या जीए। तुम्हे क्या लेना देना है। मधुकर भवरां अति लालची होता है वह क्या जाने पराई पीड़ा।

कित विधना सिरजी हमै, कित दे बृज को वास।
कित मिलाप श्री कृष्ण सूं, कित बिछुरन की आस।।६९।।

क्यों विधि ब्रह्मा जी ने हमारी सृजना की क्योंकि ब्रज भूमि में निवास दिया। कृष्ण से मिलाप भी क्यों किया ? और वापिस बिछुड़ने का विधान भी क्यों किया?

नयन हमारे मधुकरा, आनन कृष्ण सरोज।
वृज छाडयौ जिह द्यौस तै, बैरी भयो मनोज।।७०।।

हमारे गोपियों के नयन मधुकर-भंवरा है। कृष्ण का मुख कमल है जिस दिन से ब्रज भूमि छोड़ी है, तभी से हमारा मन बैरी हो गया है। अन्य कार्य को छोड़कर हमारा मन कृष्ण के मुख कमल के रस का ही पान कर रहा है।

मन मोहन यो नाम है, मोहन नैन विसाल।
मोहन मूरत माधुरी, मोहन बचन रसाल।।७१।।

मन को मोहित कर देने वाला यह मोहन नाम है उनके नयन भी मोहित कर देने वाले विशाल है, उनकी मूर्ति शरीर भी मधुर है मोहन के वचन भी रस से भरे हैं।

सब अंग मोहन रूप है, मोहन सब उनहारि।
मोहन पै कछु मोहनी, लै मोही वृजनारि।।७२।।

सभी अंग हाथ पांव आदि मोहन रूप है, रूप रंग चेहरा भी मोहन रूप है। मोहन के पास कुछ मोहनी शक्ति है जिससे ब्रज की नारियों को मोहित कर लिया है।

वचन वचन सी कीन्ही त्रिया, हम तुम कितियेक बात।
सुरन सहित सुर जोखिता, थके धाम नहीं जात।।७३।।

मोहन ने अपने मधुर वचनों से अनेक स्त्रियों को अपना बना लिया। हम और तुम को अपनी बना लिया तो कौन सी बड़ी बात है? देवताओं को भी उनकी पत्नियों के सहित अपनी बना लिया। उनके अपने-अपने सुरलोकादि दिव्य धाम होते हुए भी वहां अपने घर धाम नहीं जाते।

एक समै नि सरद की, मोहन बेनि बजाई।
बैन सैन दे वृज वधू, लीनी सबै बुलाई।।७४।।

एक समय की बात है शरद् पूर्णिमा की चांदनी शीतल मधुमय रात्रि को ब्रजभूमि में बंसी बजाई। ब्रज बंधुओं ने मुरली की धुन सुनकर सभी ने एक दूसरी को

बुला लिया। गोपियां को शरद् पूर्णिमा में रास रचाने के लिये बंसी की सैन से बुलाया था।

अरस परस हम सूं मिले, कुंज कीयो बिहार।
सो सुख नाही बिसरै, सुमरत बारूंबार।।७५।।

हमसे हमारे प्यारे कृष्ण कन्हैया प्रेम भाव से सभी से मिले। कुंज में रास रचाने की तैयारी की। वो मिलन का सुख हमें जो हुवा उसको हम भूल नहीं सकती बारंबार स्मरण करती है।

एक समै जल के विषै, करत केल असनान।
चीर चोर तरवर चढे, वे जसोदा के कान्ह।।७६।।

एक समय की बात है कि हम सभी ग्वाल बालाऐं यमुना जी में स्नान कर रही थी और जल क्रीड़ा कर रही थी। उसी समय न जाने यशोदा का कान्हा कहां से आ गया और चुपके से हमारे चीर हरण करके तरवर पर चढ़ गया।

बहुरयौ नाहि न विसरत, भुज बली की उनहारि।
राखि लियो वृज कुल सबै, कर पर गिरवर धारि।।७७।।

कृष्ण की लीला भूली नहीं जाती, जब उन्होंने नखपर गिरवर को धारण किया था भुजबली का रूप दिखाया था। उस समय डूबते हुए ब्रज की रक्षा की थी।

बहुरयौ वन वन के विषै, कुंज कुंज के धाम।
हरि हम सो क्रीड़ा करी, पल पल पूरन काम।।७८।।

वृन्दावन के प्रत्येक वन मे भ्रमण किया था । प्रत्येक कुंज को धाम बनाया था, उन्हीं वन में हरि ने हमारे से क्रीड़ा–खेल किया था।

एक समें इक गोपिका, गई ग्रहै द्वारि।
दधि चोरत रोके हरि, चाले चापट मारि।।७९।।

एक समय एक गोपिका अपने ग्रह के द्वार पर गई थी। उसी समय कन्हैया ग्वाल बालों के साथ दही चुरा रहे थे और पकड़े.गये तब हरि को रोका गया। चपेटा लगाकर वहां से चल पड़े।

हरी देव ते भये, आवै सा करि खोरि।
मटकी पटकी भूं सो, हरि हार कूं तोरि।।८०।।

हरि कन्हैया देव जैसे हो गये। गोपियों को खोजते खोजते वहां चले ही आते, पानी लेने आती जाती गोपियों की कन्हैया मटकी फोड़ देते कहां से आये कब आये यह पता ही नहीं चलता। गले का हार भी हरि कभी तोड़ देते।

ऐसी दिन दिन की कथा, वरनत नाही औरी।

वै हमरी जानत सबै, मन मोहन चित चोरि।।८१।।

ऐसी रोज–रोज की कथा कृष्ण चरित्र सुनने को मिल जाता था। कहां तक वर्णन करे? वे गोपियों ग्वाल बाल सभी जानते थे और जो कुछ भी अनहोनी हो जाती थी तो वे समझ जाती कि यह कन्हैया चित्त चोर का ही कार्य है

लीला गोकुल गांव की, हम जानंत मन मांहि।

उद्धव तुम श्रवन सुनी, नैना देखी नांहि।।८२।।

ये अद्‌भुत लीला गोकुल गांव की है। हम जानती है और मन में धारण कर रखी है। उद्धव ! तुमने कांनों से सुनी होगी किन्तु नेत्रों से देखी नहीं है।

तो तुम ल्याये योग कुं, यदुपति के परधान।

या रस की सींची सबै, नहि भावत रस आन।।८३।।

हे उद्धव ! अब तुम हमारे लिये योग लेकर आये हो। आप यदुपति कृष्ण के प्रधान बनकर आये हैं। हम तो पहले ही प्रेम रस से सींची हुई है अन्य किसी योग भक्ति के रस की आवश्यकता नहीं है।

पति वरता सब द्यौस की, साख भरे सब गांव।

जदपि भजे कहु भूप को, विभिचार नै नांव ।।८४।।

हे उद्धव! हम सभी पतिव्रता नारियां है इस बात की गाँव के लोग सभी साक्षी है यघपि अपने राजा की सभी सेवा करते है ये हमारे नन्द जी राजा आज्ञा सेवा का पालन करना हमारा कर्तव्य है यहां पर व्यभिचार का नाम ही नहीं है।

सीप रहत सागर विषै, मन मिलाप नहीं लेत।

मधुकर उतम सो मतो, स्वांत बूंद सू हेत।।८५।।

सीप वसै मंझ सायरा, ओपत सायर साथ रैणायर राचै नहीं चाहै बूंद स्वात 'वील्हो जी' यद्यपि सीप समुद्र में ही रहती है किन्तु उसका मन सायर से मिलता नहीं है। हे मधुकर! वह सीप स्वाति नक्षत्र के बूंद की आस रखती है हमारा भी वैसा ही विचार है हम भी संसार सागर में रहती है, किन्तु हमें आसा एक कृष्ण की ही रहती है।

मान सरोवर सूं उड़ै, आनि भूमि चनि जाहि।

विधि बाहन खुध्यारथी, तोउ सर न्हीठ खाहि।।८६।।

''हंसा रो मान सरोवरा, कोयल अम्बाराय'' हंस मान सरोवर से उड़कर सामान्य भूमि पर चला जाता है विधि का वाहन हंस भूखा है तो भी तालाब में स्थित

कीड़े.मकोड़े नहीं खाता। वह तो मोती ही चुगेगा। ऐसी ही हम ब्रजवासी लोग हंस की तरह ही उत्तम की संगति ही करते हैं।

जल नांहि न थोरा कुछ, सागर मही निवास।
मेघ बूंद चात्रिक रटै, और सब झूठ समान।।८७।।

जल कम नहीं है वह सागर नदी आदि में निवास करता है किन्तु चातक पक्षी मेघ की बूंद के लिये पीयु पीयु की आवाज लगाता है ''भुंय पड़ियो भावै नही, बूंद अधर की आस'' एक सत्य प्रेम रूप कृष्ण ही है उसकी ही आस लगाये बैठी है उनके बिना सब कुछ झूठा है।

ए दोउ नयन बिराके, निगम कहे तै नित।
उंह चकोर अंतर कीयो, दिनकर अरिस सीमित।।८८।।

ये दोनों नयन बिचारे है सभी वेद पुराण कहते हैं चकोर पक्षी का जोड़ा साथ रहता है एक दूसरे को आँखों के सामने रखता है किन्तु दिनकर–सूर्य जब छिप जाता है तो उनका वियोग हो जाता है उनके प्रेम भाव को सीमित कर देता है गोपियां कहती है कि चकोर पक्षी की तरह ही हमारा वियोग हो गया है कृष्ण जमना जी के उस पार मथुरा में है। इस पार ब्रज में है दिनकर अक्रूर ने ऐसा वियोग करवा दिया है सूर्योदय समय अनुकूल होगा तो पुन: मिलन भी संभव है।

बैली होत बरषा समै, करत वृछ सुं प्रीति।
प्रान गया छाड़ै नही, अपनी उतम रीति।।८९।।

वर्षा ऋतु मे बेल होती है वह वृक्ष से प्रीत करती है और वृक्ष से लिपट जाती है सर्दी ऋतु आती है तो वह बेल सुख जाती है उसके प्राण निकल जाते हैं तो भी उस वृक्ष को छोड़ती नहीं है उसका यह नियम उत्तम है। हम भी हमारे प्राण तो मानो निकल ही चुके है कृष्ण ले गये है फिर भी कृष्ण के प्रेम में है उन्हें कैसे छोड़ सकती है।

ऊधो! हम तो नर देह है, इतनी जानत नांहि।
रस तजि भजिये योग कूं, होत भंग व्रत मांहि ।।९०।।

हे ऊधो! हम तो नर देह धारी है । इतनी बाते नहीं जानती है आप प्रेमरस भक्ति रस को त्याग कर निरस योग कीजिये, यही तुम्हारे लिये ठीक रहेगा। हमारे व्रत मे बाधा मत डालो। जो भी जैसी है हम अपने आप में ठीक ही है

करि है जै आये करत, ऊंच नीच सो संग।
हमा नाहि न कीयो कबै, इष्ट भाव मे भंग।।९१।।

हम तो वही करेगे जो करते आये हैं। जैसा भी उच्च या नीच का संग हमें

प्राप्त हुआ है वही हमारे लिये ठीक है। हमने किसी के बहकावे में आकर अपने इष्ट भाव को बाधा नहीं किया है

जदपि कुबज्या चतुर है, ताउं कंस की दास।
भवन गवन कीयो जबै, तुम निज सेवक पासि।।९२।।

यद्यपि कंस की दासी कुबज्या बहुत चतुर है जब कुबज्या के भवन में स्वयं कृष्ण ने गमन किया था, तब आप कृष्ण के निज सेवक साथ में थे।

लछन तै नाहि डरै, बड़े भूप के पूत।
कैवै सांचे रावरे, के तुम सांचे दूत।।९३।।

बड़े भूप के पुत्र किसी के लक्षणों से नहीं डरते हैं कुबज्या जो चाहे कैसी हो उनसे डरने का कोई सवाल नहीं है। वे कृष्ण सच्चे राजा है और तुम उनके सच्चे दूत हो फिर डर किस बात का।

इह क विन लागत हमे, सुनौ स्याम के हेत।
आप उहां कुबज्या रची, हमे जोग सुख देत।।९४।।

कृष्ण के बिना हमें ऐसा लगता है कि क्या कहे? श्याम के हितैषी मित्र हमारी बात सुनो, आपने वहां पर कुबज्या से प्रेम किया और हमारे लिये आपने मित्र ऊध्वो के साथ योग भेजा है।

जो कुछ लिख्यो ललाट मे, बिछुरै मिलन संजोग।
दोस कौन कौन को दीजिये, इहां जानत सब लोग।।९५।।

जो कुछ भी हमारी ललाट-भाग्य में लिखा हुआ है वही मिलन बिछुड़न योग संयोग होता रहता है किस किस को दोष दे यही सभी लोग जानते हैं और मन को समझाते भी है यही हम कर रही है।

देह धारी जा कारनै, लगे है ताकै काम।
मन घट्या रस सो भर्यो, नहीं योग कूं ठांम ।।९६।।

जिस कारण से यह शरीर मिला है वही कार्य करने में लगे हैं। हे उद्धव! हमारा मन तो कृष्ण प्रेम रस से भर गया है, इसलिये उसमें अन्य कुछ भरने का स्थान शेष नहीं रहा है। तुम अब योग लेकर आये है कहां भरा जायेगा पहले से ही घट पूर्ण है अब कोई भरने की जगह नहीं बची है।

मोर मुकट गुंजा मंणी, कुंडल तिलक सुढाल।
पीतांबर छुद्र घंटिका, उर बैजंती माल।।९७।।

प्यारे कन्हैया के सिर पर मोर पंखो का रंग बिरंगा मुकुट, गुंजा मणी की गले

मे माला, कांनो में कुण्डल, ललाट पर तिलक शोभायमान हो रहा है। पीतवस्त्र छोटी छोटी मणियो की घंटिका, गले मे बैजयंती माला शोभायमान हो रही है।

कर लुकटी मुरली गहै, घूंघर वारे केस।
बैह मेरे मन में बसे, स्याम मनोहर वेस।।९८।।

एक हाथ में लुकटि दूसरे हाथ में मुरली ग्रहण कर रखी है उनके घुंघराले बाल इन सभी अलंकारो से युक्त श्री बाल कृष्ण हमारे मन में बस गया है उनके शरीर का रंग श्याम मेघ वर्ण मेघों की तरह ही तृप्त करने वाला है

तब उद्धव ऐसे कहै, धन धन्य वृज की नारि।
प्रेम भ कहर सब स भई, स्याम राम उर धारि।।९९।।

उद्धव जी ने सभी कुछ भलीभांति जानकर इस प्रकार से कहा धन्य धन्य हो ब्रज की नारियां। प्रेम रस मे भीगकर रसमय हो गयी है, श्याम राम को हृदय में बसा लिया है अब कुछ भी नहीं किया जा सकता है।

रूप धरयो तुम कारनै, गो पख अवतारि।
निरगुण ते सगुण भऐ, तुम सो करै बिहारी।।१००।।

इन्ही गोप ग्वाल गायों के लिये कृष्ण ने अवतार धारण किया है इनकी रक्षा करना ही धर्म है इसलिये आप श्री कृष्ण निर्णुण रूप से सगुण साकार रूप धारण किया। हे कृष्ण! वृन्दावन बिहारी जो आप करो वही मान्य है।

निगम यांहि खोजत रहै, अगम निगम नहीं अंत।
सो तुहारी झूठ न गहि, श्रीपति श्री भगवंत।।१०१।।

निगम जिस पूर्ण ब्रह्म को खोजते रहे तथा आगम दर्शन शास्त्रों का अंत नहीं है वे भी उसको खोजते रहे हैं वही तुम्हारी भी खोज है। वह झूठी नहीं है श्रीपति विष्णु भी भगवान श्री कन्हैया ही है तुम्हारी खोज सत्य है।

जोगेश्वर पावै नही, सिध समाधि लगाई।
सो तुमरै रस बस भयो, गोकुल चारी गाई।।१०२।।

बड़े-बड़े योगेश्वर भी उस ब्रह्म को प्राप्त करने के लिये सिद्ध समाधि लगाते है, किन्तु प्राप्त करने में कठिनाई ही आती है। वहीं निर्गुण ब्रह्म सगुण रूप से तुम्हारे रस में वंशीभूत हो गया है उसी ब्रह्म ने गोकुल में गांये चराई है।

करत करत ऐसी कथा। उंहा रहे खट्मास।
अब उद्धव आग्या लई, निज चरनन की आस।।१०३।।

उद्धव गोपियों के बीच इस प्रकार की कथा कहते सुनते हुए छ: महिना व्यतीत हो गये अब उद्धव ने सभी से प्रस्थान करने की आज्ञा मांगी। भगवान के चरणों मे शीश झुकाया जिससे वापसी यात्रा मंगलमय हो।

नन्द मिले जसोधा मिले, मिले सब गोपी ग्वाल।

बंदन कर कर बाहुरे, बाले उद्धव बाल ।।१०४।।

पुन: नन्द जी से मिले जसोदा जी से मिले और सभी गोपी ग्वालों से मिले विदाई का मिलन था उद्धव से वन्दन करते हुए ग्वाल बाल मिलते रहे।

नन्द कहयौ जसोदा कहयौ, गोपिन कहयौ बहोरी।

बैरज ध्यानी रम रहे, वृज को नातो तोरि।।१०५।।

नन्द जी ने कहा, जसोदा जी ने कहा, गोपी ग्वाल बालों ने फिर से कहा, वह कन्हैया तो वैराग्यवान ध्यानि बनकर रमण कर रहा हैं हमारे तथा ब्रजभूमि से स्नेह तोड़ दिया है।

अब हम सो करि है कृपा, ये निज सेवक जान।

हरि हम सो जिन बिसरै, पुरबली पहिचानि।१०६।।

अब हमारे पर कृपा करेंगे क्या? हमें अपना सेवक मानेगे क्या? कंहीं हरि हम को भूला तो नहीं देगे? कहीं पिछली पहचान खो तो नहीं देगे।

अब उद्धव आए दूहा, श्री कृष्ण चंद के धाम।

पांय लाग बंदन कीयो, लै लै बोले नांम।।१०७।।

अब उद्धव जी वापिस कृष्ण चन्द्र के पास मथुरा लौट आये। कृष्ण के चरणों में प्रणाम वन्दना की तथा ब्रजवासियों की तरफ से भी उनका नाम ले लेकर चरण वन्दना की।

ग्वाल बाल अरू गोपिका, वृज के जीव अनंत।

तुम चरनन लागन कहयौ, सुनहु देव ब्रह्मन।।१०८।।

ग्वाल बाल गोपियों और भी ब्रज के अनंत जीवो ने आपके चरणों में नमन कहा है– हे देव! हे ब्रह्म आप उनका संदेशा सुनिये।

नन्द जसोदा हेत की, कितीयक कहु बहाय।

वै जानत के तुम भले, मो सौक कहयौ न जाय।।१०९।।

नन्द यशोदा के प्रेम की कितनी अनगिनत बाते मैं कहता हूँ। वे जानते हैं कि

तुम भले हो अच्छे कार्य के लिये हो, किन्तु उनकी शोक व्यथा मेरे से कही नहीं जाती।

और गोपिन के प्रेम की, महिमा कछु अनंत।
मै बूझी खट् मास लो, तोउ न पायो अंत।।११०।।

और भी गोपियो के प्रेम की महिमा अनन्त है वहाँ छ: महिने तक पूछता रहा। उन गोपियों ने आपकी महिमा से मुझे अवगत करवाया, किन्तु पार नहीं पा सका।

बै चितते टारत नही, स्याम राम इजारि।
मधुनीक मुरली गही, मूरत मधुर किसोर।।१११।।

वे ब्रजवासी अपने चित से आप कृष्ण को भूला नहीं सकते। राम-श्याम की मूर्ति उनके दिल में बस गयी है मधुर बजने वाली मुरली या मधुवन में मुरली बजाते हुए आपकी मधुर किशोर मूर्ति को प्रणाम करते है।

येह भक्ति सुख छाडिकै, करत रूप को ध्यान।
उनको भजन विचारियै, तो सब फीको ज्ञान।।११२।।

यह निर्गुण भक्ति के सुख को छोड़कर आपके सगुण स्वरूप का ध्यान वे लोग करते है उनके द्वारा किये हुए भजन पर विचार कीजिये तो सभी प्रकार का ज्ञान फीका हो जायेगा।

संत भगत भू तल विषै, वे सब वृज की नारि।
चरण सरण रहियै सदा, मिथ्या जोग बिचारि।।११३।।

जितने भी इस भूतल पर संत भक्त हुए हैं वे ही सभी ब्रज की नारी के रूप में है उनके चरणों की शरण सदा ही रहिये। यह योग साधना का विचार मिथ्या है।

उनका गुन कृत गाइये, करि करि उतम प्रीति।
मैं नाहिन देखी कहूँ, वृज वासिन की रीति।।११४।।

उनके ही गुणों का गान नित्यप्रति कीजिये। उत्तम प्रीतिकर के गुणों का गायन करें। मैं कोई काँनों से सुनी सुनाई बात नहीं कहता हूँ सभी कुछ ब्रजवासियों की रीति रिवाज आँखों से देखी है वही कहता हूँ।

तब हरि उद्धव सो कहे, हू जानत सब अंग।
मै नाहिन छाडयौ कब, वृज वासिन को संग।।११५।।

इतनी वार्ता श्रवण करके हरि ने उद्धव से इस प्रकार से कहा-मैं सभी कुछ

जानता हूँ मैंने ब्रजवासियो का संग कभी नहीं छोड़ा है।

वृज तजै अंत न जायहु, मेरे तो इह टेक।
भूतल भार उतारि हु, धरिहु रूप अनेक।।११६।।

हे उद्धव! मैं ब्रज को छोड़कर दूर नहीं जाऊँगा। मेरी यही प्रतिज्ञा है। मैं भूतल का भार उतारूंगा। अनेकानेक रूप धारण करूंगा।

श्री कृष्ण भगत सो जानिये। जांके अंतर प्रेम।
राखै अपने इष्ट को, गोपिन को सो नेम।।११७।।

श्री कृष्ण भक्त तो उसे ही जानना चाहिये, जिनके अन्तर प्रेमभाव उमड़ रहा हो अपने एक इष्ट देवता से ही प्रेम भाव लगाव रखे। जिस प्रकार से गोपियों का नियम है उद्धव के हजार बार समझाने पर भी गोपियां अपने इष्ट देव से विमुख नहीं हुई।

या लीला वृजवास की, गोपी कृष्ण है नेह।
जन मोहन जो गाय है, तो पावत नर देह।।११८।।

यह ब्रजवास की लीला है इसमें गोपी कृष्ण का स्नेह है जो मोहन की मोहिनी लीला को गायेगा वह अवश्य नर देह को प्राप्त करेगा।

जो गावै सीखै सुनै, भाव भगती करि हेत।
रसक राय पूरन कृपा, मन वांछित फल देत।।११९।।

जो इस लीला को गाता है, सीखता है, और सुनाता है उसे भाव भक्ति प्रेम भाव से रसिकराय श्री कृष्ण की पूर्ण कृपा की प्राप्ति होती है और मन वांछित फल प्रदाता है। यह रसिक राय की अद्‌भुत लीला है।

उद्धव या गोपियन की कथा, भूतल परम पुनीत।
तीन लोक चवदा भवन, बंदनीक सो गीत।।१२०।।

उद्धव जी कहते हैं कि यह गोपियों की कथा इस भूतल पर परम् पवित्र है तीन लोक चवदा भवन में यह गीत वन्दनीय है।

ग्रभ चेतावणी

परथम निवण करू गुरु आद, दुतीयै वंदन श्रब साध।
ग्रभ चेतावणी सुण लोय, आवा गवण जिस विध होय।।१।।

प्रथम आदिगुरु जम्मेश्वरजी को द्वितीय सभी साधु संतो को नमन। कवि ऊदोजी कहते हैं कि हे लोगो। ग्रभ चेतावणी श्रवण करो जिससे आवागमन जिस प्रकार से होता है वह मिटेगा कैसे यह ज्ञात होगा।

कहा है संत प्रीतन साख, सा विध कहे तउ सब भाख।
परथम ग्रभ मै दुख होय, मन देसी भलो सब कोय।।२।।

संतो ने इस बात को प्रेमपूर्वक कहा है वे संत साक्षी है जैसा संतो ने कहा है वही विधि विधान से मैं कहता हूँ प्रथम ग्रभ मे दु:ख होता है कांन लगाकर श्रवण करो और संभलो-सचेत हो जाओ यह सभी के लिये कहा जा रहा है।

मात पिता की मिल धात, जांसु उपजै सब गात।
माता ग्रभ मै दसमास, जठरा अग्र की बहुत्रास।।३।।

माता-पिता की सप्त धातु मिलने पर उससे शरीर की उत्पत्ति होती है माता के गर्भ में दस महिना रहता है वहां जठराग्नि की बहुत त्रास मिलती है।

कुंभी नरक सौ है कुंड, तामै धरह्यौ उंधो मुंड।
आवै बहुत दोरौ स्वांस, नहीं ताहां फीरण कौ औकास।।४।।

कुंभी नाम के नरक जैसा ग्रभ स्थान कुंड है। उससे उल्टे मुंह लटका रहता है। वहां बहुत कठिनता से जीवनी शक्ति प्राप्त करता है। वहां भ्रमण हालने डोलने का अवकाश नहीं है।

परबस परयो है ताहां बंध, है मलमूत महा दुरगंध।

खाटो चरवरो मां पाय, तातै दुख दुणै थाय।।५।।

ग्रभ अवस्था में पराधीन होकर पड़ा रहना होगा। वहां बन्धन दु:खदायी है। वहां मलमूत्र की महा दुर्गन्ध है। खट्टा चरचरा तीखा जो भी माँ खाती है वह ग्रभस्थ बच्चे को भी रस रूप मे मिलता है उससे ग्रभस्थ बहुत ही दु:ख पाता है।

आठौ पौहोर जक नहीं कोय, दिन दिन दुख इधको होय।
दुखियो करत है पुकार, महादुख मेटे सिरजण हार।।६।।

आठौ प्रहर चौबिसो घंटे वहाँ पर किसी प्रकार की शांति नहीं है ज्यो-ज्यो गर्भस्थ शीशु बड़ा होता जाता है, त्यों-त्यों दु:ख भी बढता चला जाता है दु:खी जन पुकार करता है। हे सृजन हार! आप मेरे दु:ख को मिटाइये।

आवें जलम आगले याद, त्यूं त्यूं कर हरि सुं फरियाद।
संकट मेट हो सिरजण हार, कर सूं बंदगी महाराज।।७।।

पिछला जन्म जब याद आता है वैसे ही हरि से छूटने की फरियाद करता है। हे सृजनहार! मेरे संकट मिटा दीजिये। गर्भ से बाहर आते ही आपकी वन्दना करूंगा।

दस बंद खरच सुं तो नांय, राखु चित चरणां मांह।
कर सुं संत की सेव, निसदिन भजन करसुं देव।।८।।

अपनी कमाई का दसवां भाग खर्च नहीं करूंगा किन्तु परमार्थ के लिये खर्च करूंगा। हे देव! आपके ही के चरणों में मन लगाऊंगा। संतो की सेवा करूंगा, आपका भजन ध्यान दिन रात करूंगा।

मन वचन करम हरि तो सरण, ग्रभ दुख मेट संकट हरण।
करूणा सुणी है किरतार, मोच्यौ ग्रभ सिरजण हार।।९।।

मन वचन कर्म से, हे हरि ! आपकी ही शरण हूँ आप हमारे ग्रभ के दु:ख को मेटकर मेरे संकट का हरण करें। करूणामय पुकार को कर्ता स्वामी भगवान् ने सुनी सृजनहार ने गर्भ से छुटकारा दिलवाया।

''दुहा''

बिछु ऐक हजार की, जनमत पिंड प्राण।

ग्रभवास दुख भुगत कै, जनम्यौ जुग मे आंण।।१०।।

बच्चे का जन्म होता है तब एक हजार बिच्छु एक साथ डंक मारने से जो दुख होता है उतना दु:ख जन्म के समय होता है दस मास गर्भवास का दु:ख भुगत करके जगत् में जन्म लेता है।

''छंद''

लियो जनम नर संसार, लागो जगत को ब्यार।
जे नर कीया हरि सुं कोल, भूलो ग्रभ का सब बोल।।११।।

संसार मे बच्चे ने जन्म लिया तभी जगत् की वायु का प्रभाव हुआ जैसा वहां गर्भवास में कवल किया था, वह वही पर ही भूल गया वही का वहीं रह गया।

लागो मोह माया चाव, मात पिता कै ओछाव।
बाजै थाल वरघु ढोल, संहीया रही मंगल बोल।।१२।।

जन्म होते ही मोहमाया में चाव लगाव हो गया। माता-पिता उत्सव मनाने लगे, थाली बजने लगी, ढोल ढमाका भी बजने लगे। सखियां मंगल गीत गाने लगी।

देवै दान होड़ा होड, बंटै बधाई करै कोड।
भूवा भतीजै पै आय, टोपी झुगलियां पैहराय।।१३।।

देखा देखी एक से बढ़कर दूसरी दान दे रही है। बधाइयां बंटने लगी शिशु से प्यार करने लगी। भुवा भतीजे के घर आकर टोपी झुगलियां-कुर्ता पहनाने लगी।

भाई भावजा कै कोड, दीनी तील तिहाड़ी तोड।
बैनड़ रमावै है वीर, ऊबो पीर अव चला सीर।।१४।।

भाई-भोजाई के मन मे उत्साह दान मे तैलंग रंग की युवा तेज चलने वाली ऊंटनी दी बहन भाई को गोदी में कुच्छड़ लेकर खेलाती है । इस प्रकार के आगन्तुक शीशु से सभी का सीर, संस्कार हो जाता है।

कंठी कड़ोला कराय, कानां मुरकीयां पहरायं
कड़ीया कंदोरो बिच लाल, छेड़ै मादलिया की बाल।।१५।।

बच्चे के शृंगार के लिये बड़े ही लाड प्यार से कंठ में कंठीमाला, पैरों में कड़ोला पहनाया जाता है। कांनों मे मुरकी- कुण्डल, पैरों हाथों में कड़िया, कमर मे कंदोरो कंदोड़ जिस के बीच मे लाल जड़ी हुई किनारे मादलिया की

बाले शोभायमान हो रही है ऐसे शृंगार से विभुषित किया जाता है।

थड़िया करे सीख चाल, माता लेहे अंगली झाल।
वमक धरे अंगन पाव, माता पिता के उरचाव।।१६।।

घर के आंगन मे थड़ियो पर अपने प्यारे को माता चलना सिखाती है।जब प्रथम बार माता चलना सिखाती है तब उस बच्चे की उंगुली पकड़ कर सहारा देती है। धीरे धीरे आंगन में पांव रखता है जब चलना सिखता है तो माता पिता के हृदय में आनन्द की लहरें उठने लगती है।

माँ कूं देख सांहा मे जोय, रूखो बदन करके रोय।
माता लहै उर सुं लाय, पावै खीर जो मन भाय।।१७।।

माता को देखकर सामने आकर माता को ध्यान से देखता है मुख को रुंआसा रोने जैसी सकल बनाकर के रोता है तब माता अपने प्यारे को गोदी में लेकर दिल से लगा लेती है, दूध पिलाती है जितना पीना चाहता है।

बालो पालणै हींडै, पोढे ढोलडी पीढै।।
कबहु गोद मे खेलै, माता हाथ मै झेलै।।१८।।

बालक पालने से हींडता है हवादार छान झूपडे में पीढे पर सोता है। कभी माता की गोद में खेलता है कभी माता अपने हाथों में पकड़ती है।

रोहे हंसै करहै चैन, बोले तोतला सा बैन।
खैले आंगनै मै धाय, धारै झमक चमकै पाय।।१९।।

कभी रोता है, कभी हंसता है, कभी विश्राम करता है अब कुछ बड़ा हो गया है, तोतली बोली बोलता है, आंगन में दौड़ता है, खेलता है। कभी नृत्य करता है, पांवो को धमक के साथ रखता है। कुछ अपने को अलग से दिखाता है।

चिंटीयो हाथ मै लीयो, खेलै साथियां मिलियो।
बालक पणै में अचेत, इऊ नर भूलगो हरि हेत।।२०।।

हाथ मे चीटियो खूंडा लकड़ी का डंडा हाथ में लेकर साथियों के साथ खेलने के लिये जाने लगा। इस प्रकार से बाल्य अवस्था में अचेत ही रहा। यह नर हरि को भूल गया। अपने स्वार्थ के कार्य करने मे संलग्न हो गया।

''दुहा''

रोवत हंसता खेल मै, बाल पणो गयो हार।

उद्धव रह्यौ अचेत हुय, हरि सुं कोल बिसार।।२१।।

कभी रोने में, कभी हँसने में, कभी खेल में बाल अवस्था को खो दिया उद्धव जी कहते हैं कि अचेत बेहोश होकर रहा। हरि से किया हुआ कवल प्रतिज्ञा को भुला दिया।

''छन्द''

अवस्था कंवार जो आई, सुध जब देह की पाई।
नीदीनो साम कुं बिसार, चात्र जगत कै व्यौहार।।२२।।

कुमार अवस्था आ गयी तब देह की सुध बुध आ गयी। तब श्याम हरि को भुला दिया जगत् के कार्य व्यवहार में तो चतुर हो गया, किन्तु हरि के भजन में पिछड़ गया।

चल्यो चोट गलीयां, साथी सांइना मिलिया।
हंसणें बोलणें चाव, जंगैली गीत सेती भाव।।२३।।

छुपकर गलियों में बाहर जाने लगा। वहां पर संगी साथी हम उम्र के लड़के मिल गये दूसरे की हंसी मखौल करने का चाव और जंगली अश्लील गीत गाने का भाव उमड़ने लगा।

खांगी पागड़ी झौकाय, छौगौ दीयौ है लटकाय।
बागो तन सुं चहोड़, चालत अंग कुं मोड़ि।।२४।।

टेढी पगड़ी सिर पर झुकाय कर, अंगौछा कंधे पर लटकाकर, बागो कुर्ता शरीर पर पहनकर अंग को मोड़ मरोड़ कर चलने लगा है, यानि अपने शरीर का अंहकार करके चला।

कंठी हीयै पर सोहे, अंगली मुंदड़ी मोहै।
उजल धौतियां बांधै, रांगभर दोपटा कांधै।।२५।।

गले में सोने की कंठी शोभा बढ़ाती है। अंगुली में अंगुठी मोहित करती है उज्ज्वल सफेद धोती पहनकर, रंग बिरंगा दुपट्टा कंधे पर रखकर मस्त चाल में चलता है।

गल डबख्यौ गजु दीया, बंदूक हाथै मै लीया।
ढाला ढलकती कांधै, कड़ीया कटारो बांधै।।२६।।

गले मे डबख्यौ गहनो अलंकार पहन लिया, हाथ में बंदूक लेली कंधे पर तलवार की ढाल कमर में कटारों बांध लिया।

फीडा पायचा घालै, छाया निरखतो चालै।
हांसी मसकरी की बांण, छाड़ी सकल कुल की कांण।।२७।।

पैरों की पगरखी को फीडा–मोड़कर पहनता है। अपनी ही छाया को देखता हुआ चलता है कि मैं कैसा दिखता हूँ ? दूसरे की हंसी उड़ाना मसकरी करने की आदत पड़ गयी है अपने कुल की मर्यादा सभी छोड दी है।

ज्युं ज्युं जवानी जोरै, त्युं त्युं मन साम सु चौरै।
उरमे काम जब जाग्यौ, नारी निरखणै लाग्यौ।।२८।।

ज्यों ज्यों जवानी आने लगी त्यूं त्यूं हरि से मन को मोड़ने लगा। उर में कामवासना जाग्रत हो गयी तब नारियों को देखने लगा।

कामी कपट सुं खेलै, बुढ़ा बड़ा कुं पैले।
मात पिता नहीं जानै, दीन्ही सीख नहीं मांनै।।२९।।

कामवासना से युक्त होकर कपट करने लगा। बूढ़ा बड़ा को कुछ नहीं समझता। माता पिता को कुछ नहीं जानता उनकी दी हुई शिक्षा को नहीं मानता।

भाई बंध सब खारा, साला सुसरा प्यारा।
कुल को धरम सब छाड्यो, माया मद मे बाढ्यौ।।३०।।

भाई बन्धु सभी खारे कड़वे लगते हैं किन्तु साला ससुर प्यारे लगते हैं कुल परंपरा का धर्म छोड़ दिया। मायामद में बढ गया।

आंख्यां हृदै की फूटी, दिल की दया सब उठी।
काटै बनी बहु प्रीती, हित्या जीव की करती।।३१।।

दिल–हृदय की आंखें फूट गयी, दिल में दया सब उठ गयी चली गयी। बहुत ही प्रीति से वन को काटता है जीवों की हत्या करता है।

तंबाकु भांग बहु पीवै, कुमली कुल मै सुजीवै।
अभखल मुख सु भाखै, वैर हरि संत सुं राखै।।३२।।

तंबाकु भांग बहुत प्रकार से पीता है, कुमली अशुद्ध करने की कुल में ठानी है। मुख से अभखल आल बाल झूठ व्यर्थ मुख से कहता है हरि और संत से वैर भाव रखने लगा।

निद्या साध की ठांनै, हरि को भेख नहीं मानै।
पाणी छांण नहीं पीवै, अनंतो स्वांन ज्युं जीवै।।३३।।

साधु सज्जन पुरुषो की निद्या करने की ठानली। हरि के भेश को नहीं मानता। जल छांण कर नहीं पीता। कुत्ते की तरह जीवन जीता है।

हर के हेत नहीं कर है, ओदर पसु ज्यूं भर है।
दिल मै सामे सेती दूज, निसदिन रहयौ आंन ही पूज।।३४।।

हरि के अर्पण करते हुए कार्य नहीं करता। पशु की तरह पेट भराई करता है। दिल मे कुछ और व्यवहार में कुछ और करने की राह पकड़ी है। निसदिन आन देवताओं की पूजा मे ही रहता है कल्पित देवी देवताओं को ही अपना इष्ट मानता है।

गुर को वचन नहीं मांनै, फिर फिर करम करै छानै।
छिन सतसंग नहीं आवै, स्वारथ रैण दिन धावै।।३५।।

गुरु के वचन मानता नहीं है। घूम घूम करके छिपकर पाप कर्म करता है। एक क्षण भी सतसंग मे नहीं जाता। अपने ही स्वार्थ के लिये दिन-रात दौड़ता है।

साधु कहें जो समझाय, मुरख रूसै मन मै जाय।
सुण रे मूढ मति के हीन, वाचा साम सेती कीन।।३६।।

यदि कोई साधु बात समझाता है तो मुर्ख उससे ही रूठ जाता है। हे मूढ! मति के हीन सुन, आपने ग्रभवास में श्याम से वचन किये थे अपने वचनों पर ध्यान दो।

सो तूं भूल गो गिंवार, कीनो किनक कांमणी प्यार।
जोवन जोर मातो अंध, जंवरो मारसी मत बंध।।३७।।

हे गिवार ! उन वचनों को तो तूं भूल गया। स्वर्ण तथा कामिनी से तुमने प्यार किया। युवा अवस्था में केवल ताकत पर अंधा हो गया है। तुम्हे यम के दूत बूरी तरह से मारेगे।

चुकै काहां नर अवसान, सींवरे कांयनी भगवान।
जोवन जोर है दिन च्यार, तामै भूल मत गींवार।।३८।।

हे नर! यह अवसर क्यों चूक रहा है? क्यो नहीं श्री भगवान का स्मरण करता! यह यौवन का जोर तो चार दिनों का ही है। इसलिये मूर्ख भूल न कर।

साधु सीख बहु देवै, मुरखा ऐक नहीं लेवै।
अपणी बांण नहीं मेलै, दिन दिन कुबद सुं खेलै।।३९।।

साधु सज्जन बहुत अच्छी शिक्षा देते हैं किन्तु मूर्ख एक भी सीख नहीं लेता है अपनी बांण स्वभाव आदत नहीं छोड़ता। दिनोदिन नई कुबध कुमार्ग में चलता है।

विषै की लहर मै भूल्यो, कडुंबो देखे कै फूल्यौ।
नेकी बदी नहीं देखे, स्वारथ आपणो पैखै।।४०।।

विषयवासना की लहर में भूल गया। अपने कुटुम्ब परिवार को देखकर प्रफुल्लित हो गया। नेकी, इमानदारी, बदी, सत्यवचन इन दोनों को नहीं देखता उन पर चलता नहीं है अपना ही स्वार्थ देख रहा है।

त्रीसना लोभ मै लागौ, दोड़ै सकल सुं आगो।
बेटा बहुवा नै कहै, स्वारथ सार देखै।।४१।।

तृष्णा और लोभ में लग गया। इनकी पूर्ति करने के लिये सभी से आगे दौड़ता है बेटा और बहुओं से कहता है कि जहां अपना स्वार्थ सिद्ध हो वही कार्य करो।

कुबदी कुबद नहीं छाडै, कूड़ा झगड़ा मंडै।
पख अरू पात बहु भारी, संपत कहत सब म्हारी।।४२।।

तिकड़मी कुबधी अपना कुमार्ग नहीं छोड़ता। झूठे झगडे.करता है। पक्षपात बहुत प्रकार से करता है कहता है कि यह धन संपत्ति सभी कुछ हमारी ही है।

माया मद मे मातो, गीणै नहीं गरब को नातो।
अहु बहो जात को आनै, समदा और कु जाणे।।४३।।

मायामद ने मस्त हो गया। गर्व अहंकार के कारण दूसरे को कुछ समझता ही नहीं परिवार का सम्बन्ध नहीं मानता। विवाह शादी का संबन्ध कही भी जोड़ लेता है अपनी जाति के सम्बन्धियों को छोड़कर बाहर से किसी से भी सम्बन्ध जोड़कर सगा बन जाता है।

गरब कहां रे गीवार, तु जल बुद बुदा के वार।
ग्रभ गंजन भगवान, मारे बड़ा बड़ा के मान।।४४।।

रे मूर्ख गंवार! तूं अहंकार किस बात का कर रहा है यह तेरा भौतिक शरीर तो जल का बुद बुदा है। बड़े–बड़ों का गर्व भगवान् ने मिटा दिया है। बड़ो

बड़ो के मान–अहंकार को मार दिया है।

हिरणाक्य जु होतो दैत, सुरनर सकल कीनी रैत।
प्रिथी लेगयो पाताल, सो हरि मार कीनो काल।।४५।।

हिरण्याक्ष महादैत्य होता था, जिसने सुरनर सभी को पराजित कर दिया था पृथ्वी को पाताल ले गया था। उसी को हरि ने मारकर काल कवलित कर दिया था।

रावण कुंभ सान इंद, सुर तेतीस कीना बंद।
लेतो श्रब यासे डंड, प्रभु तोड़या दसुं रूंड।।४६।।

रावण कुम्भकरण दैत्य इन्द्र के समान बलवान हुए जिन्होंने तेंतीस कोटि देवताओं को बंदी बना लिया। वह सभी देवताओं से कर लेता था। उसी रावण के दस सिर को प्रभु ने तोड़ दिया।

करता गरब बहु मै बंड, जाकी खबर नांहि मुंड।
कंस केसी अर चंडूर, वै हरि मार कीयै चूर।।४७।।

कितने दैत्यों ने गर्व किया कुछ गिनती नहीं है वे सभी शक्ति सम्पन्न थे। उनके सिरों को भी काट डाला उनकी खबर नहीं वे कहां गये? कंस केसी और चण्डूर उनको भी हरि ने मार कर चूर चूर कर दिया।

रे नर तुं केतीयेक बात, जैसो लांप की जड़जात।
छिन मे काल मारै तोय, मुरख जायागो तब रोय।।४८।।

रे मानव! तेरी कितनी सी ताकत है लांप घास विशेष की जड़ की तरह है एक क्षण में काल तुझे मार देगा। मुरख फिर रोयेगा पछतायेगा।

हरि कु क्युं न राखै याद, मनखा जनम खोवै बाद।
जोवन जोबता संग हार, युं नर भूलगो किरतार।।४९।।

हरि को याद क्यो नहीं रखता? वाद विवाद में मानव जीवन क्यों नष्ट करता है। यौवन अवस्था युवती के साथ में बिता दिया। इस प्रकार से हे नर तूं कर्ता को भूल गया।

''दुहा''

काम क्रोध मद मान्यौ, कोल भूल गयो अंध।
उद्धव जोवन यूं गयो, भज्यो नहीं गोविंद।।५०।।

काम, क्रोध के मद में मस्त रहा। हरि से किये हुए कवल भूल गया।

उद्धव कहते हैं कि हे अन्ध युवा अवस्था ऐसे ही व्यतीत हो गयी गोविन्द का भजन नहीं किया।

''छन्द''

इस विध बुढापा आय, सुत वित बंध्यो मन माय।
चिंता करण अब लागौ, घर कौ काम सब भागौ।।५१।।

इस प्रकार से बुढापा आ गया। पुत्र धन में मन बंध गया। अब बुढापे में चिंता करने लगा। घर का सम्पूर्ण कार्य छूट गया। अपना अधिकार जोर जबरदस्ती चली गयी।

कहौ अब कांहा कीजै, देही सोच सूं छीजै।
घर को काम सब बीगड़ै, बेटा बहुवा सुं झगडै।।५२।।

अब कहिये कहां कहां पर क्या क्या करे? देह चिंता से जलने लगी। घर का सारा कार्य बिगड़ गया है इसलिये बेटा बहुओं से झगड़ा करने लगा।

तन को जोर सब थाकौ, मानहु क मन ही ताकौ।
मन से रीस बहु आवै, कर कर क्रोध दुख पावै।।५३।।

शरीर की ताकत खत्म हो गयी है अब केवल मन ही बुढा नहीं हुआ है इसलिये मन से ही संकल्प विकल्प करता है देखता है मन में बहुत क्रोध आता है, क्रोध कर-कर के दु:ख पाता है शरीर से कुछ कर नहीं सकता।

सूझै धूंधलौ नैना, बहरो होयगो कांना।
कहै कछु और की और निसदिन जीभ नहीं मोर।।५४।।

आँखों से धूंधला दिखने लग गया। कांनों से बहरा हो गया है कहना कुछ चाहता है जीभ से कुछ और ही निकल जाता हैं जीभ्या दिन-रात कुछ न कुछ बोलती रहती है चुप नहीं रहती।

लुकटी हाथ मे लेरै, पगला वाय नहीं चैहैरे।
डहेली पाहड़ सी लागै, चाल्यौ जाय नहीं आगै।।५५।।
हाथ लकुटी कड़ी हथि, नैणा उपर हथ।
वील्ह बुढापो अवियो, गयो ज धीगड़ सथ।।

हाथ मे लकुटी ले ली है, चरण चलने से इनकार कर रहे है घर की दहेली पहाड़ जैसी ऊँची लगती है उसे पार करके आगे चला नहीं जाता।

मांची पोल मे घाती, जक नाही दिन राति।

खांसी चलै अरू खुलकै, दम चड़ै जाय जब हलके।।५६।।

चारपाई, पौल–दरवाजे में डाल दी है दिन–रात आराम नहीं मिलता। खांसी चलती है तो खुलकै खांसता है, दम–श्वांस कठिनाई से आता है जब भी खांसी आती है तो सारा शरीर हिल जाता है।

मुख सुं थूकतो रहै, नैना नांका जल बहै।
बिगाड़ी ठोड सब भिष्टी, अजहु मरै नहीं दुष्टी।।५७।।

मुख से थूकता रहता है नयन, नाक से जल बहता रहता है घर परिवार के लोग कहने लगते हैं सारी जगह को थूक थूक कर बिगाड़ दी है अब तक भ्रष्ट यह बूढा दुष्ट मरता क्यों नही?

टूको स्वांन ज्युं देवै, दुख सुख खबर नहीं लैवे।
पड़ीयो आल नित झांखे, गाली देत नहीं संकै।।५८।।

कुते की तरह रोटी अनादर के साथ देते हैं उस वृद्ध के दु:ख सुख की खबर भी नहीं लेते। पड़ा हुआ आल–बाल कुछ भी बोलता रहता है गाली देते भी शंका नहीं करता। अपने ही लोगो को गाली देता है।

परबस दुख बहु पावै, नैड़ो कोय नहीं आवै।
पिछताय सीस कर धुनै, जुग मै मेरो अब कौनै।।५९।।

पराधीन पड़ा हुआ बहुत दु:ख पाता है उस वृद्ध के नजदीक कोई नहीं आता अपने किये पर पछताता है, सिर पटकता है और कहता है कि जग में अब मेरा कोई नहीं हैं।

देख आंसुवा ढारै, आहय दई क्यूं न मोह मारै।
धृग एहि जीवणौ, जीकौ यातै मरण है नीकौ।।६०।।

दूसरों को देखता है आँसू बहाता है। अहो देव अब मेरे को मारते क्यो नहीं ? मेरा जीवन जीना धृग धिक्कार है इससे तो मरण ही श्रेष्ठ है ।

घेरयो रोग बहु आई, उर मै कफ पित वाई।
जुं जुं सास दोरो लेत, कह हाय हरि नहीं कैहत।।६१।।

अनेकों रोगो ने आकर घेर लिया। हृदय में वात, पित, कफ आ गया ज्यो–ज्यो श्वांस आने मे कठिनाई होती त्यूं–त्यूं, हाय–हाय कहे किन्तु हरि हरि नहीं कहता।

गल मै डार दी जम पास, अजहु करै घर की आस।
देवै मार मुगदर त्रास, तोहु नीकलै नहीं स्वांस।।६२।।

यमदूतों ने गल में फांसी डाल दी है अब भी घर की आसा करता है दूत मुगदर की मार देते हुए कष्ट देते हैं फिर भी श्वासं निकलती नहीं है।

सिर मै दूत दैवे मार, रे मूढ तुरंत हैज्या तैयार।
चहुं दिस कुंटम कु नाल, नैणा नीर बहु ढाल।।६३।।

सिर मे यमदूत मार देते है रे मूंढ! तूं तुरंत चलने की तैयारी कर। चारों तरफ कुटुम्ब बैठा हुआ है। आंखो से आसुओं की धारा बहती है।

''दुहा''

उद्धव ओसर बिचगौ, चेत्यो नहीं गिवार।
सुक्रत कीयौ न हरि भज्यौ, गयौ जमवारौ हार।।६४।।

उद्धव जी कहते है यह मानव जीवन का एक अवसर था वह बीत गया। गंवार मूढ सचेत नहीं हुआ न तो सुकर्म किया और नहीं हरि का भजन ही किया जमवारा–जीवन हार गया।

आण घेरयो जम जीव कूं, कूंण छुडावण हार।
मंकू आगै कर जम ले चल्या, देवै गुरजां की मार।।६५।।

यमदूतों ने जीव को आकर घेर लिया। छुड़ाने वाला कोई नही। जीव को आगे कर यमदूत लेकर चल पड़े। गुरजा की मार देकर।

''छन्द''

घर का धाह दे चाल्या, तन कुं अग्नै मै जाल्या।
कै ले घोर मै दीन्हा, लोकाचार सब कीन्हा।।६६।।

घर के लोग दहाड़ मार कर ले चले, शरीर को अग्निमे जला डाला। या लेकर घोर खड्डे मे गाड़ दिया। और सभी लोकाचार कर दिया।

जम जीव पकड़ कै वेगा, राज धरम पै लेगा।
करतब धरम सब बूझै, जीव कूं पाछली सूझै।।६७।।

यमदूत जीव को जल्दी से पकड़ कर ले गये अपने राज यमराज के पास ले गये उस सूक्ष्म जीव से सभी कर्म धर्म के बारे मे पूछा गया जीव को तब पिछला जन्म याद आता है।

जीवड़ो बहु पिछतावै, बुझया जाब नहीं आवै।

पापी पाप बहु कीया, लेखा जाय नहीं दीया।।६८।।

जीव बहुत पछताता है यहां यमपुरी मे यमराज के सामने पूछी हुई बात का जवाब नहीं आता पापी ने पाप बहुत प्रकार से किया। उन पापों का लेखा जोखा नहीं दिया।

प्रभु कबहु नहीं तोख्या, द्वारे साध नहीं पोख्या।
आया अदब नहीं कीन्हौ, भूंखा अंन नहीं दीनो।।६९।।

प्रभु की प्रार्थना भजन कभी भी नहीं किया। द्वार पर आये हुए अतिथि सुभाग्यत को भोजन नहीं दिया। घर आये आदरियो घर पर आये हुए अभ्यागत् का आदर सत्कार नहीं किया। भूखे को भोजन नहीं दिया।

प्यासा नीर नहीं पायो, दिल दया धरम नहीं आयो।
तन मै फीरयै संठो, ए वो साधु संग नहीं बैठो।।७०।।

प्यासे को जल नहीं पिलाया। दिल मे दया धर्म नहीं आयी। शरीर में अपने आप को पहलवान मान कर फिरता रहा। इस प्राणी ने कभी साधु संगति की नही।

हर गुण कबहु नहीं गायो, चरणा चित नहीं लायो।
हरि को नाम नहीं लीयो, सुक्रत कछु न कीयो।।७१।।

हरि गुण कभी नहीं गाया। हरि चरणों में चित कभी नहीं लगाया। हरि नाम कभी नहीं लिया। सुकर्म कभी नहीं किया जन्म व्यर्थ गया।

होकम जमां कु दीयो, अफूठो बांध के लीयो।
मुदगर गुरज सुं कूटै, धारा रूद्र की फूटै।।७२।।

यमदूतों को हुक्म दिया गया। उसका पालन करते हुए जीव को अपूठों बांधकर चलाया। मुगदर गुरज से पिटाई करते हुए ले चले रुधिर की धार फूटकर बह चली।

ताता थंभ गल दीनो, ऊंधै सीस ले कीनो।
जिभ्या श्रप जो काटै, भयानक दूत बहो दाटै।।७३।।

गर्म खंभों से बांधा गया उल्टे सिर नरक में लटकाया। जीभ्या में सर्प काटे उतना भयानक कष्ट होता है वहां पर बहुत से दूत उसे भागने नहीं देते।

पीड़ा जहर की भारी। काया थंभ सुं जारी।

जीवड़ो बोहोत दुख पावै, मारया मोत नहीं आवै।।७४।।

जहर की तरह भारी पीड़ा जीव के लिये असहनीय हो जाती है सूक्ष्म काया को थंभ से बांधी जायेगी। वहां जीव बहुत दु:ख पायेगा। मारने पर भी मरता नहीं है।

है कोई थंभ तै छाड़ै, प्राणी कुं कदे डाडे।
करड़ा दूत बहो जोवै, रे दुष्टी अब क्यूं रोवै।।७५।।

अगर कोई जो थंम से छुड़ा दे तो प्राणी रोता चिल्लाता है कठोर यमदूत बहुत प्रकार से देखते है और कहते है रे दुष्टी! अब क्यो रोता है ?

पापी स्वाद बहु मांणा, सिरपर साम नहीं जाण्या।
करम हुं करू है जोपै, लेखा लेहगा मोपै।।७६।।

रे पापी। तुमने जग का स्वाद बहुत लिया। तुम्हारे सिर पर श्याम है। यह नहीं जाना। जो भी मैं कर्म करता हूँ मेरे से लेखा जोखा लिया जायेगा। यह कभी नहीं सोचा।

आमख मद बहु चाख्या, मुख सै कुड़ नित भाख्या।
रसना राम नहीं गायो, तन हरि तिरथ नहीं नहायौ।।७७।।

मांस-मद बहुत खाया पीया। मुख से झूठ नित्य ही बोला रसना जीभ्या से हरि नाम नहीं गाया। शरीर से तीर्थ में स्नान नहीं किया।

खुध्या प्यास सुछीजै, पांणी अंन मोह दीजै।
हरकै हेत नहीं दीयौ, इह तो पाई ये कीयौ।।७८।।

भूख अन्न से निवृत होती है प्यास जल से बुझती है। यही तुमने किसी को दिया नहीं अब लाचार हो गया, तुम्हे कौन देगा ? हरि के अर्पण करके दिया नहीं तो यहां पर वही मिलेगा जो तुमने दिया है।

रंभारू पाप होय आवे, कामी देख मन लावै।
ताती अग्न सुं भारी, मीलीया देह दें जारी।।७९।।

रंभा अप्सरा की तरह कामणी पाप बनकर आती है। कामी पुरुष देखकर आकर्षित हो जाता है। वह तप्ती हुई अग्नि जैसी होती है। देह मिलने से जला देती है। ठंडी राख बना देती है।

जल बल जी दुख पावै, सरजीत फेर होय आवै।
त्रीया पार की तकतो, भागो जाय कूं संकतो।।८०।।

कामापूर्ति के पश्चात् आग से जल बल जलकर जी दु:ख पाता है कुछ समय पश्चात् पुन: सरजीत कामातुर होकर पास आ जाता है पराई तिरिया को कुदृष्टि से देखता है वही भागा हुआ जाता है निडर निशंक होकर।

चंहु दिस घेर ज मलियो, दोजक कुंड म दीयौ।
है दुरगंध बहु दोरो, आवै स्वांस नहीं सोरो।।८१।।

दौरे नरक मे जायेगा। जहाँ पर चारों और मल–मूत्र की दुर्गन्धी से धिरा हुआ होगा दोजक नरक के कुण्ड में डाल दिया जायेगा चारों और दुर्गन्ध होगी। वहां एक क्षण भी जीवन मुश्किल होगा। वहां सुखपूर्वक श्वांस भी नहीं आयेगा।

कीड़ा तलै सूं चूंटै, उपर गुरज सूं कूटै।
तुचा चहुं ओर सूं तोड़ै, करूवा आंखियां फोड़ै।।८२।।

कीड़ा नीचे से काटेंगे। ऊपर गुरज गदा से मारेगे चारो तरफ से चमड़ी काटेंगे। उपर गुरज से कूटेगे। कौवे आँखें फोड़ेंगे।

निजर बहुपाप की निरख्या, हरजन नहीं देख हरिख्या।
तड़ फड़ उछलै पाड़ै, मुगदर मार सुं ताड़ै।।८३।।

आगे यम के दूतों ने अपनी नजरों से देखा की बहुत पापी है। हरि का भक्त नहीं है ऐसा मान कर मन ही मन हर्षित हुए। उछल उछल कर तड़ातड़ भारी मुगदरों से पापी को ताड़ना देते हैं।

त्राह त्राह कर रोवै, ज्यूं जंम करूर होव जोवै।
नुगरा नांव नहीं लीयो, भुगत्यौ, आपाणै कीयौ।।८४।।

जीव वहां त्राही – त्राही मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो इस प्रकार से कहता हुआ रोता है जैसे जैसे जीव रोता है, तड़फता है, त्यूं त्यूं यमदूत करूर हो जाते हैं इस नुगरे ने हरि का स्मरण नहीं किया। यह अपना किया हुआ कर्म ही भुगत रहा है।

जम कुं दया नहीं आवै, किया कर्म भुगतावै।
आगे ईस कुंड है भारी भुगती सासना सारी ।।८५।।

यम को दया नहीं आती जीव के किये हुए कर्म भुगतान करवाते है। आगे इस प्रकार से नरक कुण्ड है। सम्पूर्ण जगत के जीव अपने अपने कर्मो के

अनुसार भुगतते है।

''दुहा''

नरक कुण्ड माहा कठन है, उद्धव कहयो न जाय।
वेद सुम्रती पुराण मै, संत कहै समझाय।।८६।।

नरकों के कुण्ड महान कठिन है उद्धव जी कहते हैं कि सभी का वर्णन यहां करना कठिन है वेद स्मृति पुराण मे संत विद्वान साथ आकर बतलाते हैं।

ऐसी बनै बेतरणी नदी, कंटक पंथ अंधार।
नाना दुख अपार है, कहै कवि संत पुकार।।८७।।

ऐसी भंयकर वैतरणी नदी जिसमे कंटक मार्ग और अंधेरा है उसे पार करना होगा, जो अनेकों दु:खों से भरी हुई है ऐसा संत कवि पुकार के कहते हैं।

नासकेत कही रिखन सुं, कुंड अचार स देख।
विना भजन नहीं छुट ही, भुगते नरक अनेक।।८८।।

नचिकेता ने ऋषियों से कहा है कि आश्चर्यजनक नरक कुण्ड अनेकों है हरि के भजन के बिना छुटकारा नहीं मिलेगा। अनेक नरक भुगतने होंगे।

प्रीक्षत को सुखमन कहयौ, उमा प्रति महेस।
पापी कुं भुगतावसी, तामै झूठ नहीं लवलेस।।८९।।

राजा परीक्षित को शुकदेव मुनि ने कहा है, उमा को महेश ने यही बात कही है कि पापी को अनेक नरक भुगतना ही होगा। इस में किंचित भी बात झूठी नहीं है।

उद्धव जांको करम थो, तसो दीयो भुगताय।
बोहरी हरि की भक्ति बिन, गयो चौरासी मांह।।९०।।

उद्धव जी कहते हैं जैसा जिसका पाप पुण्य या मिश्रित कर्म है जैसा ही भुगता दिया जात है हरि की भक्ति को भूल गया। उसके बिना चौरासी लाख जीव योनियों में भटकेगा।

'' छन्द''

जल को जीव हरि कीनो, मर मर जनम बहु लीनो।
दादर कवछवा हुवा, नाका मकर हुय मूवा।।९१।।

जीव कर्मों के अनुसार जल जीव बन गया। बार-बार जन्म और मरण

होता रहा। कभी दादुर मेढ़क, कछवा हो गया, कभी मगरमच्छ आदि जल के जीव हुए और मरते रहे।

मछ गला गल लैवै, अप समाह दुख देवै।
झीवर जाल मै डारै, कांटो निगलै तांमै।।९२।।

मछली जल का जीव हो जायेगी तो जल में समाहित होकेर अनेक जलीय जीव एवं मनुष्य भी बहुत दु:ख देगा। झींवर जल में जाल डाल देगा पकड़ लेगा तथा धागे में कांटा बांधकर डाल देगा वह उसमें फंसकर प्राण दे देगी।

एह गत भई अबखल की, नव लखज जातब जल की।
पंछी जात मै आयौ, भजन विना बहोत दुख पायो।।९३।।

यही गति अबखल झूठ कपटी की होती है नौ लाख जल के जीव की यही गति होती है पक्षी जाति में जन्म लेकर आ गया तो बिना भजन बहुत ही दु:ख पायेगा।

''दुहा''

नव लख जल के जंत की, भुगती संकट अपार।
उद्धव पंछी जात कहुं, ताका सुणो विचार।।९४।।

नौ लाख योनियां जल के जीव की भुक्त ली। अनेकों संकटों को सहन किया उद्धव जी कहते हैं कि अब आगे पक्षी जाति की योनियो पर विचार करता हूँ।

''चौपई''

बागल हुय रही उंधा दाष्टा, उस मुख खावै उसी मुख विष्टा।
हरि गुण मुख सुं कबहु न गाया, तांतै मुख तै विष्टा आया।।९५।।

बागल चमगादड़ योनि में जन्म लेकर उल्टा लटका उसी मुख से खाता है और उसी से विष्ठा भी करता है।

चमचेड़ ओलूं कोचर काहावै, भजन बिना बहुता दुख पावै।
ताकु दिन को सूझै नांही, घूस्या रहै अंधारै मांही।।९६।।

चमचेड़, ऊल्लू, कोचरी आदि कही जाती है बिना भजन के बहुत ही दुख पाती है इनको दिन में दिखता नहीं है। अंधेरे में ही घुस कर रहती है। दिन को रात समझती है। रवि ऊगा जब अल्लू अंधा।

नैणै निजर पाप की कनी, तांतै जोत हीण कर दीनी।
नलीया गद फड़कवा कीना, भीष्टी जीव विष्टा मुख दीना।।९७।

आँखों की नजर से पाप किया, कुदृष्टि से देखा जिस का फल दृष्टि हीन होना मिला। नलीया न्यौला, गीध, फड़कवा पाप के फल से हुआ। भीष्टी मिष्ठा खाने वाले जीव मिष्ठा खाकर जीवन यापन करते हैं।

अभख भख्यौ हर कुं नहीं गायौ, तातै मुख सुं विष्टा खायो।
आड ढीग बुगला सीचाण, पापी जु वण वो होत भुगताण।।९८।।

अखाद्य पदार्थ खाया, हरि को नहीं भजा। इसलिये मुख से विष्ठा खाया। आड, ढीग, बुगला, सीचाण, बाज, आदि शरीरों को धारण किया पापी जीवन का भुगतान किया।

मैना कीर पीजरै दीना, हर नहीं भज्यौ कैद कीना।
चीड़ी कंबेड़ी तीतर लउवां, बुतक परेवा पुटीया हुवा।।९९।।

तोता, मैना को पिंजरै में बंद कर दिया। हरि का भजन नहीं किया इसलिये इन्हे कैद में बंद कर दिया। चीड़िया, कमेड़ी, तीतर, लउवां, बतख, परेवा, कबुतर, पुटिया आदि अनेक शरीरों को धारण किया।

मोर पंखेरू और अनेरा, जनम जनम दुख सहया घणेरा।
दस लाख पंछी भुगतायो, पीछे करम कीट हुय जायो।।१००।।

मयूर पंखेरू पंख से उडने वाले और भी बहुत से पक्षी जीवन जीते हुए बहुत कष्टो का सामना करते हैं। इस प्रकार से दस लाख पक्षियों की योनि में जन्म लेकर आयेगा।

''दुहा''

उद्धव पंछी जात का, काहालु वरण,
दुख ऐक हरि की भक्ति विन, कहु न पावें सुख।।१०१।।

उद्धव कहते हैं कि मैं पक्षी जाति का कहां तक वर्णन करूं। हरि की भक्ति बिना निश्चित ही दु:ख ही मिलेगा। कही पर भी सुख नहीं मिलेगा।

''चौपई''

श्रप गोहीड़ो लोन्यौल बनायो, जहरी जून बहुत दुख पायो।
देख्यौ श्रप गोड़ियै पकड़यौ, मंत्र चालाय खील कै जकड़यौ।।१०२।।

सर्प, गोहिड़ा, नेवलिया आदि विषैली जीव योनि को बनाया। जहरीला जानवर बनकर बहुत दु:ख पाया। सांप को देखा वही गोड़ियो ने पकड़

लिया मंत्र चलाय कील में जकड़कर बांध दिया।

पाड़ा दांत पिटारे कीनो, हर भज्या विन युं दुख दीनो।
सांडा गोह जून बहो धारै, मूसो हुवा बिलाई मारै।।१०३।।

सर्प को विष के दांत उखाड़ दिये बिन दांतो के उसे बलहीन कर दिया। हरि के भजन किये बिना यही दुर्गति होगी। सांडा–गोह अनेकों जीव योनियों के धारण करता है चूहां को झट बिल्ली पकड़कर खा जाती है

चिंटी हुय कर संग्रे कीनो, पेट गांठ मुख जाय न चीनो।
संग्र आप और जु खावै, हरि अरपण बिन बहु दुख पावै।।१०४।।

चिंटी होकर अनाज का संग्रह करती है चिंटी के पेट में गांठ लगी हुई है वह तो खा नहीं सकती थोड़ा सा भी संग्रह चिंटी करे खाते कोई और ही जीव है। हरि के अर्पण किये बिना जो कीड़ी की तरह संग्रह करता है वह भी इसी प्रकार से दु:ख पाता है।

क्रीम कीट भिष्टा मे जाया, जनम मरण दोजग मे आया।
मछर कीट पंतगा होई, उपज उपज मर जावे सोई।।१०५।।

कृमी, कीट, भिष्टा–गंदगी में ही जन्म लेता है उनका तो जन्म मरण दोनों ही नरक में बीतता है। मच्छर, कीट, पतंगा होकर बार बार जन्म और मरण हो जायेगा।

अनंत जनम चोमासो हुवा, पल मे जाया पल मे मुवा।।१०६।।

चौमासा वर्षा के चार महिनो में अनन्त कीट पंतग जन्म लेते हैं और मर भी जाते हैं। एक ही पल की उनकी जिदंगी है।

''दुहा''

लाख ईग्यार क्रम कीट, भुक्ती संकट अपार।
कह उधो हरि भक्ति विन, भ्रम्यौ बोहली वार।१०७।।

ग्यारह लाख कृमि कीट होकर अपार संकट को भोगा। उद्धव कहते हैं कि हरि की भक्ति बिना बार–बार भ्रमित हुआ हैं संसार में भ्रमण किया है।

''चौपई''

कीट भुक्ती थावर हुय आयो, ऊंधै सिर ले व्रख उगायो।
लाठी पथर सेती मारै, फूलै फल तोड़ सब डारै।।१०८।।

कीट– पतंग योनी भुक्त करके थावर पेड़ बनकर आ गया। पेड़ों का

सिर जड़ नीचे और डालिया पते पैर ऊपर को होकर उग आये हैं अज्ञानी लोग फल फूल लेने के लिये लाठी और पत्थरों से मारते है। कच्चे फूल फल पाते आदि सभी तोड़ देते हैं।

काटै डारै कुहाड़ै सेती, ताकी पीड़ कहौ अब केती।
झंढ भयो नहीं कछु बोले, सीत उष्ण पवन सूं डोलै।।१०९।।

दरखत योनी प्राप्त जीव को कुल्हाड़े से काट देते हैं। उस समय कटने से पीड़ा कहो कितनी होती है झंड़-झाड़ी बन गया तो कुछ भी नहीं बोल सकेगा शीत, उष्ण को सहन करेगा तथा तेज हवा आंधी मे डोलेगा।

इन्द्री च्यार पाप से हारी, कबहु नाह जप्यो बनवारी।
ऐक इंद्री तासुं जल पीवै, दुख सुख भुगत बहो दिन जीवै।।११०।।

पूर्व जन्म के पाप से चार इन्द्रियां नहीं प्राप्त कर सका। एक ही इन्द्रिय जड़ों से पानी पीता है। बहुत दिनों तक सुख-द:ुख भोगता हुआ जीवन जीता है। अब कभी भी बनवारी वन के स्वामी को नहीं भज सकेगा।

कबहु काट जड़ा सुं ढाया, हरि मंदर मै पाट न आया।
धान घास बेलड़ी होई, तां कुं काट लहत है कोई।।१११।।

उस वृक्ष को कभी कोई मानव आता है और जड़ से काटकर नीचे धरती पर गिरा देता है, किन्तु फिर भी दुर्गति को ही प्राप्त होगा। हरि के मन्दिर का दरवाजा नहीं बन पाता है। धान, घास, बेलड़ी बन जाता है। उसे तो सभी कोई काट लेते हैं।

वृछ घास बन मै अवतरिया, दवै सुं जलै फेर हुवै हरिया।
थावर जून बहोत दुख पाया, काढ्या कुढ़या फेर उगाया।।११२।।

वृक्ष और घास बनकर वन में उग आया। शीत लहर से जल जाता है फिर बसंत ऋतु आती है तो पुन: हरा भरा हो जाता है ''ऋतु बसंती आयी और भलेरा सागू। थावर योनी में बहुत ही दु:ख पाया है काटना और फिर उगाना यही थावर योनी की दुर्गति है।

''बीस लाख थावर सब भुक्ति, हरि सिमरया विन नांही मुक्ति''

बीस लाख थावर योनी मे रहा हरि के स्मरण किये विना मुक्ति प्राप्त नहीं होगी।

''दुहा''

सीत उष्ण अगनी दहै काट्या खीसो न जाय।
जड़ता तरवर तणी, उद्धव बहु खपाय।।११३।।

पेड़ प्रकृति की असहय मार को झेलता है। कभी शीत कभी उष्ण कभी जल की प्यास कभी कोई काट लेता है तो उसका कष्ट ये सभी असहनीय कष्टों को सहन करता है एक ही स्थान पर वर्षों खड़े रहना यह जड़ता है उद्धव कहते है कि बहुत ही कष्टदायक दरखत योनी है।

''चौपई''

थावर भुक्त पसु गत पाई, पर आधीन सदा दुख पाई।
कजली वन मे कुंजर जाय, छल बल कर के पकड़ मंगाय।।११४।।

थावर गति भुक्तकर पुश योनि में जीव आता है। पशु पराधीन सदा दु:खदाई जीवन जीता है। कजली वन में हाथी बन जायेगा उसे छल बल से पकड़ कर ले आते हैं।

पावां मै जंजीर जड़ावै, दे आंकुस बहुत्रास मनावै।
धुन सीस बहुत पिछतावै, नारायन बिन कूंन छुड़ावै।।११५।।

पांवों मे जंजीर जड़ दी जाती है उसे लोहे की जंजीर-संकल से बांध दिया जाता है अकुंस-लोहे की आरी से मार करते है उसे कष्ट देकर अपने वशीभूत कर लेते है फिर वह गजराज सिर पटक कर के रोता है पछतावा करता है नारायण के बिना कौन छुड़ायेगा?

घोड़ा कर नृधन घर आया, दाणौ घास कदे नहीं धाया।
भूख मरे झुरेकै अरू झाकै, सुक्रत बिना घास नहीं नांखै।।११६।।

घोड़ा होकर निर्धन के घर पर आया। उसे वहां दाना घास पेट भर नहीं मिलेगा? भूख मरेगा, झुरेगा और झांकेगा। बिना सुकृत के भरपेट घास भी नहीं मिलेगा दाना तो दूर की बात है

ऊंठ भया बहु बोज उठाया, परदेसा कुं लाद पठाया।
चांदी पड़ै कीड़ा बहो खावै, कउवा टांचे ज्युं दुख पावै।।११७।।

ऊँट का जन्म होगा तो बहुत बड़ा बोझ उठायेगा। परदेशों से अन्न लाद कर चला देंगे। पीठ पर चांदी-घाव हो जायेगा। कीड़े पड़ जायेगें। खाते रहेंगे। कऊवां चोंच मारेगे और मांस नोच लेगे। बहुत दु:ख उठायेगा।

हरि सिवरया विन एह गत भाई, परवस पड़ो सदा दुख पाई।

ओडा कै घर पोहण हुवा, बोज ढोयो चांदी पड़ मुवा।।११८।।

हे भाई! हरि का स्मरण नहीं किया तो यही गति होगी। पर वश पड़ा सदा ही दु:ख पायेगा। ओडा ओड जाति विशेष के घर पर पोहण गधा होगा बोझ उठायेगा। जिससे शरीर पर चांदी–घाव हो जोगा। और मर जायेगा।

दे काना मै बाहर निकारै, भूख मरै चारो नहीं डारै।
भजन विना लादिया होई, ताकी सार न बूझै कोई।।११९।।

पोहणियां से दिन भर भार लादेंगे और शाम को कांनों पर चोट मारकर बाहर भगा देगे। चरने के लिये चारा नहीं डालेगे भजन नहीं करेगा तो लादिया भार लदने वाला पशु हो जायेगा। उसकी सार संभाल कोई नहीं करेगा। भूखा प्यासा ही रहेगा।

बलद कीया जद आंख बंधाई, घांणी जोतरू दियो चलाई।
फेरा फिरै बहोत दुख पावै, सूझे बिन भटभेड़ा आवै।।१२०।।

जब बैल की योनि में जन्म मिल गया तब तैली तेल निकालने वाले के घर आ गया तब उसे आँख बांधकर गोल गोल घुमाते हैं नहीं कहीं आना न कही जाना वही चक्कर लगायेगा। घाणी को अपने कंधे से घुमायेगा। तिल से तेल निकालेगा। औरों को तेल खल खिलायेगा किन्तु स्वयं वैसे ही भूखा रह जायेगा। उस भूखे को भटभेड़ा आयेगा।

फेर ढीचीयौ बैल जु कीयौ, जोडे हल बहु दुख दीयौ।
ऐक दिन बांके ऐक दिन बांकै, लालच लगे दया नहीं तांकै।।१२।।

फिर भार लदने वाला बैल बनकर आयेगा उसे हल जोतेगे बहुत कष्ट देगे। किराया भाड़ा कमाने के चक्कर में एक दिन उनके एक दिन दूसरे के मालिक लालची हल चलायेंगे, भार उठायेगा उसे दया नहीं आयेगी। बैल योनि में बहुत दु:ख पायेगा।

विणजारा की गुंण उठावै, बोझ मरे बहोत दुख पावै।
कदेक भूखो कदेक प्यासो, हरि सिवरया विन बहुत रोस्यो।।१२२।।

व्यापारियों का समान उठाकर देश प्रदेश में जाता है। बोझ भार से दब जाता है बहुत दु:ख पाता है। कभी भूखा कभी प्यासा चलता ही रहता है एक देश से दूसरे देश में हरि का स्मरण नहीं किया बहुत दु:खी होता है। जबरदस्ती भार लद के चलाया जाता है उसके दु:ख का पार नहीं है।

भैसो होय बादी घर आयौ, बोझ लद्यो नहीं पेट धपायौ।
पर आधीन सदा दुख पावै, नारायन विन कूण छुड़ावै।।१२३।।

भैसा–झोटा होकर वादी भार उठाने का कार्य करने वाले के घर पर आ गया। भैंसे पर बोझ लद देते है किन्तु भरपेट चारा नहीं खिलाते पराधीन सदा ही दु:ख पाता है जहां मालिक ले जाता है वही चलना पड़ता है। ऐसी दु:खद योनि से नारायण बिना कौन छुड़ायेगा।

स्वांन हुवो भटक्यो घर सारै, भूखो मरै टुको नहीं डारै।
कर उजाड़ पैठ घर मांही, पहुंचै लोक मार दै तांही।।१२४।।

कुत्ता होकर रोटी के लिये सारे घरो में भटकता है। भूख सताती है। कोई रोटी का टुकड़ा तक नहीं डालते हैं। घर में उजाड़ देखता है तो प्रवेश कर जाता है लोग आ जाते है और कुते को घर में देखकर मार के भगा देते है।

कीड़ा बुग चिंचडा खावै, भजन बिना ऐसा दुख पावै।
गल सूं बांध कलंदर लाया। बंदर होय बहोत दुख पाया।।१२५।।

कुत्तें को भूख सताती है साथ ही कीड़ा, बुग, चिंचड़ भी कुत्तें की चमड़ी मांस को खाते हैं। भजन बिना इस प्रकार से दु:ख पाता है बन्दर जीवन को प्राप्त करके बहुत दु:ख पाता है। बन्दर नचाने वाले कलंदर बांधकर ले आते हैं और घर–घर नचाते हुए घूमते हैं।

मार लुकटीया त्रास दिखावै, घर घर आगे बहोत नचावै।
हरि चरणां नहीं सीस नवायो, मरकट जाहां ताहां पांय पड़ायौ।।१२६।।

बन्दर को कलंदर लकड़ी से मारता है उसे दु:ख देता है घर–घर में जाता है नाच नचाता है, हरि के चरणों में सिर नहीं झुकाया इसी का परिणाम फल यह है कि अब प्रत्येक के सामने जाकर चरणों में गिरता है।

जंबुक होय कूकतो फिरै, जाड़ो लगै ठंड बोहो मरे।
सूसा लुंकड़ मृग बघेरा, पसू जून भुगत्या बोहो तेरा।।१२७।।

जंबुक–सियार होकर रोता हुआ भटकता है ठण्ड लगती है बहुत दु:ख पाता है खरगोस, लोमड़ी, मृग बघेरा आदि पशु योनि में अनेकों कष्टो को भोगते हैं।

पशु दुख की कहतन आवै, नारायन बिन कूंन छुड़ावै।।१२८।।

पशु योनि के बारे में कहां तक कहे अन्त पार नहीं है बिना नारायण के पशु योनि से कौन छुड़ायेगे?

''दुहा''

तीस लाख पसु प्रांण की, दीनी सब भुगताय।
च्यार लाख मिनखा देह, उद्धव दुर्लभ पाय।।१२९।।

तीस लाख पशु जन्म की सभी भुगतान के बाद चार लाख मिनखा देह को प्राप्त करता है। उद्धव कहते हैं कि यह मानव देह दुर्लभ है।

जलचर थलचर व्यौमचर, भुगत्या जनम अपार।
जन ऊधो हरि भक्ति बिन, भरम्यौ बोहोली बार।।१३०।।

जलचर, थलचर, आकाश में विचरण करने वाले आदि अनेक जन्मों को भोगा है। उद्धव कहते हैं कि हरि की भक्ति बिना बहुत बार भ्रमित हुआ है।

नव लख जल दस लख पंछी, ऐक दस लख कीट।
थावर बीस तीस लक्ष्य, पसु च्यार लख नर दीठ।।१३१।।

नौ लाख जल में रहने वाले, दस लाख पंछी उड़ने वाले, एक दस लाख कीट पतंगे स्थावर पेड़ पौधे बीस लाख और तीस लाख पशु चार लाख नर पे चौरासी लाख योनियां है।

च्यार खान मै उपजै, चौरासी लख जात।
जड़ चेतन त्रिजंकुत सब, सुरनर असुर अहिगात।।१३२।।

इन च्यार खान–योनि में चौरासी लाख जीया जूणी जन्म लेती है और मरती है। जड़ चेतन तिर्यक सभी सुरनर असुर सर्प आदि के शरीर इन्ही जड़ चेतन में उपजते हैं।

सुरनर नाग इंद्राददै, विध समान जो होय।
ऊधो हरि की भक्ति बिन, नहचल रहे न कोय।।१३३।।

सुरनर नाग, इन्द्रादि विधि समान भी जो होगा। उद्धव कहते है कि हरि की भक्ति बिना तो कोई भी निश्चल स्थिर नहीं रह सकेगा।

वरस अनंत जुग अनंत, अनंत जून भुगताय।
युं चौरासी भ्रमतां, निठ मनखा देह पाय।।१३४।।

अनंत वर्ष, अनंत युग, अनंत योनि भुक्त करके इस प्रकार से चौरासी लाख योनि में भ्रमण करते हुए मुशकिल–कठिनाई से मानव तन की प्राप्ति होता है।

''चौपई''

यूं दुर्लभ मिनख देह आवै, तांमै संगत नहीं पावै।
नीच जात विपता मै जावै, ऊंचो होय अहंकार पावै।।१३५।।

इस प्रकार से दुर्लभ मानव देह को प्राप्त करता है। इस मानव देह में भी सत्संग को प्राप्त नहीं करता है। मानव जीवन में भी उच्च नीच जाति मे जन्म लेकर आता है। विपति मे पड़ जाता है। उच्च जाति में जन्म लेगा तो अहंकारी हो जायेगा।

साध संगत तांह नहीं भेदा, भेद लहै बिन मिटै न खेदा।
सतसंग बिन लहै नहीं भक्ति, भक्ति बिना न ही पावै मुगति।।१३६।।

मानव जीवन प्राप्त करके भी साधु संगति का भेद नहीं लेता। बिना संत संगति के खेद दु:ख नहीं मिटता। बिना सतसंगति के भक्ति की प्राप्ति नहीं होती बिना हरि की भक्ति मुक्ति को प्राप्त नहीं होता।

मुगत बिना चौरासी जावै, यूं भवै सागर को अंत न आवै।
जाहां जाहां जाय तां जम लूटै, हरि सरण बिना नांही छूटै।।१३७।।

मुक्ति हुवै बिना तो चौरासी लाख जीव योनियों में जायेगा। इस प्रकार से तो भवसागर संसार समुद्र में डूब जायेगा। पार नहीं उतर सकेगा। जहाँ–जहाँ भी जिस जिस योनि में जन्म होगा वही वही काल यमदूत लूटेगी। हरि के शरण बिना यह सिलसिला जन्म मरण नहीं छुटेगा।

उद्धव हरि कै सरण आवै, तामै साधु संगत पावै।।१३८।।

उद्धव कहते हैं कि हरि के शरण में आयेगा तो साधु संगति की प्राप्ति होगी।

ज्यूं ज्यूं उपजै प्रेमा भक्ती, कीट क्रम होय जब मुक्ति।
हरि चरणा चित नहचल होई, आवागवण न आवै कोई।।१३९।।

ज्यों–ज्यों प्रेमा भक्ति उपजेगी त्यूं त्यूं कीट क्रम से मुक्ति मिल जायेगी हरि के चरणों में चित्त स्थिर हो जायेगा। तब आवागवण जन्म मरण से मुक्ति मिल जायेगी।

नृभै होय हरि को गुण गावै, भवसागर मे कदे न आवै।
हरि कै सरण काल नहीं लूटै।१४०।।

निर्भय होकर हरि के गुणों का गान करें। वह भवसागर में कभी नहीं आयेगा। हरि के शरण में हो जायेगा तो उसे काल नहीं लूटेगा। काल का असर नहीं पड़ेगा।

''दुहा''

उद्धव सिवरौ साम कुं, छाड़ सकल जंजाल।
चौरासी सहजै मिटै, जनम मरण भव काल।।१४१।।

उद्धव जी कहते हैं कि श्याम हरि विष्णु का स्मरण भजन करो और सभी सांसारिक जंजाल छोड़ दीजिये। ऐसा करने से चौरासी लाख जीवयोनि से सहज ही में बच जाओंगे। आवागवण मिट जायेगा।

जनम मरण बहु कष्ट है, माहा दुख नरक मंझार।
उद्धव डरकै रै चेतीयै, भजियै सिरजन हार।।१४२।।

बार-बार जन्म लेना बार-बार मरना यह बहुत भारी कष्ट है महा दु:ख नरक से बचने के लिये उद्धव जी कहते हैं कि इस डर से सचेत हो जाओ और सिरजन हार भगवान् का भजन करो

चौरासी बहु दुखै है, भव सागर नहीं पार।
औ ओसर मिनखा देह, मिलै न वारोवार।।१४३।।

चौरासी लाख जीव योनियों में बहुत दु:ख है इनमे जाने के बाद भवसागर से पार उतर नहीं सकता। यह संसार सागर से पार उतरने का अवसर तो मनुष्य देह मे ही मिला है। बार-बार नहीं मिलेगा।

हर कृपा सुं मिनख तन, गुरु कृपा सुं भक्ति।
उद्धव बोहुरन पायबो, ऐसी उतम जुक्ति।।१४४।।

हरि कृपा से यह मानव तन मिला है। गुरु की कृपा से भक्ति भाव जाग्रत हुई है उद्धव कहते है कि बार बार यह मुनष्य शरीर नहीं मिलेगा, ऐसी उत्तम युक्ति पार उतरने की केवल मानव जीवन में ही संभव है।

हरि सेवा गुरु बंदगी, कर हंति ज सुं भाव।
उद्धव बहोर न पायबौ, ऐसो उतम दाव।।१४५।।

हरि की सेवा, गुरु की वंदना, हेत - प्रेम भाव से भक्ति भाव करे। उद्धव कहते हैं कि बार-बार ऐसा उत्तम दाव अवसर नहीं मिलेगा।

'' इति श्री गरभ चेतावणी संपूरण''

सम्वत् 1884 का मिति सावण वदि 9 नवमी बार मंगलवार। लिखतु पं. उत्तम चंद सैती। हंसार नगर मध्ये ममदोस न दीयते **''पोथी लिख जो जीयौ''** भीया बणी-वाल पठनार्थ।।

कुंडलियां कका सैंतीसी

कका केवल किसन भजो, हृदै धर विसवास।
आन भरोसो छाड़ दे, राख राम की आस।
राख राम की आस, ज्युं पत भरता पत सेवै।
तन मन अरपै प्रांण, पीव बिन चित देवै।
युं नहचै भज हरि उधवा, टल जाय जम का धका।
मनसा सुं प्रीतकर, केसव जप रे कका।

हृदय में विश्वास करके क से केवल कृष्ण को भजो, अन्य देवी देवताओं का भरोसा छोड़ दो। राम कृष्ण की ही आस रखो वही पूर्ण करेंगे। जिस प्रकार से पतिव्रता केवल एक अपने पति की ही सेवा करती है तन, मन, प्राण अर्पण करती है, पति बिना चित अन्यत्र नहीं लगाती है उद्धव जी कहते है इस प्रकार से निश्चय करके हरि की शरण ग्रहण करे। जिससे यम के जाल –कर्म के जाल से निकल जायेगा। मनसा से प्रीत करके केशव कृष्ण को जप रे कका मानव।

खखा खरची खात है। जम जाल मिसर तैरै।
मुंजारी ज्युं तक रहयौ, मुंसा इत उत हेर रै।
मुंसा इत उत हेर रै, जीव दर सुंदर ही बणायै।
काल झपेटै आंण, युंही आरंभ रह जावै।
जमतणां दल भारी, ऊधो हरि बिन कोउ न रखा।
सायब सिवरण कीजियै, खरै भरोसा खखा।।२।।

ख से पूर्व जन्म के किये हुए कर्म फल को खाता है भुगतता है। यमराज

ने जाल तुम्हारे मिसर निमित फैला रखा है। बिल्ली जिस प्रकार चूहे को पकड़ने के लिये सचेत रहती है। चूहे को इधर उधर देखती है कि कहां मिलेगा? उसी प्रकार काल भी तुम्हे देख रहा है कहां गलती करोगे कहां पकड़े जाओगे? यह जीवन अति सुन्दर है इतने सुन्दरतम् जीवन को काल मृत्यु आकर झपट मारकर ले जायेगी। यह चूहे–बिल्ली का खेल मात्र है। आरंभ किये हुए सभी कार्य अधूरे ही रह जायेंगे। मृत्यु के दूतो का भारी भरकम दल है ऊधो कहते हैं कि हरि के बिना तुम्हारी रक्षा कौन करेगा? साहब परमेश्वर का स्मरण करे उसी का खरा भरोसा करे खखा।।

गगा गोविन्द गाइयै, कर कर उत्तम प्रीत।
कीरत गाय किरतार की, ज्यूं जनम जायगो जीत।
जन्म जायगो जीत प्राणी, सांसो साम संभारो।
अवसर आयो तोह, मत गाफल हुय हारो।
उद्धव दास विचारो मन मे, हरि विन कोय न संगा।
संकट मांही उपाय सदाई, गिरधर गाय रै गगा।।३।।

गगा–गा से हे मानव! गोविन्द के गुण गाइये। उत्तम प्रेमभाव से गाइये करतार की कीर्ति गाइये। तभी यह जीवन जीत जायेगा। श्वांसो–श्वांस श्याम को याद रखो। यह मानव अवसर तुम्हे मिला है। गाफिल–भूल में पड़कर इस जीवन को बरबाद मत करो। उद्धव दास जी कहते हैं कि मन मे विचार करो। हरि के बिना कोई भी संगी साथी नहीं है। संकट की घड़ियो से उबरने का एक मात्र उपाय हरि का स्मरण कीजिये।

घघा घट घट रम रहयौ, ज्यूं पथर मे आग।
बिन सतगुरु नहीं पाइये, खोज रहै सब माघ।
खोज रहै सब माघ पिराणी, गुरुबिन लहै न आसै।
चकमक कड़े अग्न प्रजले, युं गुरु ज्ञान प्रकासै।
उद्धव या संसार मे, सतगुरु समान संगा।
गुरु सेवा हरि पाइये, घर मे प्रगट घघा।।४।।

घघा–घट घट में रम रहा है। जिस प्रकार से पत्थर में आग। पत्थर के

घट घट में व्यापक हो रही है, किन्तु उस घट में व्यापक की प्राप्ति बिना सतगुरु के संभव नहीं है। बिना सतगुरु के सभी वहां पहुँचने का पथ मन मुखी होकर खोज रहे है। गुरु के बिना प्राप्ति की आशा धूमिल हो जाती है। चकमक- पत्थर से दूसरा सामान्य पत्थर टकराने से आग जल जाती है। उसी प्रकार से गुरु की संगति से गुरुज्ञान प्रकाशित होगा। उद्धव जी कहते हैं कि इस संसार में सतगुरु के समान और कोई उत्तम संग नहीं है। गुरुसेवा से ही हरि की प्राप्ति होगी। घट में ही घघा-गंगा प्रकट हो जायेगी।

ड़ड़ा रड़बड तो फिरै, जीव चौरासी मांह।
भवसागर मै भरमता, कहुं काल थिर नांह।
कहु काल थिर नाह पिराणी, जीव बहुत दुख पावै।
जाहां तांहां मारै काल, कृष्ण बिन कूंन छुड़ावै।
उद्धव सिवरो विस्नु कुं, निसदिन रहो खड़।
कंवलापत को ध्यान धर, क्यूं रूलता रहो ड़डा।।५।।

डडा-रड़बड़ तो - गोता खाता हुआ घूम रहा है। एक दूसरे से झगड़ता हुआ जीव चौरासी लाख योनियों में भटकता फिरेगा। कही किसी जीवन में स्थिरता नहीं है। इस प्रकार भटकता हुआ जीव बहुत ही दु:ख पाता है। जिस जिस योनियों में जन्म लेगा काल वही वही मारेगा। हरि कृष्ण बिना कौन छुड़ायेगा? उद्धव जी कहते हैं कि विष्णु का स्मरण करो, स्थिर दिनरात हरि का स्मरण भजन करो कमला पति विष्णु का ध्यान करो, क्यो बरबाद हो रहे हो?

चचा चिंतवन की, छाड गहो गुर ज्ञान।
तेरा चिंतवन झूठ है, करनहार भगवान।
करण हार भगवान है, भरोस हरि कर हीये।
वरतमान वर तारय, नेम नित करम जुग हीये।
उद्धव उर विसवास धर, हर सुं रहीया सचा।
आपो मेटो हर भजो, चितवन तजरे चचा।।६।।

चचा-चिंता करनी छोड़कर गुरुज्ञान को ग्रहण करो। तुम्हारी चिंता करनी झूठ है क्योंकि करने वाला तो वह किरतार-मालिक है। हरि का भरोसा

हृदय में करके वर्तमान समय में जीओ। नित्य प्रति के नियम कर्म करते हुए संसार में जीवन यापन करो। उद्धव कहते हैं कि हृदय में विश्वास करके हरि से सच्चे बने रहो। आपो अहंकार मिटाकर हरि का भजन करो। व्यर्थ की चिंता करनी छोड़ दो।

छछा छल बल छाड कै, नह कपटी हुय रहीयै।
सेवा सतगुरु संत की, साचै मन सुं गहीयै।
साचै मन सुं सेव निरंतर, सतगुरु किरपा करिसी।
ज्ञान भक्ति वैराग दिढवै, आवा गवण जु टरसी।
उद्धव दास प्रीतकर हरि सुं, गउ धावै ज्युं बछा।
दीन दयाल द्रवेगा तबही, छल बल तजियै छछा।।७।।

छछा छलबल छोड़कर निष्कपटी होकर रहो। सतगुरु संत की सेवा करो। सच्चे मन से सेवाभाव ज्ञान ग्रहण करे। सच्चे मन से निरंतर सेवा करे। तभी सतगुरु कृपा करेंगे। ज्ञान भक्ति वैराग्य हढ करवायेगे। तभी आवागवण–जन्म मृत्यु मिट जायेगी। ऊद्धव दास जी कहते हे कि हरि से प्रेम करो जिस प्रकार से गोधन अपने बच्छे से प्रेम करती है। दीन दयालु कृपालु भगवान् तभी द्रवित होगे।

छल बल तजिये रे छछा।
जजा जग मे जीवणा, बोहो थोड़ा रे भाई।
धूंवै का लहलोर ज्युं, जाता वार न लाई।
जाता वार न लाई, सिर पर राम रजा।
ध्यान धरो धरणी धर को, औ जग जाय जजा।
जाता वार न लागै जीव कूं, नहीं भरोसा तन का।
सांसो सांस सिवरले सायब, छाड़ मनोरथ मन का।
उद्धव आसा एक इसवर की।।८।।

जजा–जगत् में जीवन बहुत ही कम है। धूंवे के थोथे बादल की तरह हवा के झोके से उड़ते देर नहीं लगती। सिर पर जिनके राम की रजा–कृपा है वही बच सकता है। धरणी धर का ध्यान धरो यह जगत् जाने ही वाला जजा है।

इस जीवन का कोई भरोसा नहीं है कब चला जाये। हे साहब! मन के मनोरथ को छोड़कर श्वांस प्रतिश्वांस हरि का स्मरण करले।

उद्धव कहते है कि एक ईश्वर की ही आसा रखो।
झझा झटपट कीजियो, सुकरत दोनो हाथ।
दीया लीया तैरै संग चलेगा, और न चाले साथ।
और न चाले साथ जीव कै, कै सुकरत हरि नाम।
नाम बिना भवसागर भरमै, आगै और न ठांम।
मात पिता सुत नार दुलैनी, भीड़ पड़या सब भाज।
उद्धव लावा राम भजन का, लेह झड़ाका झझा।।९।।

झझा–झटपट–अतिशीघ्रता से सुकर्म दोनों हाथों से कीजिये। तुम्हारे हाथ से दिया हुआ और लिया हुआ ही साथ में चलेगा, अन्य कुछ भी साथ नहीं चलेगा।सुकर्म किया हुआ और हरि का नाम ही साथ चलेगा। हरि नाम के बिना संसार सागर से भ्रमित होकर डूब जायेगा। वहाँ कुछ नहीं कर पायेगा तो आगे और कोई ठिकाना नहीं होगा। माता–पिता, पत्नी पुत्र ये सभी विपत्ति में छोड़कर चले जायेगे। उद्धव कहते है कि राम भजन का लाभ अवश्य ही इस शरीर के रहते ले लेना चाहिये।

ननना नाकारो ना करो। वित सारू दत देह।
हूं डी कैसे दाम है। वैकुण्ठा भर लेह।
बैकुण्ठा भर लेह प्राणी, हरिजन के मुपवाय।
सुपात्र कुं दान दीयो, न निरफल जाय।
तन मन धन दे उधवा, हरि कुं अरपन करना।
माया सब ही महा विस्नु की, ननना मत भर ननना।।१०।।

ननना पास में होते हुए न नहीं कीजिये, होते नाह न कीजै अपनी सामर्थ्य अनुसार देना चाहिये। रुपयों का खजाना साथ में बैकुण्ठ में कैसे ले जायेगा? कितना धन पास मे हो नाप कर पता लगायेगा कि इतना धन हरि का जन ले जा सकता है। सुपात्र को दिया हुआ दान निरफल नहीं जाता उद्धव जी कहते है कि तन मन धन सभी कुछ हरि का ही है और हरि के समर्पण करके सेवा

करना। घर आये आदरियो ''घर आये हुए को ना नहीं कहना। अन्न जल, वचन से सेवा करना।

टटा टंटा जगत का, छाड भजो रूघवीर।
भवसागर की धार सुं, उतरो पैली तीर।
ज्युं उतरो पैली तीर, नाव कै बेड़े पैठो।
सतगुरु खेवण हार, चरण गह संगत बैठो।
एक मन हुय कै हरि भजो, कर जग सूं मन खटा।
ऊधो कंमर बांध भजन की, टंटा तजरे टटा।।११।।

टटा– जगत् एक टंटा आफत ही है इस आफत परेशानी को छोड़कर हरि भजो, इस टंटा रूपी भवसागर के परले पार उतरना है इसलिये हरिनाम की नांव मे बैठो, सतगुरु ही नांव को चलाने वाले खेवणहार है '' सो गुरु खेवट खेवा खेहूँ'' गुरु को चरणों में बैठकर संगति करो। ''उतम संग सु संगू'' एक मन एक दिल होकर हरि का भजन करो। जगत् से मन को हटाकर खटा करके उद्धव कहते हैं कि हरि के भजन की गठड़ी बाध कर कमर कस ले। पार उतरना है जगत् का टंटा छोड़ना है जीवन मुक्त होना है।

ठठा ठग बाजी संसार है, मात पिता सुत नार।
सगा सनेही गोत कडुंबो, आन मिल्या दिन च्यार।
आन मिल्या दिन च्यार, अंग सुं नैन सुनेहा।
सांधे गाय बजाय लडाय हंसावे, मोह फंद मे बांधै।
ठग बूंटी पाय कर बावरा, खारा कुं कह मीठा।
तड़फ तड़फ मर जावै ऊधो, जुग ठग रैव ठठा।।१२।।

ठठा– यह संसार ठग लेता है, ये सभी अपने कुंटुम्ब कबिला माता, पिता सुत नारी मोहित करके ठगने वाले हैं। अन्य भी सगा सम्बन्धी कुटुम्बी, स्नेही, गोत्र आदि चार दिनों के लिये ही मिले हैं फिर से बिछुड़ जायेंगे। शरीर स्नेह आँखों से स्नेह करने वाले हैं यानि आँखों के सामने स्नेह प्यार दिखाते हैं अपने साथ जोड़ने के लिये हर प्रकार से गाना बजाना लाड–लडाना, हंसना–हंसाना आदि करके मोह के फंद में फंसा लेते हैं। ठग बूंटी ठग विद्या के द्वारा

बावला बना करके खारा को मीठा कहता है। उल्टी दिखाता है। इसी मोह माया के चक्कर मे ऊधो कहते है कि यह मानव तड़फ तड़फ कर मर जाता है। यह जगत् ही ठग लकड़ी है। मोहित होना निश्चित ही है।

डडा डरकर चालीये, लेसत बोला उं साथ।
ठग बाजीया जगत मे, अज्ञान अंधेरी रात।
अज्ञान अंधेरी रात मुसाफर, ज्ञान तै भांण दिन बहीयै।
लालच मोह की फांसी, काम क्रोध ठग कहियै।
पांचु इन्द्रि फांस चलावै, या मै मन ठग बडा।
उद्धव दास चेत हरि सिवरो, डरकर चलीयै डंडा।।१३।।

डडा डरकर चलना चाहिये। सत्यवादी को बुलाकर साथ करे इस संसार मे ठगी करने वाले बहुत है। अज्ञानता ही अंधेरी रात है सावधानी से चलना होगा। ज्ञान रूपी दिन में चलना चाहिये मार्ग में अनेक विघ्न बाधाऐं आने वाली है। लालच, लोभ, मोह की फांसी काम क्रोध, ये ठग कहे जाते हैं। ये ही पांचों ज्ञानेन्द्रियों को फसा करके चलाते हैं इनमें भी मन सबसे बड़ा ठग है उद्धव दास जी कहते हैं कि सचेत होकर हरि का स्मरण करो। डडा से डरकर चलना ही समझदारी है।

ढढा ढालो को नही, बिना भज्या भगवान।
उरमै सोच विचारो प्राणी, चली जाय सब जान।
चली जाय सब खलक पलक मे, ज्यूं बादल की छाया।
धन जोवन अंजरी को पांणी, अरू सपनै की माया।
आतर हुय हरि सिवरो, मन मे छाडो झूठ ढढा।
उद्धव सास भरोसा नाही, ढील न करीयै ढ़ढा।।१४।।

ढढा– अन्य कोई उपाय नहीं है हरि के भजन बिना। हृदय मे सोच विचार कर देखो। ''म्हां देखंता देव दाणु सुरनर खीणा, अनेक अनेक चलते दीठे, कलि का माणस कौन विचारू।'' सम्पूर्ण संसार चला जा रहा है। क्षण क्षण आयु घटती जा रही है। जैसे बादल की छाया कब चली जाये। यह धन यौवन अंजलि को पानी है और स्वप्न की माया है। आतुरता–शीघ्रता से हरि

का स्मरण करो, मन से झूठ कपट का व्यवहार त्याग दीजिये। उद्धव कहते हैं कि एक श्वांस का भी भरोसा नहीं है न जाने आये या नहीं आये। इसलिये ढील नहीं करनी चाहिये। रटन ध्यान लगाये रहो।

णणा रिण संन बंध सुं, मात पिता सुतनार।
सत्रु मित्र पसु पंखिले, जीव का सगा न कोई।
जीव का सगा न कोई, करम जेवड़ी मांह खेघ्या।
भुक्ते सब लोई उधव, तूं नहीं कांहु कांहु का।
तेरा कोउ न होणा, सांसो सोग मोह नहीं करणा।
उद्धव कहै जो विणती, कृष्ण कृष्ण कहो णणा।।१५।।

णणा–पूर्व जन्म का कर्जा ऋण के सम्बन्ध से माता, पिता, सुत, नारी, शत्रु, मित्र, पशु, पक्षी आदि से सम्बन्ध जुड़ता है। या तो कर्जा देना होता है तो सेवा करके उतार देते हैं या फिर कर्जा वापिस वसूलना हेाता तो सेवा करवा लेते हैं यही संसरति–गच्छतीति संसार है। इस जीव का सच्चा साथी कोई नहीं है यह निपट अकेला है। कर्म रूपी रस्सी में बंधा हुआ चल रहा है न जाने आगे कौन सा कर्मफल सुख दु:ख आने वाला है। उद्धव कहते हैं कि सभी कोई यही कर्मफल सुख दुखरूप में भोगते है। हे प्राणी! तू किसी का नहीं है। तेरा भी कोई नहीं है तेरा कोई नहीं होगा, इसलिये दु:ख में शोक मोह नहीं करना। उद्धव जी विनती करते हुए कहते हैं कि हे कृष्ण हे कृष्ण कहते हुए रणकार लगाते रहो।

तता तातै लोह ज्यूं, ऐ दम जाए ऐ मोल।
नरधम सब मैइ कहै, बिना भजन मत खोल।
बिना भजन मत खोल, बोहर ओसर नहीं आवै।
भरथ खंड भुंय लोक, भक्त को खेत कहावै।
जन तप महर विद्य लोक, सुरनर तन चाह अता।
उद्धव दुरलभ पाइयै, विस्न सिंवर ले तता।।१६।।

तता–तातै गर्म लोह की तरह होना होगा। ठण्डा लोहा एकदम लुहार के पास पहुँच जाता है तब लोहा लंग लुहारू लुहार उसे गर्म करके अनेकानेक औजार बना देता है तब उसका मोल बढ जाता है वही दशा मानव की भी होती

है मानव सतगरु लुहार के पास चला जाता है तो उसकी कीमत बढ जाती है जन्म से तो सभी अनघड़ अनपढ ही होते हैं, किन्तु गुरु उसे तपा तपा करके सोना बना देते हैं वह भी अलंकार जो सौन्दर्य को बढावा देता है। बिना भजन के भेद अपना भेद नहीं खोले प्रगट करे। यह मानव तन ही सुअवसर प्राप्त है इसे व्यर्थ में नहीं खोना यह भारत खण्ड संसार का श्रेष्ठ देश है। यहां पर भक्ति रूपी खेती की जाती है किन्तु सुरनर देवता भी इसी भारत देश में जन्म लेकर आना चाहते हैं यहां से भक्ति रूपी खेती का अंकुर फुटेगा। उद्धव कहते हैं कि इस दुर्लभ देश को प्राप्त करके विष्णु का स्मरण कर ले रे तता।

थथा मन थिरता करो, ध्यान धणी को धारो।
सुंदर वदन कंवल दल लोचन, घन सांम सरूप विचारो।
घन सांम सरूप विचारो, उरमै, श्रवण कीरतन सिमरण।
चरण सेवा अरू अरचन बंदन, दास सखा आतम।
आतम अर्पण नवधा करकै, ज्युं कटै जीव की अविद्या।
सास उसास सिवर हरि उधो। थिर मन करे थथा।।१७।।

थथा–मन की स्थिरता करो और धणी स्वामी परमेश्वर का ध्यान करो वह हरि सुन्दर वदन, कंमल दल लोचन, घनश्याम स्वरूप है उसी का ध्यान चिन्तन करो। उन्ही का स्मरण कीर्तन करो। चरण सेवा और अर्चना वन्दना, दास भाव, सखाभाव, आत्मभाव से भक्ति भाव रखो। अपनी ही आत्मा, अर्पण, समर्पण, नवधा भक्ति करके अपने जीव की अविद्या अज्ञानता मिटा दो उद्धव कहते है कि श्वांसो श्वांस हरि का स्मरण करो, मन को ध्यान योग द्वारा एकाग्र करो।

ददा देही कारमी, गरब करो मत कोय।
सैवल केसे फूल है, देखण के दिन दोय।
देखण के दिन दोय छबीला, जिसा काच का सीसा।
यो तन मोती ओस का, तम क्युं न भजो जगदीसा।
उद्धव दैही राछ विडाणौ, बडे. भाग से लदा।
सुकरत सिंवरण करले प्राणी। देर न करीयै ददा।।१८।।

ददा–यह देह कार्य करने हेतु प्राप्त हुई है इसे पाकर के गर्व न करो यह देह सैवल–संभल के फूल की तरह है जो केवल दो दिन देखने के लिये ही है ज्यादा दिन के लिये टिकाऊ नहीं है। यह सुन्दर शरीर जैसा कांच का शीशा है उसी तरह ही चमक दमक है। यह शरीर ओस की बूंद जैसा ही है थोड़ी सी हवा और धूप से उड़ जायेगा। आप इस काया के अभिमान में पड़े हो भगवान् को क्यों नहीं भजते? उद्धव कहते हैं कि यह देह राछ–साधन विडाणो चला जायेगा। क्योकि यह पराया है। पंच तत्व रचित यह अधम शरीर है किन्तु बड़े भाग्य से यह प्राप्त हुआ है। हे प्राणी! सुकर्म तथा स्मरण कर ले। इस कार्य मे देर न करे ददा।

धधा धंधा हाथ सुं, मुख सिंवरो हरि नाम।
हृदै सांची प्रीत कर, ग्रही साध का काम।
ग्रही साध का काम, दासा तन फल भारी।
सेवा सतगुरु संत की, रीझै आप मुरारी।
जिन आपा मेट्या हरि भज्या, सुकरत का फल लधा।
अनन भाव सुं भजीये, उधो धीरज धर उर धंधा।।१९।।

धधा–हाथ से धंधा कार्य करो, मुख से हरि का स्मरण करो। हृदय में सच्ची प्रीत करे, यही गृहस्थी और साधु का कार्य है। समर्पण भाव से भक्ति भाव करने से उत्तम फल की प्राप्ति होती है। सतगुरु और संत की सेवा करे। इससे आप मुरारी विष्णु भगवान् प्रसन्न होते हैं। जिन्होंने अपना मन मिटा दिया और हरि का भजन किया, उसे ही सुकर्म का मधुर फल मिला है। अनन्य भाव से अब मेरा और कोई सहारा नहीं है इस भाव से हरि को भजिये। उद्धव कहते हैं धैर्य धारण करे और अपने कर्तव्य कर्म में लगे रहे। निष्काम कर्मयोग करके जीवन में सुखशांति प्राप्त करे।

ननना नारायण भजो, नहचल मन कुं राख।
मन परतीत न उपजै, सुनो परत न साख।
सुनो परत न साख, अज्यामेल पापी रहेता।
लियो नारायण नाम, एक पुत्र के हेता।
जम कुं मार बचायो, हरिजन ऐसा हर का सरना।

ऊधो दास बिड़द सुन हर को, नारायन भजना।।२०।।

ननना–नारायण का भजन करो, मन को निश्चल शांत रखो मन की प्रतीत नहीं है मन की प्रतीति की साख सुनो। एक अजामिल पापी रहता था उसने अपने पुत्र को बुलाने के लिये नारायण नाम का उच्चारण किया था, उसी हरि नाम के प्रभाव से यम के दूतो को हरि के पार्षदों ने मार भगाया था। ऐसे हरि की शरण ग्रहण करे ऊदो जी कहते हैं कि महिमा सुनकर नारायण का ही भजन करे।

पपा पाप न कीजियै, न्यारा रहीयौ नित।
जो करे सो भरे, सुत मात पिता नहीं मित।
सुत मात पिता नहीं मित, जीव को जद जम पकड़ चलावै।
नरक कुण्ड मे बोह दिन भुगतै, चौरासी दुख पावै।
अपणै पीड़ सोइ पराई, युं डर खोजो अपा।
उधोदास दया नित पालो, पाप न करीये पपा।।२१।।

पपा–पाप न कीजिये। सदा ही पाप से दूर रहे। जो करेगा सोई भरेगा इसमें कोई भी सुत, मात, पिता, मित्र आदि सहयोगी नहीं हो सकते जीव को जब यम पकड़कर चलायेगे। नरक कुण्ड में डाल देगे। वहां बहुत समय तक दु:ख भुक्तेगा। उसके बाद चौरासी लाख जीव योनियों में दु:ख पायेगा। जैसे अपने को पीड़ा दुखदायी है उसी प्रकार दूसरों को भी दु:खदायी हो जाती है। आत्मन प्रतिकुलानि परेषां न समाचरेत। ऊधोदास जी कहते हैं कि नित्य दया का पालन करे। पाप न करीये पपा।

फफा फाटा ना मिलै, मन मोती अरू कांच।
सजन दुरजन क्यूं भया, जीव रहा सुराचर।
जीव रहया सुराचर, झूठे लालच लागी।
अपणा पितम त्याग, आंन सुं लज्ञा अभागी।
नह कपटी रो हरि मित सु, उद्धव चाहत नफा।
कपटी सुं नर नां मिलै, तो हरि क्युं मिल है फफा।।२२।।

फफा एक बार जो फट गया फिर दुबारा नहीं मिलेगा जैसे मन मोती और काँच। रहिमन धागा प्रेम का मत तोड़ो छिटकाय टूटे सो जुड़े नही, जुड़े तो

गांठ पड़ जाय। कुछ लोग सज्जन होते है और कुछ लोग दुर्जन हो जाते हैं ऐसा क्यों है ? जीव कपट दुराचार में लिप्त हो जाता है वही सज्जन पुरुष सुआचार में जीवन जीता है। अपने पिता को छोड़कर अन्य दुराचारी की आज्ञा का पालन करता है। निष्कपटी से हरि,मित्र से उद्धव कहते हैं इनसे लाभ चाहता है। कपटी नर से नहीं मिलेगा। तो वह हरि से अवश्य ही भेट करेगा।

बबा बोह जुग भटकीया, घट चौरासी देह।
नर नार इण तन दीयो, हरि को समझ सनेहा।
हरि को समझ सनेहा, प्रभु क्रिया करी भारी।
नरतन चाहै देव सोई, तम दियो मुरारी द्वार।
मुक्त द्वार आया उधवा, मतलो मारग लंबा।
सुख सागर विसराम करो, विसन भजोरे बबा।।२३।।

बबा–जगत् में बहुत भटका है चौरासी लाख जीव योनियों को प्राप्त किया है। नर नारी का यह शरीर प्राप्त हुआ है। यह हरि की कृपा स्नेह है। प्रभु ने भारी कार्य किया है। इस नर तन को देवता भी चाहते हैं आपको हरि ने मुक्ति का द्वार दिया है। यह शरीर मुक्ति का द्वार आया है। इससे चूकना नहीं है यदि चूक गये तो फिर चौरासी का लंबा रास्ता लेना पड़ेगा। इस सुख सागर संसार में विश्राम करो और विष्णु का भजन करो रे बबा।

भभा भव अटवी फिरै, ऊंच नीच अवतार।
क्रम तंत बंध आतमा, सुख दुख भोग अपार।
सुख दुख भोग अपार, चौरासी भरम भुलाना।
त्रिजग जूंण अनंत फिरत, जीवन ही विकाणा।
उद्धव सुरनर नाग मै, लाभ कहुं नहीं लाभा।
भजन बिना छुटै नही, भव अटवी रे भभा।।२४।।

भभा–भव संसार में यह जीव भटकता फिरता है कभी उच्च तथा कभी निम्न योनि में जन्म लेता है कर्म तत्त्व में यह बंधी हुई आत्मा अपार सुख दुख को भोगती है चौरासी योनियो में भ्रमित होकर अपने आप को भूल जाता है तिर्यग योनि में भटकता हुआ अपने आप को पराधीन कर देता है बेच डालता है उद्धव

कहते है कि सुरनर, नाग आदि में कुछ भी लाभ प्राप्त नहीं हुआ। बिना हरि के भजन इन चौरासी लाख योनियों से छुटेगा नहीं भव अटवी में भटकता रहेगा।

ममा माया मद मै, भूल गयो संसार।
अन्न धन संपत साहवी, मात पिता सुत नार दुलैनी।
मात पिता सुत नार दुलैनी, हय गह मिदर माल।
इन्द्रिको सुख चाह कै, विसरयो दीन दयाल।
असन बसन रंग मै राता, जोड़ी पुंजी जमा।
उद्धव जीव जमारो हारयो, माया मद मे मंमा।।२५।।

ममा–माया मद में भूल गया। वास्तविकता का पता नहीं चल पाया। यह संसार और इसकी माया अन्न, धन, संपत्ति, साह, माता–पिता, सुत, दुल्हनी, हाथी, घोड़ा, घर, मन्दिर, माल इत्यादि मोह माया मे रम गया।इन्द्रियों के सुख को चाहता रहा और दीन दयालु कृपालु भगवान को भूल गया। घर बार वस्त्र आदि में रंग गया। पुँजी धन–दौलत को एकत्रत किया उद्धव कहतें हैं कि यह जीवन हार गया। माया मोह मद मे मया।

याया आया जगत मे, जाया जसबै कोय।
राजा रंक रू पातसाहा, मरण भेद नहीं होई।
मरण भेद न कर जंबर दल, बूढ़ा बालक तरणा।
सुर असुर नर नाग किन्नर, जक्ष दिन आये सब मरणा।
नहचल नांव नारायण जी को, चंचल हरि की माया।
उद्धव दास जायगो सब ही, जो जीव जग मे आया।।२६।।

याया–यह जीव जगत में आया है। जहाँ जिसका जैसा कर्म है वही जन्म लिया है। राजा, रंक, पातसाह, इनमें मरने का कोई भेद नहीं है सभी बराबर है। यम के दूत आयेंगे बूढ़ा, बालक, जवान किसी को नहीं छोड़ेगा। सुर, असुर, नर, नाग, किन्नर, यक्ष इत्यादि उनका काल समय आने पर सभी का मरना निश्चित है इनमें निश्चल नाम तो एक नारायण का ही है। यह हरि की माया चंचला है किसी को स्थिर नहीं रहने देती। उद्धवदास जी कहते है कि सभी जायेगे जो जगत् में आया है।

ररा राम पुकार ले, रैण दिवस इकतार।
आठ पोहर की फिरादे मै, कैदेक सुने पुकार।
कदेक सुने पुकार, सांम सुन मुख हुय झांखै।
जाय दालद सब दूर, हर आपणो कर राखै।
उद्धव तन मन अरप कै, रोपो पांव खपाम।
मिनख मजुरी देत है, क्युं राखै राम ररा।।२७।।

ररा–राम नाम की पुकार दिन रात एकाग्रता से करें। आठ पहर की पुकार में कभी न कभी तो अवश्य ही सुनेगा। श्याम के सन्मुख होकर देखे। ऐसा साक्षात्कार हो जाने से सभी दु:ख दूर हो जायेगा। हरि अपना करके रखेगा रक्षा करेगा। उद्धव कहते है कि तन मन अर्पण करके अपने पर जमा दी स्थिरता लाओ ? मनुष्य भी कार्य की मजुरी देता है वह राम आप की मेहनताना क्यों रखेगा ?

लला लालच लागो प्राणी, यो देस वदेसा जाय।
जो कुछ लिख्यो ललाट मे, सोई मिलसी आय।
सोई मिलसी आय, उदम करो बहु भांता।
राई घटैन तिल बधै, जो कुछ लिख्यो विधाता।
निसदिन सिवरो सायब जी कु, सांम सिहाय मै भला।
उद्धव उदम सहज करै, लालच तज रे लला।।२८।।

लला हे लला ! तुम लालच में लग गया है धन कमाने के लालच में देश विदेशों में जाता है जो कुछ भी ललाट–भाग्य में लिखा है वही आकर मिल जायेगा। बहुत प्रकार से उद्यम–परिश्रम करो तो भाग्य खुलेगा। जो कुछ किस्मत में होगा वही मिलेगा न तो उसमे से एक राई घटेगा और नहीं एक तिल बढेगा। निसदिन साहब जी का स्मरण करो वही श्याम आपको फल देने में सहायक होगा। उद्धव कहते हैं कि उद्यम सहज रूप में करें, किन्तु अति लालच लोभ को छोड़ दे रे लला।

ववा बारी आपणी, नैड़ी आवै नित।

दीया सेत सनेसड़ा, सौ क्यु सोवै निचंत।
सो क्युं सोवै निचत, सूल चालणै का करणा।
मित सुत मायन बाप, एक सायब का सरणा।
आया हंकारा हरि को उधो, पलभर खड़ा न रहबा।
बारी आई आपणी, विस्नु भजो रे ववा।।२९।।

ववा अब जाने की बारी अपनी आ चुकी है। ''**मरण दिनों दिन आवै। घट पालटियों काय न चेत्यो। आयो बुग बधावो**'' काले बाल थे किन्तु अब सफेद बुगले जैसे हो गये हैं **दिसण लागा रूखडा नेड़ो आयो गांव।** अब सफेद बाल संदेशा लेकर आ गये हैं चलने की तैयारी रखो कब यहां से बुलावा आ जाये। यहां से चलने का समान एकत्र कर लो माता, पिता, सुत, मित्र कोई भी इस जीव का संगाति नहीं है। एक साहब की शरण ग्रहन ही उपाय है हरि के यहाँ से हंकारो संदेशा आ चुका है। उद्धव कहते है कि अब एक पल भी रह नहीं सकते। अपनी बारी आ गयी है विष्णु का भजन करो रे ववा।

ससा सारे जगत मे, सब मुतलब के यार।
स्वारथ मिटै जु आपणौ, कोई न करे पीयार।
कोई न करे पीयार, मात पिता कुं देखो।
थकै हाथ रू पांव, बात नहीं पूछै एको।
उद्धव मेलो हाट को, औ जुग जांण असा।
साम बिना को संगी नांही, सायब भज रे ससा।।३०।।

ससा सारे जगत् में स्वार्थ के लिये अपने है। अपना स्वार्थ मिट जायेगा तब कोई भी प्यार नहीं करता है सभी मतलब के यार है अपने ही माता, पिता को देखो उनके हाथ पांव थक चुके हैं अब कुछ कार्य करने में समर्थ नहीं है तो कोई नहीं पूछता। उद्धव कहते हैं कि यह संसार तो हाट का मेला है इसको ऐसा ही समझो यह मेला बिखर जायेगा। सभी अपने अपने स्थान को चले जायेंगे। हरि श्याम के बिना यहां कोई अपना संगी साथी नहीं है इसलिये श्याम साहब को भजो रे ससा।

शशा खरा कोल किरतार सु, कीया गरभ कै मांह।

आठ पहर चौषट घड़ी, तम कुं विसरू नांह।
तम कुं विसरू नांह। ग्रभ की संकट मेटो।
जनम तै गयो बिसार, माया मोह लपेटो।
मात पिता मोह बाल पणै में, तरण त्रिया मन रखा।
षषा–वृध भयो चिंता भई ऊधो, जीव खरो हरामी खखा।।३१।।

करतार से पका कवल गर्भवास में किया था कि आठ प्रहर चौसट घड़ी आपको मैं भुलूंगा नहीं। हे देव! इस ग्रभ का संकट मिटा दो जन्म होते ही वह प्रतिज्ञा की हुई भूल गया क्योंकि यहाँ मोह माया के वशीभूत हो गया बाल्यावस्था में माता–पिता से मोह रखा। तरुण अवस्था में तिरिया से मोहित हो गया। वृद्ध हो गया तो अब भी चिंता सताने लगी यह जीव पका हरामी है।

शसा सारा कौ नही, मै पड़यौ मोह के फंद।
काम किरोध लोभ मोह सुं, हृदा हुय गया अंधा।
हृदा हुय गया अंधा, सतगुरु ज्ञान कछु नहीं सुझै।
तन मन अरपुं पांव पड़कै, मै अंध अज्ञानी बूझै।
ज्ञान अंजन सिलाका देकै, हृदै नैन करो अछा।
उधोदास कह कर जोड़े, करो समाखा शशा।।३२।।

शशा–सहारा कोई नहीं है मैं मोह माया के फंदे मे आ चुका हूँ काम, क्रोध, लोभ, मोह से हिरदै अंधा हो गया है। अब कुछ भी दिखाई नहीं देता है। हे गुरुदेव! मैं आपको तन, मन, धन सभी कुछ आपके पांव पकड़ के अर्पण करता हूँ। मैं अंध अज्ञानी हूँ आपसे पूछता हूँ मुझे सतपंथ बतलाये। ज्ञान रूपी अंजन की सिलाका से आंखों में अंजन डालकर मेरे नयन अच्छा कर दो ताकि सूझने लग जाये। ऊधोदास हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रहे हैं मेरी समस्या का समाधान करो शशा।

हहा हाहा खात हूं, सांस सांस स सौवार।
पग पग खुनी पत हुं, रोम रोम गुनहगार।
रोम रोम गुनहगार, अदल सुं जीवन छूटै।
त्राह त्राह प्रभु सरण, फदल कीया फंद तूटै।

पतत उधारण बिड़द विचारो, जब जीव का निरबाहा।
उधोदास कहे कर जोड़े हाहा करे कहूं हहा।।३३।।

हहा–श्वासों का आना और जाना बार–बार हाहा ही लगा रहता है श्वास नहीं आया तो हा के साथ मृत्यु है – **''ऐति सास फुरंतै सारू''** हर कदम कदम पर कहीं न कहीं किसी की हत्या कर रहा हूँ मेरा रोम रोम गुनहगार है। अदल जब काल समय आयेगा तब यह जीवन छूट जायेगा। त्राहि–त्राहि रक्षा करो, रक्षा करो । हे प्रभु मैं आप की शरण हूँ। फदल–धर्म करने से फंद जन्म मरण का फांसी कटेगी। हे प्रभु! आप तो पतितों को उद्धारने वाले है अपनी महिमा का विचार करो तभी इस जीव का निर्वाह गति हो सकेगी। ऊधोदास जी हाथ जोड़कर कहते हैं कि मैं लंबी लंबी आह भर रहा हूँ और हहा कहता हूँ।

त्रत्रा त्रिक्ष्या लीलाट मे, विध काट रैन अंक।
एक उदर मै उपना, एक राजा एक रंक।
एक राजा एक रंक, कमाई भुक्ते सारी।
उद्धव करै जो आतमा, हरजी पूरै सारी।
एक झरोखे छत्र सिंघासण, तरणी हय गय भला।
एक रोगी अरूपेट ही दूभर, लीखीया लाभै लला।।३४।।

त्रत्रा–ललाट में तीन रेखाऐं प्रकृति ने विध ने खींच दी है उसे कोई काट नहीं सकता। **''भाग परापति कर्मा रेखा''** देखिये एक ही उदर से जन्म लेने वाले दोनों भाइयों की गति न्यारी–न्यारी है एक तो राजा बन जाता है और एक रंक बन जाता है। अपनी कमाई भाग्य को ही सभी भोगते हैं। उद्धव कहते हैं कि जो आत्म तत्व के विचार से करते हैं हरि जी उसके कार्य सभी पूरे करते हैं मानसिक कल्पना पूरी होना असंभव है। कर्मफल का चमत्कार देखो। एक तो महल के झरोखे में बैठा हुआ है सिर पर छत्र चंवर ढुलाये जा रहे है। उनके पास हाथी, घोड़े, गाय और तरणी आदि सभी कुछ ठाटबाट है **''अर्थू गर्थू साहण थाटू''** दूसरा रोगी है पेट भरना ही दुर्भर है। ललाट मे लिखा हुआ ही प्राप्त होता है।

क्षक्ष्या ख्याल खालक तणां, नर नहीं जांणै कोई।
पल ब्रह्मांड परलै करै, पल मे पैदा जोई।

पल मे पैदा जोई, कोट ब्रह्मांड बणावै।
सुरनर मुनिजन नाग, पार कोई नहीं पावै।
भाजण घड़ण समर्थ प्रभु, सांस सांस कर रख्या।
ऊदोदास विस्नकै सरणै, जीवकु कबहु नक्ष्या।।३५।।

क्षक्ष्या–क्षय करने वाले, उत्पति करने एवं पालन पोषण करने वाले खालक विष्णु की ही ख्याल–सार संभाल है। इस रहस्य को नर नहीं जानता है। एक पल में ब्रह्माण्ड को प्रलय कर देते हैं तथा एक ही क्षण में वापिस उत्पत्ति भी कर देते हैं। एक ही पल में कोटि–कोटि ब्रह्माण्डों की रचना भी कर देते हैं। इस रहस्य को भगवान् की महिमा को सुर नर, मुनि जन, नाग आदि कोई पार नहीं पा सकतें। जो उत्पति, स्थिति और संघार कर्ता प्रभु श्वांस श्वांस में हमारी रक्षा करते हैं हमें ऊर्जा जीवनी शक्ति श्वांस के साथ देकर जीवन देते हैं ''मनसा सास विवाणी'' ऊदो दास जी कहते हैं कि जिसने विष्णु की शरण ग्रहण कर ली है वह जीव कभी नष्ट नहीं होगा। यह जीवन ज्योति महाज्योति सूर्य मे विलीन हो जायेगी। ''बांकी म्हारी एका जोति''।

ककै सुं मै कहया कुंडलीया, क्षक्षीयै लग सब भाख्या।
मन मुरख कारणै, पिंडत कुं नहीं दाख्या।
पिंडत कुं नहीं दाख्या संतो, साधु किरपा कीजौ।
ऊदोदास कहे कर जोड़ै, अब अपणो कर लीजो।
जंभ गुरु आचार उर मे, संत सब सिर खैसु।
क्षक्षीयै लग सब भया सपूरण, कहया कुंडलीया ककैसु।।३६।।

ककै से कुण्डलिया छन्द प्रारम्भ किया। अन्त में क्षक्षा कहकर पूर्ण किया यह मन मुरख होने के कारण साधारण जन के लिये यह कुण्डलियां छन्द कहे हैं जो पहले से ही पंडित है उनको समझाने की आवश्यकता नहीं है। साधु सज्जन पुरुष मेरे पर कृपा बनाये रखे। ऊदो जी हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि अब आप मेरे को अपना ही बना लीजिये। गुरु जाम्भोजी द्वारा बताये हुए नियम आचार संहिता मेरे दिल और दिमाग में है सभी संत मेरे लिये शिरोमणि है उनकी आज्ञा स्वीकार्य है। अथ क से लेकर क्ष तक सभी अक्षर पूर्ण हुए मैंने कुण्डलिया कही है।

इति श्री बारखड़ी संवत १८८४ सावण कृष्ण पक्ष तीज।

अखर पैतीसा उपर, कवित्त सैतीस विचार।

उद्धव वरस चौरासीयो, कहीय संवत अठार।।३७।।

* * *

सवईया प्रभु वंदना

करणा को अंग लिख्यते, सवइयां इकतिसां।

मनोहर छन्द

माया है अपार तोहि पार नहीं पावै कोय।
सुरनर नाग परै, तहां भगवान है।
देव दानुं नाग नाथे, तांहि तै त्रिलोकी नाथ।
तिहुं लोक मांहि एक, फिरै तेरी आन है।

पूरन ब्रह्म तुंही, पूर रहै श्रब काम।
कमी हुन काहु प्रभु, किरि को निधान है।
कह तुहूं दिन रैन, दया करो कंवल नैन।
उद्धव कुं मुसकल, तुहारे आसान है।

हे प्रभु! आप की माया का पार नहीं पाया जा सकता। सुरनर नाग से परे जहां सभी सीमित हो जाते हैं वही भगवान है। **''तांह पररै अवर छतीसु, पहला अन्त न पारू''** हे देव! आप ही ने देव दानव, नाग नाथे है इसलिये तो आपको त्रिलोकी नाथ कहते हैं तीनों लोकों में आपकी ही आन-मान मर्यादा प्रचारित है। आप ही पूर्ण ब्रह्म है आप ही सभी कार्य पूर्ण करते हैं, आप परिपूर्ण हो किसी प्रकार की कोई कमी नहीं है, आप ही की सता से सम्पूर्ण क्रियाऐ हो रही हैं। मैं दिन-रात आप से ही प्रार्थना कर रहा हूँ। हे कमल नयन प्रभु दया करो। उद्धव के लिये तो ये सभी कार्य कठिन है, किन्तु आपके लिये आसान है।

पील हु की टेर सुन, वैर नहीं लाऐ प्रभु।
चकर तै फंद काट, गज मोख कीयो है।
द्रोपदा की लाज काज, चीरहु बढाऐ बहु।
दुष्टही की सभा मांह, मान राख दीयो है
प्रहलाद की भीर परी, नरसिघ देह धारी।
अस्वर कुं मार प्रभु, संत सरण आयो है।
निराधार आधार प्रभु, सरणाई साधार है।
उद्धव विचार बिड़द, सरणे आय लीयो है।।२१।।

''गज को ग्राह ने घेरियो जल डूबत सुणी पुकार'' गज-हाथी को ग्राह मगरमच्छ ने पकड लिया और अन्दर खींचने लगा। तब गज ने पुकारा तब हरि ने गरुड़ छोड़ दिया और पैदल ही हाथी को बचाने के लिये दौड़ पड़े और अपने सुदर्शन चक्र से ग्राह को मार डाला। गज के बन्धन छुड़ा दिये गज को मुक्त कर दिया। कौरवों की सभा मे द्रोपदी का चीर हरण किया जा रहा था उस समय द्रोपदी की करुण पुकार सुनकर आपने द्रोपदी की लाज रखने के लिये चीर बढाया था। उन दुष्टों की सभा मे द्रोपदी के सम्मान की रक्षा की थी।

प्रहलाद पर कष्ट का पहाड़ टूट पड़ा तब आपने नृसिंह रूप धारण किया था असुर को मार डाला था संत आपकी शरण में आ गये थे निराधार के आधार सहारा हो प्रभु। आपकी शरणागति आधार है। हे प्रभु! उद्धव ने आपकी महिमा का विचार करके आपकी शरणाई ली है।

इंदव छंद सवइया तेइसा

पांव परोट जगाऊं प्रभु जी, सोय रहे सुख सेज महि तो।
पाती लीखाय संदेसो पठाउं, गए होत परदेश कहि तो।
सुनत नांय पुकार सुनाऊं, रूठे मंनाउ कर जोर सही तो।
जान अजान भए जग जीवन, हाहा अवनासी जोर नहीं तो।।३।।

हे प्रभु जी। आप कही धरती पर सुख सैज पर सो रहे हैं तो पावं दबाकर सेवा करके जगाऊं। आप कही परदेश चले गये हैं तो पत्र लिख कर संदेश भेज दूं। मेरी आप पुकार नहीं सुनते है कही मेरे से रूठ तों नहीं गये है? यदि रूठ गये तो आपको अपनी ताकत लगाकर मनाऊ। हे जग जीवन! जान अनजान में कहीं भूल हो गयी है तो मेरी कोई जोर जबरदस्ती नहीं है मैं आपकी हां में हां मिलाऊँ।

कवित छपै

जोर नहीं जगदीस राज रै, जा सिर उपरै।
अण हुणी पल मांह कर, स किरता तुम करै।
तुमन ही का कैहा, ते हाथ सब तेरै आवै।
सुर असुर नर नाग, नाथ कर नाच नचावै।
तुम समरथ महाराज हो, देखो दया निहार कै।
कह उधो प्रभु तारीयै, अपणो बिड़द विचार कै।।४।।

जगदीश्वर पर किसी की जोर जबरदस्ती नहीं है। वह सभी के सिर उपर है उनसे बड़ा कोई नहीं है। अनहोनी भी होनी हो जाये यदि कर्ता चाहे तो **'कृष्ण चरित विन काचै करवै रहयो न रहसी पाणी'** हे कर्ता! तुमने ही किया है और तुम्हारा किया हुआ सब तुम्हारे ही हाथ में आयेगा। सुर, नर, नाग, असुर सभी को नाथ वश में करके नाच आप ही नचाते हैं **''उनथ नाथ**

पोह का धुर पहुंचायो उनथ नाथन अनु निवावन।'' सभी के नाथ डालकर नाच नचाते हैं। आप तो समर्थ महाराज हो राजाओ के भी राजा हो। आप दया से देखिये। ऊधो कहते हैं हे प्रभु! संसार सागर से पार उतार दीजिये। अपनी महिमा बड़पन विचार करके मुझे संसार सागर से पार उतार दीजिये।

तार लीयो प्रहलाद, जल गिर अग्न मंझारा।
तार लीयो ऐ गजराज, कछु नहि लागी वारा।
तारे झिंवर व्याघ गीध, बैकुण्ठ सिधाऐ गिनका।
अज्यामेल काहां लग, कहुं सुनाऐ।
प्रभु तेरे नांव सुं, जल तारे पाखान।
उद्धव केती बात है, तम समर्थ्य भगवान।।५।।

हे देव! आपने प्रहलाद को संसार सागर से पार उतार दिया। उनके साथ पांच करोड़ साथी भी पार उतर गये। प्रहलाद को आपने अग्नि, जल, पहाड़ से बचाया था। आपने गजराज को बचा लिया उसकी मुक्ति कर दी कुछ भी देर नहीं लगी। आपने ही झींवर, व्याध, गीध, अजामिल आदि अधमो को भी पार उतार दिया है। आपके ही प्रभाव से गिनका भी स्वर्ग सिधार गयी है। कहां तक आपका बिड़द सुनाऐ। आपके ही नाम के प्रताप से प्रभु पत्थर जल पर तिर गये। उद्धव कहते हैं यह मेरी समस्या कितनी सी है आप सामर्थ्यवान भगवान् हो। आप मुझे भी पार उतार दीजिये।

अंछया कर ओउंकार, विस्नु तम विस्व रचाई।
लख चौरासी जून, खान तम च्यार बनाई।
ओपत खपत सब ही, भूल रती नहीं जावै।
सांस फिरंते सार, पोख सब कुं पहुंचावै।
रोम कोट ब्रह्मंड हौ, सबकी लेवण सार।
जन ऊधो कूं तारीयै, समर्थ सिरजन हार।।६।।

एको अहं बहु स्याम प्रजायेय, मै एक से अनेक प्रजा रूप में हो जाऊं **'ऐच्छत'** यह इच्छा की। एक ओंकार रूप से अनेक होने की इच्छा ही यह सृष्टि का खेल है। एकाकी न रमते। आद सबद अनाहद वाणी **''ओउम शब्द गुरु''** सर्व प्रथम निराकार ओंकार से साकार रूप में **''जल में विस्नु रूप**

उपन्नौ'' विष्णु रूप सृष्टि के पालन पोषण कर्ता के रूप मे सृजित हुऐ। **''म्हे अपनी काया आप संवारी''** स्वयं ही विष्णु रूप में आये। उसी ओंकार से साकार विष्णु तथा विष्णु से उत्पत्ति कर्ता ब्रह्मा प्रगट हुए और उसी शक्ति से संहार कर्ता शिव हुए। इन तीनों से आगे चौरासी लाख जीव योनियां उत्पन्न हुई है। उत्पन्न होने वाली विनाश शील सभी रचना युक्ति पूर्वक हुई इनमे कुछ भी कमी नहीं रही उस कर्ता की भूल कहीं नहीं है सभी यथा युक्त है एक श्वांस मे जीवन है श्वास से जो ग्रहण नहीं तो मृत्यु है। सभी का श्वांसो श्वास पालन करते हैं। जिनके रोम रोम में कोटि ब्रह्मांड है सबकी सार संभाल लेने वाले है जन ऊधो को हे प्रभु पार उतार दीजिये। आप सामर्थ्यवान सिरजण हार हो।

हों समर्थ के समर्थ, सब ईसन के ईसा।
निराधार आधार, भक्त बछल जगदीसा।
गर्व गंजन गोपाल, अनाथ के नाथ कहावै।
विध कु करौ जु कीट, कीट ब्रह्म पद पावै।
ऐसे समर्थ साम हो, सरणो मोकूं दीजियै।
जन ऊधो की विनती, अब अपनो ही कर लीजिये।।७।।

हे प्रभु! आप समर्थों के भी समर्थ हो। आप ईश्वर के भी ईश्वर हो आप निराधार के भी आधार हो। आप भक्तों के वत्सल जगदीश्वर हो आप गर्व अहंकार को मिटाने वाले गोपाल हो। आप अनाथों के नाथ कहे जाते हैं आप चाहे तो विधि ब्रह्मा जी को कीट बनादे और कीट को ब्रह्म पद दे दे, ऐसे समर्थ श्याम जी मुझे अपनी शरण में रख लीजिये।

अपनी गत गोपाल। आप ही जांनो आपै।
सुर नर मुनिजन नाग, कही नहीं जावै कांपै।
परम भक्त पारखद, तांहि अस्वर कर डारै।
बधक हते बहु जीव, सुरग सदेह सिधारै।
जो चाहै सोई करै, अंछा अपनी आचरै।
जन ऊधो की वीनती, राज रजा सिर उपरै।।८।।

हे गोपाल! आपकी गति आप ही जानते हैं न जाने कब क्या करेंगे। आपकी गति चरित को सुर, नर, नाग, मुनिजन आदि किसी से भी कही नहीं जा सकती आपके परम भक्त पार्षद थे उनको आपने असुर बना दिया हिरणाक्ष

और हिरण्याकशिपु ''बधिक–शिकारी बहुत जीवों का हत्यारा उन्हें भी सदेह स्वर्ग भेज दिया। आप स्वतंत्र हो जो चाहो सो करो अपनी इच्छानुसार आचरण करो जन ऊधो की विनती है कि राजा की रजा–कृपा हमारे सिरपर है धणी का धणी कौन है ?

फिरीद कुवै कै मांह, सींस ऊंधो लटकायो।
पिंजर सूक भऐ क्लीन, तब दीदार दिखायो।
मोर धुज तन अरध, आरा ले सीस चढायो।
जब तुठे जगदीस, कृपा करि पांय लगायो।
कसोटी कस कस लीये, ताय ताय कीये लीला।
वनिता ए तारे उधा, तो कुं जांनु दीन दयाल।।९।।

उस कलाकार लीलापति की विचित्र लीला देखिये। फरीद भक्त को कुंऐं में उल्टा लटकां दिया। जब शरीर सुखकर पिंजर हो गया तब दीदार–कृपाभाव दिखाया और उसे पुन: यथावत किया। मोरध्वज राजा के पुत्र का शरीर आरा से कटवाया और फिर प्रसन्न होकर मोरध्वज के पुत्र को जीवित भी किया और अपने चरणों में स्थान दिया। भक्तों को कसौटी पर कस कस कर के तथा तपा करके लीला की। वनिता को संसार से पार उतार दी ऊधो कहते हैं कि मेरे को पार उतार दोगे तो मैं आपको दीन दयाल मानूंगा।

राज तज्यो तुम कांज, राज तब धू कूं दीनो।
तज्यो बभीछन सांम, जद सांम लंका को कीनो।
दियो जीमायो बीस, बीज बिन खेत निपायो।
दाता के दाता रहो, दीना दै सब कोय।
बिन दीना दै उधौ कुं, प्रभु दाता जांनु तोय।।१०।।

हे प्रभु! आपके लिए धू ने राज तज दिया तब आपने ध्रुव को राज दे दिया। विभीषण ने अपने भाई को छोड़कर आपके पास आ गया तब आपने विभिषण को लंका का राज दे दिया। द्रोपदी ने आपके निमित चीर का दान किया था तब आपने भी द्रोपदा के चीर को बढ़ा दिया। वापिस दे दिया। धनै भक्त ने खेत मे बोने के बीज को आपके अर्पण कर के संतो को भोजन करा दिया तो आपने बीना बीज ही धनै की खेती उपजा दी। जो आपको देता है उसके लिये तो आप दाता हो सभी कुछ न कुछ दीया है तो आपने भी वापिस

अनंत गुणा करके दे दिया है। ऊधो कहते हैं कि बिना देने वाला यह ऊधो है इसे कुछ दोगे तो मैं आपको सच्चा निस्वार्थ दाता मानूंगा।

सवईया मनहर छन्द

मेरे तो सिन्यास नांह, व्रत उपवास नांह।
कर्म जोग जांनु नांह, नहीं दैन दत कूं।
खट् कर्म जांनु नांह , सम दम जग नांह।
क्रीया की कसोटी नांह, न जानुं जैन मत कुं।
आंन को उपास नांह, सरोधा अभ्यास नांह।
पुरष को ज्ञान नांह, न जानु पांच तत कुं।
कहत उद्धव ऐम, कछु वन जानुं नेम।
का हुं कूं न जानु मै तो, जानु कंवला पत कुं।।११।।

मेरी कोई साधना नहीं है। न ही संन्यास है व्रत उपवास भी नहीं है कर्म योग भी जानता नहीं हूं। न हीं मेरे पास कुछ देने के लिये है। षट्कर्म भी नहीं जानता। सम, दम, यम नियम नहीं जानता। कर्म की कसौटी पर खरा नहीं हूँ। मैं नहीं जैन मत को जानता हूं। आन देवता का उपासक मैं नहीं हूँ। सरोधा का अभ्यास भी नहीं है पुरुष–प्रकृति का सांख्य ज्ञान भी नहीं है। पांच तत्व को भी नहीं जानता हूँ उद्धव कहते हैं। कि मैं कुछ नियम–धर्म भी नहीं जानता हूँ। मैं तो किसी को भी नहीं जानता केवल कमला (लक्ष्मी) पति भगवान् विष्णु को ही जानता हूं।

जोग जिग जप नांह, इन्द्रियन तप नांह।
प्राणायाम होत नांह, मन बार बाट है।
कांम, क्रोध लोभ मोह, राग दोष सांसो धोह।
विकारन सुं भरयौ बोह, दुंदन को ठाट है।
क्रियाउ करतूत हीन, विषै मांह लवलीन।
नीचन मै नीच मन, निपट निराट है।
उद्धव तुहीरी सरण, पतित पावन करण।
तम विन नांह प्रभु, तिरबै को घाट है।१२।।

कवि प्रार्थना करते हुए कहता है कि मेरे पास योग, यज्ञ, जप, इन्द्रियों का तप, प्राणायाम आदि कुछ भी नहीं है। मन बाह्य विषयों में भटकता है। आगे कहते हैं कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष, संशय, अहंकार इत्यादि विकारो से मैं भरा हुआ हूँ। द्वन्द्वों का ठाट बाट है मेरे पास शुद्ध क्रियाऐं, कर्म नहीं है। मैं विषय विकारों में लवलीन हूँ मेरा मन नीचों में महानीच, निपट पूर्ण रूपेण भक्ति भाव से खाली है। उद्धव कहते हैं कि हे देव! अब तो आपकी ही शरण है। आप ही मुझे जैसे पतीत को पावन कीजिये। हे प्रभु! आपके बिना संसार सागर पार उतरने का घाट और कही कोई नहीं है।

कोउ पढयो विद्या वेद, कोउ करै अर्थे भेद।
कोउ कह गीत छंद, को बउ चार है।
कोउ साधै जंत्र मंत्र, कोउ साधै विध मंत्र।
कोउ साधै घड़ी पुल, सरोदा विचार है।
कोउ किवी चातरी सुं, वांणी विसतार है।
कहत उद्धव ऐम, कछुवन जांणु नेम।
मेरै तो ऐक प्रभु नाम को आधार है।।१३।।

कोई तो वेद विद्या पढा है, कोई अर्थ-धन एकत्रत करते हैं। कोई गीत छन्द गाता है। कोई आचार विचार से रहते है कोई यंत्र-मंत्र की साधना करते हैं कोई विध-संविधान नियम के मंत्रो की साधना करते हैं कोई ज्योतिष विद्या द्वारा समय बताते हैं। कोई सरोदा लेकर बतलाते है, कोई तपस्या एवं त्याग करते हैं, कोई गायन नृत्य करते है, कोई अपनी बुद्धि की चातुर्य से कार्य करते है, कोई व्यास वाणी का विस्तार करते हैं। ऊदो जी कहते है कि मैं कुछ भी नियम-धर्म नहीं जानता मेरे तो प्रभु के नाम का ही आधार-आश्रय है।

इन्दव छन्द

प्रहलाद की लाज के काज प्रभु, वैकुण्ठ तजै ततकाल पधारें।
खंभ फाड़े नै सिंघ बणे, अर दुष्ट तणो नख ओदर बिदारे।
महातेज भुजा तिहुं लोक धूजा, प्रहलाद लज्या जन जान उबारे।
उधोदास कह भगवां तन मौ, भौ दूर करण निज संत उधारे।।१४।।

प्रहलाद की रक्षा के लिये प्रभु बैकुण्ठ छोड़कर तुरंत आ गये। खंभ

फाड़कर सिंघ बन गये और दुष्ट को मारने के लिये नख से उदर फाड़ दिया। महातेजस्वी विशाल भुजा को देखकर तीनों लोक कांपने लग गये। प्रहलाद की लज्जा रखने के लिये अपने प्रिय भक्त को उबारने के लिये विष्णु हरि स्वयं अवतार लेकर इस धरा पर आये। ऊदो जी कहते हैं कि हे भगवन्! मेरा भय मिटाने के लिये आप संत रूप मे आकर मेरा उद्धार करो।

गज ग्रह गहयो तब थाक रहयौ, रं रंकार कहयौ ललकार करी।
यहु टेर सुनी प्रभु गरूड़ चडै, ततकाल तजे सुख सेजश्री।
खगपत थके जद पांव पयादे, चक्र सुं फंद जु काट परी।
ऊधोदास कह करूणा निध, सांमी संत उधारण सांम हरि।।१५।।

गज को ग्राह ने जल भीतर पकड़ लिया और अपने को छुड़ाने में असमर्थ हो गया। तब एक हरि के नाम की रं रंकार की ललकार करी। यही टेर सुनकर प्रभु गरूड़ सवारी और तत्काल सुख शयन को प्रभु ने त्याग दिया।

खगपति–गरुड जब थक गये तो गरुड़ की सवारी भी छोड़ दी और पैदल ही दौड़ पड़े। सुदर्शन चक्र से श्री हरि ने मकर के फंद को काट दिया था। ऊदोदास जी कहते हैं कि हे करुणा निधि स्वामी! संतो का उद्धार करने वाले स्वयं श्याम हरि ही है।

सोरठा

साम सकल सिरताज, तम सहु जो कौ नहीं करूणामई
माहारा जै पतत, ऊधारण तम धणी।।१६।।

श्याम हरि सभी के सिरताज–शिरोमणी है। उनके जैसा और कौन है करूणामय हो। एक मात्र पतितों के सहारा है। उद्धार करने वाले आप ही मालिक है।

मनहर छन्द

जरा व्याध तीर तान, प्रभु कै लगायौ बांन।
तांही कूं विमान श्रृग, सैद ही पवायो है।
मकी मारण कूं धारै, थण विषहु लगाई।
तांह बैकुण्ठ पठाई, अभै पद पायो है।
सिसपाल कीयो दोस, तांकू प्रभु मेल्यो मोख।

साजोज मुक्त माहा, जायकै समायो है।
निज अपराधी सूं तो, प्रम गता लाधी।
उद्धव विडद सुण प्रभु, सरण तो है आयो है।।१७।।

जरा–व्याध ने तीर तान के चलाया और हरि–कृष्ण के पैरों में जा लगा उसी को भी हरि ने स्वर्ग से विमान बुलाया और सशरीर उस पर बैठा स्वर्ग भेज दिया। मकी–पूतना राक्षसी कृष्ण को मारने के लिये स्तनों में विष लगाकर आयी थी उसे भी हरि ने अपने वैकुण्ठ धाम में भेज दी। शिशुपाल ने भी कृष्ण को एक सौ एक गाली दी वह दोषी था, उसे भी हरि ने मोक्ष पद दे दिया। सायुज्य मुक्ति में हरि समाहित हो गया। हरि के अपराधी तो परम् गति को प्राप्त होते हैं। उद्धव कहते हैं कि हे मेरे प्रभु मेरी प्रार्थना भी सुनो। मैं आपकी शरण में आया हूँ।

सतयुग त्रेतायुग, दवापर कल जुग।
जुग जुग नाव लीयो, सांई प्रभु तारयौ है।
ऊंच नीच पेखे नांह, पाप पुन देखे नांह।
जोइ जोइ स आयो, तांही कूं उधारयो हो।
व्याध गीध अजामिल, गिनका सी सारी केती।
निरभै निसंक कर, जम भय टारयो है।
बिड़द भरोसा राख, सरण तोह आयो ताक।
उद्धव की लाज राख, प्रभु म्हे बिसारयौ है।।१८।।

सत्ययुग त्रेता युग, द्वापर युग और कल युग इन चारों युगों में जिन्होंने भी आपका स्मरण किया उनको आपने संसार सागर से पार उतार दिया है। जो जैसा भी आया उनका उद्धार किया है। व्याध, गीध, अजामिल, गिनका, आदि जो भी पापी या पुण्यवान था उन्हे निर्भय निंशक करके उनके भय को मिटा दिया। आपकी इसी महानता पर भरोसा करके आपकी शरण में आया हूँ

उद्धव की लाज रखना मै आपकी शरणागत हूँ।
मै दीन के दीना नाथ, दीन को दयाल प्रभु।
करूणा निधान आप, दया मोपै कीजिये।
सुन हो कृपा के राम, कृपा अब कीजै जान।

सरण हूं तुम्हारी सांम, अपनो कर लीजियै।
कहत हूं करूणा सागर, करूणा मेरी सुन नागर।
आप बिना व्रिथा आव, धम धम छीजीयै।
उद्धव तुंहारो दास, करत हूं अरदास।
अंत्र पड़दो दूर कर, दरसण दीजियै।।१९।।

मेरे दीन के दीनानाथ, दीन पर दयालु प्रभु, करुणा निधान आप अब मुझे जानकर कृपा कीजिये मैं आपकी शरण आया हुआ जानकर अपना बना लीजिये। हे करुणासागर में विनती कर रहा हूँ अब आप अपना बना लीजिये। आपके बिना हमारा जीवन व्यर्थ है। यह जीवन चलते फिरते वैसे ही व्यतीत हो जायेगा। उद्धव तुम्हारा दास है और आपकी अरदास कर रहा है अन्दर का अज्ञान रूपी पड़दा दूर करके दर्शन दीजिये।

इदव-छन्द

भाव के तंदुल खावै मुठी भर, दास सुदामै कै दालद मारे।
हय गह चोरंग लिछमी दीनी , छिन मे कंचन महल संवारे।
असुरव भीछ सीस नवायो, लंका पति कर छतर धारै।
भाव के भूखे अनाथ के नाथ, उद्धव नाथ कुं लेहो उबारे।।२०।।

श्री कृष्ण अपने मित्र सुदामा के दिये हुए भाव के मुट्ठीभर चावल खाये थे आपने सुदामा के दालद का हरण कर लिया। उसे हाथी घोड़े, महल, लक्ष्मी, धन सभी कुछ दिया। एक क्षण में स्वर्ण महल बना कर दे दिये। असुर विभीषण ने आपको आकर शीश निवाया तो आपने उसे लंकापति बना दिया। हे अनाथ के नाथ आप भाव के भूखे हो इस उद्धव को उबार लीजिये।

सवईया

जगपत जगदीसा, सुनो एह अरज हमारी
निराधार आधार प्रभु, हम सरण तुहारी
सरण पडया की लाज, सोइ तक राखो स्यामी।
तुम हो दीन दयाल, प्रभु मेरे अंतर जामी।

बार बार ऐ बिनती, बोहत प्रसंसा सांम सुं।
अपराध छम्या प्रभु कीजिये, ऊधोदास गुलाम सुं।।२१।।

हे जगतपति जगदीश हमारी अर्ज सुनो जी। निराधार–निराश्रय के आश्रय प्रभु जी हम आपकी शरण में है। शरण में पड़े हुए की लज्जा आप ही रखो। आप दीन बन्धु दीनानाथ हो मेरे प्रभु अन्तर्यामी हो मेरी बारबार यह विनती है। श्याम की महिमा अनंत है। हे प्रभु ! मेरे से कोई अपराध हो गया हो तो आप क्षमा कर दीजिये मैं ऊधो आपका गुलाम हूँ।

तुमरी अंछा मांह प्रभु, निसतार हमारो।
पतत पावन भगवंत, सुन्यो हम नाम तुम्हारो।
आद अंत रूप मध, तरे केइ स अपारा।
गिनती करत अरू कहत, लह पतत अनंत।
जन ऊधो की बीनती, असरण सरण भगवंत ।।२२।।

हे प्रभु! आपकी इच्छा पर ही हमारा कल्याण संभव है। पतित पावन भगवंत आप नाम ऐसा ही दिव्य है ऐसा हमने सुना है। आपका पार नहीं पाया जा सकता। आप आदि में थे मध्य में है और अन्त में भी रहेंगे आपने अजामिल गिनका जैसे पतितों को भी पावन कर के पार उतार दिया ऊदो की विनती है कि मैं अन्य की अशरण हूँ आपकी शरण ग्रहण कर रहा हूँ आप भगवतं हो।

दुहा

जन ऊधो की वीनती, सुनीयो दीना नाथ।
बिड़द विचारा बाप जी, लज्या तुमारै हाथ।।२३।।

एक साधारण जन ऊदो की विनती दीना नाथ श्रवण कीजियेगा। हे बाप जी! मैं तो आपकी ही बिड़द–महिमा का गुणगान करता हूँ। अब मेरी लज्जा–जीवन आपके हाथ में है।

अनाथ नाथ असरण सरण, निराधार आधार।
ऊदोदास कूं तारीयै, अपणो बिड़द विचार।।२४।।

मैं अनाथ हूँ आप मेरे नाथ हो,मैं शरण हूं आप मेरे शरणागति हे मैं निर आधार हूँ आप में मेरे आधार हो। आप ऊदोदास को संसार सागर से पार उतार

दीजिये। अपनी महिमा–अपनी शक्ति पर विचार कीजिये।

मन बुध चित अहंकार, स्वा इन्द्रि आत्म प्राण।
उद्धव ए एब जड़ है, तम चेतन भगवान।।२५।।

मन, बुद्धि, चित, अहंकार, स्व इन्द्रियां, आत्मा, प्राण। उद्धव कहते हैं ये सभी जड़ है। इनमे समाया हुआ चेतन भगवान् है।

उद्धव पुदगल पाप को, नख सिख भरयौ विकार।
सरणा आया की लाज है, प्रभु पार उतार।।२६।।

उद्धव कहते हैं कि पुदगल–सम्पूर्ण पाप नख से लेकर सिर तक भरा हुआ विकार है। शरण में आये हुए की लज्जा भगवान् ही रखते हैं और पार उतार देते है।

करणी देख्या केसवा, कदे नहीं निसतार।
अपणो विड़द विचार हो, उद्धव तब ही पार।।२७।।

हे केशव! मैं अपनी करणी–कर्म को देखता हूं तो मेरा कभी निस्तार नहीं होगा आप ही यदि कृपा करो तो उद्धव पार हो सकता है।

पतत पावन ताह बिड़द है, मै पतता सिरताज।
जन ऊधो की बिनती बहौ बिड़द की लाज।।२८।।

हे देव! आप तो पतितो को पावन करते है यही आपकी बड़ाई महानता है और मैं पतितो का सिरताज हूं जन ऊधो की विनती है आप बिड़द की लज्जा रखे–मेरे सिर पर कृपा बनाये रखे।

मै दीनन मैं महादीन हूं, तु हो दीन दयाल।
जन ऊधो को तारीयै, सरणागत रछपाल।।२९।।

मैं दीनो–गरीबो मे महागरीब हूं। आप दीन दयाल हो। उद्धव को संसार सागर से पार उतार दीजिये।

हे सरणागत के रक्षक मै निराधार हूँ बाप जी, तम निरधार आधार।
असरण सरण करूणा सुणौ, पाउं तम दीदार।।३०।।

मैं निर आधार निराश्रय हूँ बाप जी। आप निराश्रय के आश्रय हो हे

बाप जी! असरण मैं आपकी शरण मे आया हूँ मेरी करूणा पुकार सुनो! मैं आपकी कृपा प्राप्त कर सकूं।

भव सागर की धार मे, बहया जात महाराज।
बांह पकड़ बठाइयों, तुमरो नांव जिहाज।।३१।।

हे महाराज! मै भवसागर की धार मे बहता जा रहा हूँ। आप मेरी बांह पकड़ कर रोक लीजिये। आपका नाम जहाज है।

नाम तुमारो नाथ जी, तुम किरपा उर आवै।
विन किरपा भरम्यौ फिरै, चौरासी दुख पावै।।३२।।

हे नाथ जी! आप का तारक पवित्र नाम आपकी कृपा हो तभी हृदय में आता है। जब तक आपकी कृपा नहीं होगी तब तक भ्रमित होकर फिरेगा। चौरासी लाख जीव योनि मे दु:ख पायेगा।

जन उधो की बीनती, सुणीयै श्री गोपाल।
अनंत भक्त साधु संगत, दीजै दीन दयाल।।३३।।

हे श्री गोपाल! एक साधारण जन ऊदो की विनती सुनिये आप अनंत भक्ति और साधु की संगति दीजिये।

कवित कुण्डलिया

प्रभु तेरे नाम को, महमा करे जन कोय।
हलका तो भारी भया, भाही हलका होय।
भारी हलका होय, पांणी पर तर गये पथर।
नामदेव लिख नाम, तुल्या नहीं तुलछी पतर।
माहजन माया तुलधरी, अपनी बहु कछु गाम की।
उद्धव प्रभुता अगम है, प्रभु तेरे नाम की।।३४।।

हे प्रभु ! तुम्हारे नाम की महिमा कोई गावे तो हलका भारी हो जाता है और भारी हलका हो जाता है। जल पर पत्थर हरि के नाम से तिर गये।भक्त नामदेव ने तुलछी के पत्र पर हरिनाम लिखकर तोला तो नहीं तोल सके तुलने में आया ही नहीं, दूसरी तरफ महाजन ने सम्पूर्ण अपनी माया और कुछ गांव की भी माया तुला पर रखी और तुलसी के हरि नाम लिखे पतो से हल्की ही रही।

राम नाम की बराबरी माया नहीं कर सकी। उद्धव कहते है कि हे प्रभु तेरे नाम की प्रभुता अगम्य है पार नहीं पाया जा सकता।

प्रभु तेरे नाम की, महमा अगम अपार
अज्यामेल गिनका तरे, बिना प्रीत भव पार।
बीना प्रीत भवपार, नांव को सुन्यो सहारो।
करणी कछु न होय, प्रभु सरणागत थारो।
बिड़द विचार सुध लीजियै, उद्धव दास गुलाम की।
दावण पकड़ी दीन हुय, प्रभु तेरे नाम की।३५।।

प्रभु जी तुम्हारे नाम की महिमा अगम्य-अपार है। बिना प्रेम ही अजामिल, गनिका भव सागर से पार हो गये। केवल आपके नाम का ही सहारा लिया था! हे प्रभु! मेरे से कुछ भी शुभकर्म होने वाले नहीं है केवल आपका ही सहारा मैने ग्रहण कर लिया है अपनी महिमा विचार करके मेरी सुधी लीजिये। मैं आपका दास गुलाम हूं मैने तो अब सहारा रूपी रस्सी दीन दयाल की ही पकड़ी है।

कवित

मात पिता कुं लाज पुत्र की, भूखे नंगे प्रतपाल करे है।
भाव निवाज परे भरता कूं, लंघन देख जु विपति हरै ।
जाहां भूप करै प्रजापत पाल, गुरुदेव जु सिख अग्यान हरै है।
न कुं लाज परीजन उधो, सांम कु लाज को क्यु न परै है।।३६।।

माता-पिता पुत्र के पालन-पोषण की देखभाल करता है। भूखा प्यासा जैसा भी हो पत्नी की विपत्ति हरण करने का उपाय करता है। राजा प्रजा का पालन पोषण रक्षा करता है। गुरुदेव शिष्य का अज्ञान हरण करता है उसी प्रकार से ऊधो जी कहते हैं कि हरि नारायण अपने भक्तों की लज्जा क्यों नहीं रखेंगे? समर्थ हरि विपत्ति अवश्य ही हरेगें।

माता के ग्रभ आय कहो, क्या काम कमावै।
अन्ध पिग खुजलू जताय, हर रिजक मिलावै।
इजगर अरू अहलाद, विजग राखि सैन।
कांही बांही कुं दै भखै, अहार विन जीवै नांही

कंण कीड़ी मंण कुंजरा, चांच प्रवाणै चूंण।
दैण हार समरथ है ऊधो मेटण हारो कूंण।।३७।।

बालक माता के ग्रभ में आकर वहां कौन सी कमाई करता है। कोई अन्धा, पागला, खुजली वाला इन सभी को हरि रिजक उनके कर्मानुसार देता है। अजगर, सर्प, बिच्छु, इत्यादि को भी भगवान् कही न कही किसी प्रकार से आहार देते हैं बिना आहार तो जीवन धारण नहीं कर सकते। चिट्टी को एक कण व हाथी को एकमण वह जैसी जिसकी आवश्यकता है, उसी अनुसार देता है। जो जिसको मिलना है उतना मिलेगा ही उसे मिटाने वाला कोई नहीं हैं।

कहां मन मनोरथ करै, कहां चिंता उर आंणै।
करण हार किरतार, तोह न क्यूं न पिछाणै।
बैठ चोहज तक मांह, कहां नर बोझ उठावै।
खेवण हारा नाव, सोई हर पार लंघावै।
ऊधो आपो मेटीयै, भजीयै सिरजैण हार।
करण हार किरतार है क्यूं आंजैसे करे गिवार।।३८।।

मानसिक कल्पना–स्वप्न को लेता है और क्यो ही चिंता करता है वह करने वाला कर्ता है उसे ही क्यों नहीं पहचानता है। अपने घर में बैठकर क्यों दूसरे का बोझ उठाता है दूसरे से द्वेष करता है। हमारे जीवन की नैया पार करने वाला कोई और है वही जीवन की नैया को पार उतार देगा। उद्धव कहते हैं कि आप–अहंकार, मैं और मेरापन छोड़िये उसी सिरजनहार का भजन करें। करने वाला किरतार है क्यो चिंता शिकायत दु:खी होकर करता है यदि इस बात को नहीं समझता है तो मूर्खता ही है।

रचने हार कुं चिन्हले, कहा जु रचना कीनी।
अजैबै दिये दोय नैन, जोत देखन कुं दिनी।
तांह अग्र ले घ्रांण, सास सोभा मुख पावै।
मुख सु स वैद उचार, सरवण सुं सबद सुनावै।
पांव चलण कर काम कुं, अंत करण विचार।
कुन द्यो असो साज दीयौ, सिवरो उस कतार कुं।।३९।।

रचना रचने वाले हरि का स्मरण कर ले। कैसी विचित्र रचना की है